नई शिक्षा नीति के अनुसार

2024

VVP (Regd.)

TM

विश्वविद्यालय प्रकाशन (रजि.)
ग्वालियर
द्वारा प्रकाशित

20 प्रश्न

(परीक्षोपयोगी महत्वपूर्ण मॉडल प्रश्नोत्तर)

राजनीति विज्ञान

VVP (Regd.)

भारत की विदेश नीति

(समूह 'अ') (प्रथम प्रश्न-पत्र)

बी. ए. तृतीय वर्ष

नया पाठ्यक्रम

भारत की विदेश नीति

इकाई–1. भारत की विदेश नीति में निरन्तरता और परिवर्तन–

(1) भारतीय विदेश नीति का ऐतिहासिक परिदृश्य
(2) भारतीय विदेश नीति के प्रमुख सिद्धान्त व निर्धारक तत्व
(3) विदेश नीति और राष्ट्रीय हित
(4) गुटनिरपेक्षता की नीति

(5) भारत की भू आर्थिक रणनीति
(6) भारत की पूर्व की ओर देखो नीति।

इकाई–2. भारत एक अग्रणी शक्ति के रूप में–

(1) भारत एक वैश्विक, आर्थिक और सैन्य शक्ति
(2) बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था और भारत
(3) भारत की विदेश नीति के नए मोर्चे बाहरी अन्तरिक्ष, ध्रुवीय क्षेत्र, जलवायु परिवर्तन
(4) भारत और हिन्द महासागर
(5) भारत की भू–राजनीति और भू–अर्थशास्त्र वन रोड वन बेल्ट मुद्दा
(6) इंडो–पैसिफिक का उदय और भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी।

इकाई–3. प्रमुख महाशक्तियाँ और भारत–

(1) संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ भारत के संबंध
(2) रूस के साथ भारत के संबंध
(3) भारत–चीन संबंध
(4) भारत–यूरोपीय संघ संबंध।

इकाई–4. भारत और अन्तर्राष्ट्रीय मंच–

(1) संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत की भूमिका
(2) संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार की मांग
(3) अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतंत्रीकरण हेतु भारत की मांग
(4) भारत व परमाणु सिद्धान्त : एनपीटी और सीटीबीटी
(5) पर्यावरण संरक्षण में भारत की भूमिका
(6) आतंकवाद की समस्या और भारत।

इकाई–5. भारत और दक्षिण एशियाई पड़ोसी राज्य–

(1) अफगानिस्तान (2) पाकिस्तान (3) बांग्लादेश (4) श्रीलंका (5) नेपाल
(6) भूटान (7) मालदीव।

अनुशंसित मूल्यांकन विधियाँ

अनुशंसित सतत् मूल्यांकन विधियाँ
(अधिकतम अंक : 100)
सतत् व्यापक मूल्यांकन (CCE) अंक : 30 विश्वविद्यालयीन परीक्षा (UE) अंक : 70

आंतरिक मूल्यांकनः सतत् व्यापक मूल्यांकन (CCE)	क्लास टेस्ट असाइनमेंट/प्रस्तुतिकरण (प्रजेंटेशन)	कुल अंकः 30
आंकलनः विश्वविद्यालयीन परीक्षा समयः 03.00 घंटे	अनुभाग (अ): अति लघुउत्तरीय प्रश्न अनुभाग (ब): चार लघु उत्तरीय प्रश्न अनुभाग (स): दो दीर्घ उत्तरीय प्रश्न	कुल अंक 70

राजनीति विज्ञान

(प्रथम प्रश्न-पत्र)

इकाई–1

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर

प्रश्न– 1. भारतीय विदेश नीति के ऐतिहासिक परिदृश्य का संक्षिप्त विवेचन कीजिए।
अथवा
भारत की विदेश नीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन कीजिये।
अथवा
'भारतीय विदेश नीति' के ऐतिहासिक परिदृश्य पर एक लेख लिखिए।

उत्तर– **भारतीय विदेश नीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि या परिदृश्य**– वर्तमान भारतीय विदेश नीति ऐतिहासिक कालक्रम के विकास का परिणाम है। भारत ने अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता से पूर्व ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के बारे में कुछ मूलभूत सिद्धान्तों का निर्माण किया था, जो स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय विदेश नीति के सिद्धान्तों के आधार बने। ऐसे कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्न प्रकार हैं–

(1) संघर्ष की राजनीति के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सहयोग की राजनीति का अवलम्बन।
(2) साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का विरोध।
(3) राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलनों का समर्थन।
(4) जात–पाँत के भेदभाव का विरोध।
(5) विश्व–शांति तथा विश्व–बंधुत्व को प्रोत्साहन।

कांग्रेस कार्यकारिणी ने नवम्बर, 1921 में इस आशय का महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया कि, 'भारत की सरकार भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती तथा भारत को एक आत्मनिर्भर राज्य होने के नाते पड़ौसी राज्यों से कोई खतरा नहीं है। भारत के किसी भी राज्य के प्रति कोई गलत इरादे नहीं हैं। भारत अपने पड़ौसी राज्यों के साथ ऐसे कोई व्यापारिक संबंध नहीं बनाना चाहता, जो उस राज्य की जनता के हितों के विपरीत हो। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत विदेश नीति का इस प्रकार संचालन करेगा, जिससे इस्लाम द्वारा मुसलमानों पर लगे दायित्वों का सम्मान हो।' निःसंदेह यह एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव था। डॉ. डी.एन. मलिक के अनुसार 'इस प्रस्ताव में स्वतंत्र भारत की विदेश नीति में गुटनिरपेक्षता के तत्व विद्यमान हैं।' इस प्रकार यह स्पष्ट हो गया कि गुटनिरपेक्षता की नीति की जड़ें वास्तविकता में कांग्रेस के इसी प्रस्ताव में मौजूद थीं।

कांग्रेस सन् 1921 में विदेश नीति सम्बन्धी अपने सिद्धान्तों के निर्माण के बाद से निरन्तर वैदेशिक विषयों पर विचार करती रही एवं अपने स्वतंत्र दृष्टिकोण का निर्माण एवं प्रसार करती रही। कांग्रेस ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि भारत की अंग्रेज सरकार भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती और अपने साम्राज्यवादी लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए वह जनमत विरोधी नीतियाँ अपना रही है। उदाहरणार्थ जहाँ भारतीय जनता अपने पड़ौसी राज्यों (अफगानिस्तान, चीन इत्यादि) से मित्रता चाहती है, वहीं भारत की अंग्रेज सरकार ने उन पर अत्याचारी संधियाँ थोपी हैं।

फरवरी, 1927 को विश्व के पद–दलित राष्ट्रों का एक विशाल सम्मेलन बेल्जियम के ब्रूसेल्स नगर में आयोजित हुआ, जिसमें 175 दलों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में भारत को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ। भारत का प्रतिनिधित्व करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने भारत की स्वतत्रता की माँग अत्यन्त प्रभावपूर्ण रूप में इस अन्तर्राष्ट्रीय मंच के माध्यम से रखी। साथ ही सभी पद–दलित राष्ट्रों में पारस्परिक सहायता एवं सहयोग का भी विकास किया।

उपरोक्त सम्मेलन के पश्चात् नेहरू एवं कांग्रेस को राष्ट्रवादी विदेश नीति की एक नई दिशा मिली। भारत ने निश्चय किया कि उसका लक्ष्य अपनी स्वंतत्रता तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसे विश्व के अधिक से अधिक देशों के पं. नेहरू के संचालन में सन् 1928 में साथ सम्पर्क एव सहयोग बनाना है। इसी उद्देश्य से कांग्रेस ने अपने संगठन में एक अलग 'विदेश विभाग' स्थापित किया। कांग्रेस ने अपने वार्षिक अधिवेशनों में विदेशी दलों को भी आमंत्रित करना आरंभ किया। कांग्रेस ने मिस्र, सीरिया, इराक, फिलीस्तीन आदि के स्वतंत्रता संग्राम का समर्थन करते हुए उन्हें भारतीय जनता के पूर्ण समर्थन का आश्वासन भी दिया।

फासीवाद और नाजीवाद के सिद्धान्त, गतिविधियाँ एवं आचरण पद्धति से विश्व–शांति के लिए खतरा हो रहा था। नेहरू ने इसका इंग्लैण्ड व फ्रांस की उन नीतियों का भी घोर विरोध किया, जिनके द्वारा वे अधिनायकतंत्री ताकतों को तात्कालिक रूप से संतुष्ट कर तात्कालिक शांति बनाए रखने में लगे हुए थे।

1 सितम्बर, 1939 को पोलैण्ड पर जर्मनी के आक्रमण से द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू हुआ। भारत के तत्कालीन वायसरॉय लार्ड लिनलिथगो ने भारत के नेताओं से पूछे बिना ही इंग्लैण्ड के साथ भारत को भी युद्ध में झोंक दिया। इस बारे में स्वयं अंग्रेज लेखक वेल्फोर्ड ने कहा कि, 'भारतीय स्वयं तो पराधीन थे और हम (अंग्रेज) उन्हें दूसरों को स्वतंत्र करने के लिए लड़ने को कह रहे थे, यह कितनी बड़ी विडम्बना है।'

भारतीय कांग्रेस ने भारत को 'आत्म–निर्णय के अधिकार' से वंचित रखने और अपनी स्वतंत्रता के लिए 7 व 8 अगस्त, 1942 को 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का प्रस्ताव पारित किया जिसके परिणामस्वरूप भारत 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय नेताओं में स्वतंत्रता से पूर्व ही राजनीतिक परिपक्वता आ गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भी भारतीय नेतृत्व प्रजातंत्र समर्थक, साम्राज्यवाद विरोधी, निरंकुशता तथा अधिनायक विरोधी, राष्ट्रीय समानता समर्थक, राष्ट्रीय स्वंतत्रता पोषक, युद्ध विरोधी, विश्व–शांति पोषक, गुटबाजी विरोधी दृष्टिकोण अपनाने का समर्थक रहा है। भारत को जवाहरलाल नेहरू के रूप में वैदेशिक क्षेत्र में ऐसा नेतृत्व प्राप्त हुआ जो इस क्षेत्र में लम्बे समय से सक्रिय रूप से कार्य कर रहे थे।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय विदेश नीति का निर्धारण और उदय आकस्मिक नहीं है बल्कि इसका ऐतिहासिक आधार है। इसमें भारतीय परम्पराओं और स्वाधीनता संग्राम के दौरान उच्च आदर्शों का बड़ा योगदान है। **पामर और पर्किन्स** के शब्दों में, 'भारत की विदेश नीति की जड़ें विगत कई शताब्दियों में विकसित सभ्यताओं के मूल में छिपी हुई हैं और उसमें चिन्तन–शैलियों, ब्रिटिश नीतियों की विरासत, स्वाधीनता आन्दोलन और वैदेशिक मामलों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहुँच, गाँधीवादी दर्शन के प्रभाव, अहिंसा, साध्य और साधनों के महत्व के गाँधीवादी सिद्धान्तों आदि का प्रभावशाली योगदान रहा है।'

प्रश्न–2. भारतीय विदेश नीति के आधारभूत सिद्धान्तों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

भारतीय विदेश नीति के प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना कीजिये।

अथवा

सैद्धान्तिक दृष्टि से भारत की विदेश नीति क्या है? क्या भारत की विदेश नीति में सिद्धान्त और व्यवहार में आपके मतानुसार अन्तर है?

अथवा

'भारतीय विदेश नीति का मूल सिद्धान्त गुट निरपेक्षता है अन्य सिद्धान्त उसके पूरक हैं।' इस कथन को स्पष्ट कीजिये।

अथवा

'भारत की विदेश नीति का मुख्य सिद्धान्त विश्व–शान्ति है।' विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत की विदेश नीति के आधारभूत सिद्धान्त क्या हैं?

उत्तर– किसी भी देश की विदेश नीति सिद्धान्तहीन नहीं होती है। इसके कुछ मूलभूत या आधारभूत सिद्धान्त होते हैं जिन पर उस देश की समग्र विदेश नीति टिकी होती है। इन्हें उस देश की विदेश नीति के प्रमुख लक्षण या विशेषतायें भी कहा जा सकता है। इन सिद्धान्तों का निर्माण काफी सोच–समझकर लम्बे विचार–विमर्श या अनुभवों के बाद किया जाता है और आमतौर पर राष्ट्र इनकी घोषणा कर देता है ताकि उसके वैदेशिक व्यवहार को तर्क–संगत सिद्ध किया जा सके तथा दूसरे सम्बद्ध राष्ट्र उसे समझ सकें। ये वे सिद्धान्त या नियम होते हैं जिन पर उक्त राज्य की वर्तमान या भावी सरकारें चलने का प्रयास करती हैं। इन सिद्धान्तों में सामान्य परिस्थितियों में शीघ्र परिवर्तन नहीं किया जाता, लम्बे काल के बाद जब कि अन्तर्राष्ट्रीय या राष्ट्रीय परिस्थितियों में बहुत अधिक परिवर्तन हो जाता है, तभी सिद्धान्त बदलते हैं। उदाहरण के लिये, संयुक्त राज्य अमेरिका ने प्रथम विश्व युद्ध काल को छोड़कर लम्बे काल तक लगभग 200 वर्ष तक प्राथक्यवादी नीति का अनुगमन किया और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही उसका पूर्ण रूप से परित्याग किया और जिसकी झलक या प्रभाव तो आज भी अमेरिका (स.रा.) की विदेश नीति पर दिखाई देता है। उपरोक्त प्रकार के कुछ भारत के भी कुछ विदेश नीति के आधारभूत या मूल सिद्धान्त हैं जो निम्नलिखित हैं–

(1) विश्व–शान्ति में आस्था– भारत की विदेश नीति का मूल सिद्धान्त विश्व–शान्ति में उसकी दृढ़ आस्था है। भारत प्रारम्भ से ही विश्व–शान्ति का महान समर्थक रहा है। यह महावीर स्वामी, गौतम बुद्ध और गाँधी का देश है। भारत चाहता है, कि विश्व में शांति बनी रहे जिससे गरीब और पिछड़े हुये राष्ट्रों की भी तरक्की हो और दुनियाँ के विभिन्न राष्ट्रों को अपना धन युद्ध–सामग्री पर खर्च न करके मानवता के कल्याण के लिये खर्च करना चाहिये।

भारत स्वयं एक विकासशील देश है, उसके विकास के लिये शान्ति आवश्यक है। भारत विश्व में कहीं भी युद्ध को पसन्द नहीं करता। वह विश्व युद्ध का विरोधी है। भारत चाहता है कि वह स्वयं तथा दुनियाँ के सभी राष्ट्र अपने विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करें, अपने विवादों को हल करने के लिये सशस्त्र संघर्ष का सहारा न लें। भारत युद्ध का विरोधी तथा विश्व–शान्ति का महान पक्षधर है।

भारत की समग्र विदेश नीति को हम विश्व–शान्ति का महान् दस्तावेज कह सकते हैं। इसके अन्य सिद्धान्त तो साधन हैं, वास्तव में विश्व–शान्ति विदेश नीति का साध्य और लक्ष्य है। भारत का घोषित सिद्धान्त है कि वह दुनियाँ में कहीं भी सशस्त्र संघर्ष को पसन्द नहीं करेगा और इस बात का स्वयं भी प्रयत्न करेगा और इस प्रकार के प्रयत्नों में सहयोग देगा जिससे विश्व–शान्ति कायम हो और रह सके। वह स्वयं कभी अपनी ओर से युद्ध और आक्रमण नहीं करेगा और थोपे जाने पर ही बचाव के लिये युद्ध करेगा वह विश्व–शान्ति बनाये रखने में हर उपाय का समर्थन करेगा इस आशय के लिये वह स्थापित हर अन्तर्राष्ट्रीय

संगठन का तन–मन–धन से सहयोग करेगा। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू विश्व–शान्ति के महान पक्षधर थे।

विदेश नीति के आधारभूत या मूल सिद्धान्त
1. विश्व–शान्ति में आस्था
2. साम्राज्यवाद का विरोध
3. संयुक्त–राष्ट्र संघ का समर्थन
4. निःशस्त्रीकरण
5. रंगभेद नीति का विरोध
6. पंचशील
7. गुट निरपेक्षता

दूसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री तो विश्व–शान्ति के लिये बलिदान हो गये। तीसरी प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने भी शिमला समझौते द्वारा अपने आपको विश्व–शान्ति का महान् पक्षधर सिद्ध किया। अन्य सभी प्रधानमंत्री और भारत सरकार भी विश्व–शान्ति में गहन आस्था रखते हैं। जब विश्व–शान्ति भंग होने का खतरा उत्पन्न होता है तो इस नीति के अनुरूप भारत का चिन्तित होना स्वाभाविक है और भारत विश्व–शान्ति बनाये रखने का हर–संभव प्रयास करता है। भारत ने कभी किसी युद्ध का समर्थन नहीं किया। इस प्रकार भारत ने सदैव इस सिद्धान्त के पालन पर जोर देकर विश्व–शान्ति में अपनी गहन आस्था सिद्ध की है और दुनियाँ में विश्व–शान्ति बनाये रखने के हर प्रयास में सहयोग किया है। इसीलिये भारत की विदेश नीति को भारत की विश्व–शान्ति की नीति कहना अतिशयोक्ति नहीं है।

(2) साम्राज्यवाद का विरोध– भारत स्वयं 150 वर्ष तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद का शिकार रहा है, इसलिये भारत की यह एक नीति है, कि भारत दुनियाँ में कहीं भी एक राज्य द्वारा दूसरे राज्यों को गुलाम बनाये रखने की साम्राज्यवादी नीति का विरोधी है। भारत सरकार की यह घोषित नीति है कि यदि दुनियाँ में किसी देश में विदेशी गुलामी से मुक्ति के लिये संघर्ष चल रहा होगा तो भारत उसका समर्थन करेगा तथा साम्राज्यवादी शक्तियों का खुलकर विरोध करेगा। इसी नीति के कारण भारत ने वियतनाम, कम्बोडिया और नामीबिया इत्यादि में संघर्षरत् राष्ट्र की हिमायत की तथा अफ्रीका के सभी राष्ट्रों के स्वतंत्रता आन्दोलन का भारत ने समर्थन किया है। भारत के मतानुसार साम्राज्यवाद आधुनिक युग की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण राजनीतिक बुराई है। साम्राज्यवाद आधुनिक युग में विभिन्न प्रकार का है। इसके दो नग्न रूप देखने को मिलते हैं–

(क) साम्राज्यवाद– इसमें साम्राज्यवादी राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को अपने आधीन बनाकर उस पर प्रत्यक्ष रूप से शासन एवं इसका विभिन्न आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक शोषण करता है। साम्राज्यवाद का दूसरा रूप उपनिवेशवाद है।

(ख) उपनिवेशवाद– इसमें एक राज्य दूसरे राज्य को जीतकर वहाँ के मूल निवासियों को खदेड़ कर मार डालता है या उन्हें पहाड़ या जंगलों में बसने के लिये विवश कर देता है और स्वयं वहाँ बस कर उस देश को अपना ही देश बना लेता है। कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य अमेरिका इसी प्रकार के उपनिवेश हैं। तीसरे प्रकार के उपनिवेशों में शासक जाति अल्पसंख्यक होते हुये भी वहाँ की बहुसंख्यक हीन प्रजाति की जनसंख्या पर अपनी जातीय रंग के आधार पर श्रेष्ठता का दावा कर शासन करता है। आजकल द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उपरोक्त सभी प्रकार के साम्राज्यवाद के विरुद्ध विश्व जनमत बन जाने से अब भूतपूर्व साम्राज्यवादियों ने साम्राज्यवाद का एक नया तरीका ढूंढ निकाला है इसमें वे उन देशों में जिन्हें वे अपना शिकार बनाते हैं प्रत्यक्षतः शासन तो नहीं करते परन्तु वहाँ वे अपनी कठपुतली सरकारों की स्थापना कर अपने राष्ट्रीय और व्यापारिक हितों की पूर्ति करते हैं। इसे नव साम्राज्यवाद या डॉलर साम्राज्यवाद कहते हैं। भारत इस प्रकार के किसी भी साम्राज्यवाद का

विरोधी है और यह भारत की स्पष्टतः घोषित नीति है क्योंकि 1946 में संविधान सभा में ही भारत ने पंडित जवाहर लाल नेहरू द्वारा इस नीति की घोषणा कर दी थी। इसके अनुसार भारत विश्व में हर क्षेत्र में साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्षरत् राष्ट्रों का समर्थन करेगा।

(3) संयुक्त–राष्ट्र संघ का समर्थन– विश्व–शांति के लिये स्थापित संस्था संयुक्त–राष्ट्र संघ का भारत प्रारम्भिक (1945 से) सदस्य है। वह संयुक्त–राष्ट्र संघ की तन–मन–धन से सहायता कर इसे सफल बनाने का हर–सम्भव प्रयास करने के लिये प्रस्तुत है। भारत अपने पहले विवाद कश्मीर विवाद को ईमानदारी से इसीलिये संयुक्त–राष्ट्र संघ में ले गया था। भारत के सैकड़ों कर्मचारी संयुक्त–राष्ट्र संघ की सेवा में हैं। भारत ने आज तक संयुक्त–राष्ट्र संघ के हर शान्ति स्थापना के कदम का समर्थन किया है। भारत ने कई बार संयुक्त–राष्ट्र संघ के प्रयोजन के लिये अपनी शान्ति सेना भेजी है। भारत संयुक्त–राष्ट्र संघ के सभी अंगों और अभिकरणों का सदस्य है। कोरिया युद्ध के बाद युद्धबन्दियों तथा गाजापट्टी में स्थाई शान्ति–स्थापना हेतु, कांगो, साईप्रस और अभी सोमालिया में भारतीय सेना की तत्सम्बन्धी सेवायें उल्लेखनीय हैं।

भारत ने अपने संविधान में ही संयुक्त–राष्ट्र संघ में गहन आस्था प्रकट की है और इसे तन–मन–धन से यथा–संभव हर प्रकार से सफल बनाने का संकल्प व्यक्त किया है। संयुक्त–राष्ट्र संघ में भारत का अटूट विश्वास है। इस सम्बन्ध में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एक बार कहा था कि ''हम संयुक्त–राष्ट्र संघ के बिना आधुनिक विश्व की कल्पना भी नहीं कर सकते।'' संक्षेप में राष्ट्र संघ का समर्थन करने में भारत ने जितना सहयोग दिया है उतना इस संगठन को बहुत कम देशों ने दिया है। भारत की सदैव इच्छा रही है कि दुनियाँ में विभिन्न राष्ट्रों के बीच जितने भी विवाद उत्पन्न हों वे संयुक्त–राष्ट्र संघ के माध्यम से ही सुलझाये जायें। भारत अपना पहला विवाद (कश्मीर) संबंधी संयुक्त–राष्ट्र संघ में ले गया था।

(4) निःशस्त्रीकरण– यह भी विश्व–शांति का पूरक सिद्धान्त है। विश्व–शांति के लिये यह आवश्यक है कि शस्त्रविहीन विश्व की स्थापना की जाये। भारत सदैव से इस शस्त्रविहीन विश्व यानी निःशस्त्रीकरण का पक्षधर है। भारत पूर्ण निःशस्त्रीकरण चाहता है। आजकल आणुविक हथियारों के विकास से विश्व–शान्ति को गम्भीर खतरा है। भारत चाहता है कि दुनियाँ के सभी अणुशक्ति सम्पन्न राष्ट्र अपने हथियारों को नष्ट कर दें और भविष्य में इन हथियारों के निर्माण न करने का संकल्प लें। यद्यपि भारत ने 1963 में खुले में आणविक परीक्षण निषेध–सन्धि पर हस्ताक्षर कर दिये परन्तु 1968 के परमाणु परीक्षण प्रतिबन्धन सन्धि पर भारत ने इसलिये हस्ताक्षर नहीं किये, क्योंकि यह विभेदकारी है। इसमें जिनके पास आणविक हथियार हैं उन्हें तो इस सन्धि द्वारा प्रतिबन्धित नहीं किया है लेकिन अन्य को आणविक विस्फोट से रोका गया है। अब भारत भी अणु शक्ति वाला देश बन गया है क्योंकि उसने 11 व 13 मई, 98 को अणु विस्फोट करके अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर दिया है।

भारत ने अपने प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से लेकर आज तक सदैव शस्त्र–रहित विश्व या हिंसा–रहित विश्व या निःशस्त्रीकरण का समर्थन किया है। आणविक शक्ति के विकास के बाद यह समस्या अत्यन्त गंभीर हो गई है। भारत इस गंभीरता से परिचित है और भारत ने सदैव इस दिशा में संयुक्त–राष्ट्र संघ या इसके बाहर किये गये प्रयासों का समर्थन किया है। विश्व–शान्ति के महान पक्षधर भारत की यह स्वतंत्रता के तत्काल बाद से आज तक घोषित नीति है, कि भारत हथियारों की ऐसी किसी प्रतिस्पर्धा का विरोधी है जिससे कि विश्व–शान्ति को गंभीर खतरा उत्पन्न हो जाये। वह अणुबम द्वारा हिरोशिमा और नागासाकी के नृशंस काण्ड को दुनियाँ की धरती पर इसकी संभावना को ही समाप्त कर देने

का पक्षधर है परन्तु वह किसी ऐसी नीति का समर्थन नहीं कर सकता जिसमें उसे ऐसी संधि में बांधा जाये जो वर्तमान आणविक हथियारधारी हैं, वे तो आणविक हथियारों को बनाये रखें परन्तु कोई नया राष्ट्र इस दौड़ में शामिल न हो। भारत पूर्णरूपेण निःशस्त्रीकरण और अमेरिका तथा रूस सहित सभी राष्ट्रों द्वारा अपने-अपने आणविक हथियारों के जखीरे को समुद्र में डुबो देने और भविष्य में किसी के द्वारा आणविक हथियार न बनाने तथा आणविक शक्ति के शान्तिपूर्ण मानवता के कल्याण में उपयोग का पक्षधर है।

(5) रंगभेद नीति का विरोध– भारत के महान नेता महात्मा गाँधी ने 19वीं शताब्दि के अन्त में ही दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद नीति के विरुद्ध एक संघर्ष शुरू किया था। हम उस नीति पर आज भी दृढ़ हैं। हम रंगभेद नीति का विरोध करते हैं तथा उस देश से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखना चाहते जो इंसान-इंसानों के बीच चमड़ी के रंग या जाति के आधार पर भेदभाव बरतता है। इसीलिये भारत के अंग्रेजों द्वारा शासित दक्षिण अफ्रीका से कोई सम्बन्ध नहीं थे। अब 1992-93 के बाद दक्षिण अफ्रीका ने भी रंगभेद नीति का परित्याग कर दिया है और वहाँ नेल्सन मण्डेला की गैर-गोरी सरकार बनी है, जिससे अब भारत के घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुये।

विश्व में प्रजातिवाद का नस्ल के आधार पर विभेद का विरोध भी इसी नीति के साथ जुड़ा हुआ है क्योंकि यह साम्राज्यवादी सिद्धान्त पर आधारित है जिसमें काली चमड़ी व आदिम प्रजातियों को गोरी जातियों का बोझ माना जाता है।

उपरोक्त सम्बन्ध में भारत की यह सुस्पष्ट घोषित नीति है कि भारत चमड़ी के रंग या नस्ल के आधार पर विश्व राजनीति में किसी भी प्रकार के सामाजिक भेदभाव का विरोधी है। इस सम्बन्ध में भारत की सुस्पष्ट घोषित नीति है कि रंगभेद नीति तथा प्रजाति भेद मानवता के विरुद्ध एक बहुत बड़ा अपराध है। उसका स्पष्ट मत है, कि विश्व समाज में यह बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिये कि अवसर के कारण एक रंग या नस्ल के लोग प्रगति कर जाने के कारण अपने आप को श्रेष्ठ और पिछड़ी हुई जातियों को या काली या पीत वर्ण के मानवों को ही गोरों पर बोझ का साम्राज्यवादी सिद्धान्त लागू करें। इसी आधार पर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस फासिस्टवाद और नाजीवाद को पसन्द नहीं करती थी, क्योंकि वह जर्मन आर्य जाति की श्रेष्ठता के सिद्धान्त में विश्वास करता था। भारत की अफ्रीकी नीति इसी सिद्धान्त पर निर्धारित हुई है और आधारित है। विश्व-स्तर पर भी जहाँ भी जिस देश ने इस नीति को अपने शासन या प्रशासन या वैदेशिक या स्थानीय नीति को आधार बनाया, भारत ने ऐसे देश का बहिष्कार करने की नीति अपनाई। भारत की दक्षिण अफ्रीका, रोडेशिया, अंगोला तथा नामीबिया सम्बन्धी नीति इसी सिद्धान्त पर आधारित रही थी।

(6) पंचशील– भारत की विदेश नीति का सिद्धान्त पंचशील का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त द्वारा भारत ने यह परिभाषित किया है, कि उसका पड़ौसी राष्ट्रों के प्रति क्या व्यवहार होना चाहिये? पंचशील में अच्छे पड़ौसी के प्रति व्यवहार को निर्धारित करने वाले महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का विवेचन किया गया है। इन्हें नैतिकता के 5 सिद्धान्त या पड़ौसी धर्म के पाँच सिद्धान्त या पंचशील कहा जाता है। भारत ने सर्वप्रथम इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन 1954 में चीन के प्रधानमंत्री चाऊ-एन-लाई की भारत यात्रा के समय किया था। उस समय चीन-तिब्बत की स्वायत्तता समाप्त कर रहा था तथा भारत में यह माँग चल रही थी कि भारत को तिब्बत के मामले में हस्तक्षेप करना चाहिये। नेहरू ने पंचशील का प्रतिपादन कर इसे चीन का आन्तरिक मामला बताया और भारत की नैतिकता के आधार पर इस प्रकार का हस्तक्षेप न करने की नीति प्रतिपादित की थी। इस नीति को पंचशील का सिद्धान्त कहते हैं। यह सिद्धान्त

सन् 1954 में चीन के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया गया, परन्तु हम देखते हैं कि चीन ने ही सन् 1962 में भारत पर आक्रमण करके इस सिद्धान्त की निर्मम हत्या कर दी।

भारत में नेहरू द्वारा प्रतिपादित पंचशील के पांच सूत्र निम्नलिखित हैं–

(1) सभी राष्ट्र एक-दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता और सम्प्रभुता का सम्मान करेंगे।
(2) कोई राज्य दूसरे राज्य पर आक्रमण नहीं करेगा और दूसरे देशों की राष्ट्रीय सीमाओं का अतिक्रमण नहीं करेगा।
(3) कोई भी राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के अन्दरूनी मामलों में जैसे आर्थिक, राजनीतिक, आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।
(4) प्रत्येक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों के साथ पारस्परिक समानता का व्यवहार करेगा अर्थात् सभी देश दूसरों के साथ समानता का व्यवहार करेंगे।
(5) सभी राष्ट्र शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्त में विश्वास करेंगे।

वास्तव में यह सिद्धान्त नेहरू ने चीन के साथ अपनी नीति को तर्क-संगत बनाने के लिये प्रयुक्त किये थे। चाऊ एन लाई ने भारत यात्रा के समय पंचशील पर हस्ताक्षर किये थे और वाडुंग सम्मेलन में इसे विस्तृत कर दसशील सिद्धान्त बनाया गया। चीन के हाथों ही इनकी हत्या हुई अतः इन्हें नेहरू की भावुकता की उपज कहा जाता है। प्रसिद्ध लेखक पी.डी. कौशिक ने भारत की विदेश नीति की पंचशील को भ्रांति कहकर इसकी आलोचना की है परन्तु चीन द्वारा धोखा देने से इन महान सिद्धान्तों का महत्व कम नहीं हो जाता। विल्सन के 14 सूत्र तथा 4 स्वतंत्रताओं के आधार पर राष्ट्र संघ का भावुक महल खड़ा हुआ था लेकिन 20 वर्ष में ही यह इमारत ध्वस्त हो गई परन्तु इससे विल्सन के आदर्शवाद का महत्व कम नहीं हो गया। वास्तव में चीन को समझने में हमने राजनयिक भूल की थी। यह भूल तिब्बत सम्बन्धी हमारी गलत नीतियों का परिणाम थी। तिब्बत की स्वायत्तता को चीन द्वारा हड़पा जाने पर हमारा चीन के प्रति तुष्टिकरण गलत था। इसके लिये पंचशील के आदर्शों को गलत ठहराना अनुचित है।

(7) गुट निरपेक्षता– गुट निरपेक्षता भारत की विदेश नीति का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन भारत के नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू ने शीत युद्ध प्रारम्भ होने पर उस समय किया जब आंग्ल-अमेरिकी गुट ने साम्यवादी प्रसार को रोकने के लिये नाटो, सेन्टो जैसे संगठन बनाये और साम्यवादी देशों ने इसके प्रतिरोध में वारसा-पेक्ट बनाया था। पश्चिमी देशों ने भारत को भी इन संगठनों में शामिल होने का आमंत्रण दिया था। इस पर नेहरू ने सैन्य गुटों से दूर रहने की नीति घोषित करते हुये इस प्रकार के सैन्य गठबन्धनों में शामिल होने से इंकार कर दिया था। इन सैन्य गुटों से दूर रहने की नीति का नाम ही गुट-निरपेक्षता की नीति है। इसके सम्बन्ध में कुछ लोगों को भ्रम है। वे इसे तटस्थता या किसी का मित्र या शत्रु न होने की नीति मानते हैं जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है। किसी का मित्र या शत्रु न होना वर्तमान व्यावहारिक जगत में संभव नहीं है। हमारी नीति केवल सैनिक गठबन्धनों से दूर रहने की है, भारत निरन्तर इस नीति का पालन कर रहा है। अब दुनियाँ में शीत युद्ध समाप्त हो जाने से गुट निरपेक्षता का कोई अर्थ शेष नहीं रह गया है। गुट-निरपेक्ष नीति के दो ध्वजवाहक राष्ट्र मिस्र और यूगोस्लोवाकिया अब इस नीति के प्रभावशाली नेता राष्ट्र नहीं रहे हैं। अब गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों का एक तीसरी दुनियाँ के प्रभावशाली मंच के रूप में महत्व स्थापित हुआ है।

एक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति या विदेश नीति के सिद्धान्त के रूप में गुटनिरपेक्षता का सिद्धान्त भारत की विदेश नीति का केन्द्र-विन्दु है। अन्य समस्त सिद्धान्त इसके चारों ओर घूमते हैं। यह भारतीय विदेश नीति के अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार का मुख्य सिद्धान्त है। भारत

स्वतंत्रता के बाद लगातार इसी महत्वपूर्ण सिद्धान्त के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपना व्यवहार करता आ रहा है। कुछ लोगों को इस सिद्धान्त की व्याख्या के सम्बन्ध में भ्रम है उनके मतानुसार तटस्थता भी नकारात्मक नीति है। वास्तव में तटस्थता युद्धकालीन नीति होती है, इसका अर्थ है तट पर खड़े रहना अर्थात् युद्ध के समय उसमें किसी पक्ष की ओर से भाग न लेना। भारत की यह नीति नहीं क्योंकि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने स्पष्ट कहा था भगवान न करे कभी विश्व युद्ध हो, यदि ऐसा हुआ तो तटस्थ रहना किसी राष्ट्र के लिये बड़ा कठिन होगा क्योंकि युद्ध मे सत्य-असत्य दो पक्ष होते हैं। भारत जैसे एक बड़े राष्ट्र के लिये यह बड़ा ही कठिन है कि वह सत्य का पक्ष न ले।

पंडित नेहरू ने इसकी व्याख्या करते हुये अपनी संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्रा में कहा था कि यह तो भारत की स्वतंत्र नीति है जिससे वह वर्तमान शीत युद्ध में बनने वाले किसी सैनिक गठबन्धनों से दूर रहना चाहता है। वह इन शीतयुद्धीय सैनिक गुटबन्दी को उचित नहीं मानता जिनसे विश्व-शान्ति को खतरा उत्पन्न हो सकता है। इसलिये भारत इनसे अलग रहेगा। इन गुटों में व उनके बाहर में जो विभिन्न विवाद उत्पन्न होंगे भारत उस पक्ष का समर्थन करेगा जिसकी बात न्यायपूर्ण होगी। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि भारत किसी से शत्रुता या मित्रता नहीं करेगा। यह तो राष्ट्रीय हितों के अनुरूप होना स्वाभाविक है। इसीलिये भारत ने अगस्त, 1971 में सोवियत संघ के साथ मैत्री की तो यह कहकर आलोचना की गई थी कि भारत ने अपनी गुट निरपेक्षता की नीति का परित्याग कर दिया है। इसका जवाब देते हुये श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने कहा था कि भारत इस प्रकार की मैत्री-संधि द्वारा किसी सैनिक गठबन्धन में नहीं बंधा है। भारत इस प्रकार की मैत्री-संधि अमेरिका से भी करने को तैयार है। इस प्रकार भारत की गुट निरपेक्षता की नीति स्पष्ट है। भारत की गुट निरपेक्षता नकारात्मक नहीं सकारात्मक है। यह तीसरा गुट बनाने की नीति भी नहीं है अपितु शीतयुद्धीय गुटबन्दी से दूर रहने की नीति है। इसीलिये डॉ. एन.के. श्रीवास्तव ने लिखा है कि, अब चूँकि शीतयुद्धीय सैनिक गुटबन्दी समाप्त हो चुकी है और नाटो, सेन्टोवारसा-पेक्ट का कोई अर्थ नहीं रह गया है इसलिये सैद्धान्तिक रूप से गुट निरपेक्षता के सिद्धान्त का भी कोई अर्थ नहीं रह गया। अब वास्तव में गुटनिरपेक्ष विकासशील तीसरी दुनियाँ के राष्ट्रों का आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक मंत्र रह गया है। अतः भारत की विदेश नीति में 1990 के बाद गुट निरपेक्षता का कोई संदर्भ या अर्थ नहीं बचा है। इसलिये भारत को अपनी विदेश नीति को गुट-निरपेक्ष कहना बन्द कर देना चाहिये।

उपरोक्त सिद्धान्त भारत की विदेश नीति के घोषित मूल सिद्धान्त हैं। ये वे सिद्धान्त हैं जिन पर भारत की विदेश नीति की मजबूत आधारशिला रखी हुई है। उपरोक्त सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर भारत की अब तक बनी सभी सरकारें भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार का निर्वाह करने का प्रयास करती हैं तथा भविष्य में करती रहेंगी ऐसी आशा है।

प्रश्न–3. भारतीय विदेश नीति की विशेषताओं का निरूपण कीजिये।

अथवा

'भारत की नीति पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की रही है।' इस कथन की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत की विदेश नीति की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

उत्तर– भारतीय विदेश नीति की प्रमुख विशषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) गुटनिरपेक्षता पर आधारित– प्रारम्भ से ही भारत की विदेश नीति गुट-निरपेक्षता पर आधारित है। इसे भारतीय विदेश नीति का सार-तत्व कह सकते हैं। गुटनिरपेक्षता गुटों की

पूर्व उपस्थिति का संकेत देती है। जब भारत स्वाधीन हुआ तो उसने पाया कि विश्व की राजनीति दो गुटों में बँट चुकी थी। स्वतंत्र के समक्ष उपयुक्त नीति अपनाने की समस्या थी। भारत के सामने दो विकल्प हैं– या तो वह किसी एक गुट के साथ अपने को जोड़ ले अथवा दोनों ही गुटों में अपने को पृथक् कर लें। 1947 में भारत ने दोनों ही गुटों से पृथक रहने की नीति अपनाई जिसे 'गुटनिरपेक्षता' का नाम दिया गया। गुटनिरपेक्षता के द्वारा एक ओर तो भारत ने किसी भी सैनिक संधि में होने से इंकार किया तो दूसरी तरफ अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में स्वतंत्र तथा सक्रिय भूमिका अदा की।

(2) साधनों की शुद्धता पर आधारित– भारत की विदेश नीति गांधीवादी के प्रमुखता से प्रभावित है जो साधनों की शुद्धता पर बल देती है। भारत की विदेश नीति विवादों का शान्तिपूर्ण समाधान ढूँढने का प्रयास करती है। भारत शांतिपूर्ण तथा न्यायपूर्ण साधनों से विश्व-शान्ति के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है।

(3) निःशस्त्रीकरण का समर्थन– भारत ने सदैव ही निःशस्त्रीकरण विशेषतयाः परमाणु निःशस्त्रीकरण का समर्थन किया है। इसकी यह दृढ़ मान्यता है कि केवल निःशस्त्रीकरण से ही विश्व में स्थायी शांति की स्थापना की जा सकती है तथा इस प्रकार बचाये गये धन का प्रयोग राष्ट्रों के विकास के लिए किया जा सकता है। परन्तु भारत परमाणु अप्रसार संधि तथा समग्र परमाणु परीक्षण प्रतिषेध संधि का विरोधी रहा है। उसकी दृष्टि में यह संधियाँ विभेदकारी हैं। इसी विभेदीकृत दृष्टिकोण के कारण भारत ने इन दोनों संधियों पर कभी हस्ताक्षर नहीं किए हैं।

(4) पंचशील पर आधारित– भारत की विदेश नीति पंचशील की अवधारणा पर आधारित है। पंचशील अर्थात् व्यवहार या आवरण के पाँच नियम। 20 जून, 1954 को भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू तथा चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन-लाई के बीच निम्नांकित पाँच सिद्धान्तों की घोषणा की गई जिन्हें सम्मिलित रूप से पंचशील के नाम से जाना जाता है–

(a) एक-दूसरे की क्षेत्रीय अखण्डता तथा प्रभुता का परस्पर सम्मान।
(b) एक-दूसरे पर आक्रमण न करना।
(c) एक-दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।
(d) परस्पर लाभ समानता।
(e) शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व।

सन् 1962 में भारत पर चीन के आक्रमण के समय अवश्य ही एक बार भारत का विश्वास पंचशील में डगमगाया, परन्तु आज भी यह भारतीय विदेश नीति की आधारभूत विशेषता है। यह आज भी दूसरे देशों के साथ भारत के सम्बन्ध का आधार है।

(5) पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध– भारत की विदेश नीति सभी राष्ट्रों, पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मित्रता की नीति पर आधारित है। भारत दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा राष्ट्र है। औद्योगिक तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में की गई उन्नति के कारण भारत बड़ी शक्ति बनने की क्षमता रखता है। इसके अतिरिक्त भारत ने कभी भी दक्षिण एशिया के अपेक्षाकृत छोटे राष्ट्रों पर अपनी इच्छा थोपकर 'बॉस' की भूमिका निर्वाह करने का प्रयास नहीं किया तथा पड़ोसी देशों के साथ सहयोगात्मक, आर्थिक और राजनीतिक सम्बन्ध विकसित करने का इच्छुक है। नेपाल के साथ महाकाल संधि, बंगलादेश के साथ फरक्का और तीन बीघा समझौता, मालदीव की सुरक्षा में सहायता, श्रीलंका की तमिल समस्या के समाधान में योगदान आदि भारत की इसी नीति के परिचायक हैं।

(6) रंगभेदता का विरोध– भारत ने हमेशा रंगभेद की नीति का विरोध किया है। रंगभेदवाद की नीति के चलते ही भारत ने सन् 1954 में दक्षिण अफ्रीका से अपने कूटनीतिक सम्बन्ध तोड़ लिये थे परन्तु अब जबकि दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद की नीति खत्म हो चुकी है, भारत ने दुबारा उससे कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिए हैं। नामीबिया की स्वतंत्रता का भारत ने हमेशा समर्थन किया।

(7) उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का विरोध– भारत की विदेश नीति की अन्य विशेषता है- उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का विरोध। भारत का यह विश्वास है कि पराधीन देशों को स्वतंत्रता से वंचित रखना मानवाधिकारों का उल्लंघन है जिससे अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष उत्पन्न होते हैं। एशियाई सम्बन्ध सम्मेलन (1949), बांडुंग सम्मेलन (1955), गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के सम्मेलन, संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठकों में भारत ने हमेशा ही साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद के विरूद्ध आवाज उठाई है। भारत ने उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद के शिकार तमाम देशों यथा इण्डोनेशिया, लीबिया, ट्यूनीशिया, अल्जीरिया, मोरक्को, अंगोला, नामीबिया के मुक्ति-संग्रामों का समर्थन किया है।

निष्कर्ष– उपरोक्त चर्चा का निष्कर्ष यह है कि विदेश नीति एक गतिशील प्रक्रिया है और विश्व में एक उन्नतशील शक्ति बनने के लिए भारत के नये उत्तरदायित्वों के साथ-साथ इसकी विदेश नीति में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आ रहे हैं। सन् 1991 के बाद से भारतीय विदेश नीति गुटनिरपेक्षता के मूल सिद्धान्तों से विचलित हुए बिना अपने दृष्टिकोण में अधिक यथार्थवादी हो गई है। कश्मीर-विवाद और चीन के साथ सीमा-विवाद पर अब व्यावहारिक समाधान के लिए भारत की तलाश यह से यह पता चलता है भारत अब इस मामले पर अंततः कोई हल चाहता है। दक्षिण एशिया में शान्ति और समृद्धि की दृष्टि से भारत को सफल रणनीति की जरूरत है। क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए आन्तरिक विवादों को जन्म लेने से रोकना और भारत द्वारा अपने पड़ोसियों से विवाद का समाधान करना भी इसका महत्वपूर्ण भाग है।

प्रश्न–1. पिछले दशक की भारतीय विदेश नीति के प्रमुख लक्षणों का परीक्षण कीजिये।

अथवा

1991 के बाद भारत की विदेश नीति का परीक्षण कीजिये।

अथवा

'1990 के बाद भारत की विदेश नीति में भी परिवर्तन आये हैं।' इस मत से आप कहाँ तक सहमत हैं?

अथवा

भारत की विदेश नीति का नेहरू युग से वर्तमान तक मूल्यांकन कीजिये।

उत्तर– जब भारत की विदेश नीति की पुस्तकों में भारतीय विदेश नीति के मूल सिद्धान्तों या विशेषताओं का अध्ययन करते हुये छात्रों व अध्यापकों को यह पढ़ते-पढ़ाते देखा जाता है कि भारत की विदेश नीति के 7 मूल या आधारभूत सिद्धान्त हैं या कुछ लेखकों का यह मत पढ़कर ऐसा लगता है कि हम प्रत्येक क्षेत्र में रूढ़िवादी हैं कि भारत की विदेश नीति में निरन्तरता व परिवर्तन का अद्भुत सामंजस्य है। वास्तव में भारत की वर्तमान विदेश नीति या उसके वैदेशिक व्यवहार को देखकर उपरोक्त कथन असत्य प्रतीत होता है। कभी-कभी यह पढ़कर भी दुःख होता है कि भारत की विदेश नीति वही है जो हम राष्ट्रीय आन्दोलन काल में सोचा करते थे, या जो हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने बनाई थी इसलिये हम पंडित नेहरू को भारत की विदेश नीति के मुख्य शिल्पी भी सिद्ध करते हैं।

यह ठीक है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू भारत के प्रथम प्रधानमंत्री थे तथा उन्होंने भारत की प्रारम्भिक विदेश नीति के मूल सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया, जिन्हें बहुत दिनों तक

भारत सरकार ने व्यवहार में लाया। उनके बाद उनके अनुयायी लालबहादुर शास्त्री ने सिद्धान्तों की दृष्टि से उन्हीं सिद्धान्तों का अनुसरण किया। उसके बाद उनकी पुत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने भी अपने पिता की विदेश नीति के प्रतिपादित सिद्धान्तों पर चलकर वैदेशिक व्यवहार किया, परन्तु पंडित जवाहरलाल नेहरू के व्यक्तित्व और उनके विदेशों के साथ व्यवहार में तथा लालबहादुर शास्त्री के विदेशों के प्रति व्यवहार में अन्तर था। यह अन्तर व्यक्तिगत स्तर पर व्यवहार में स्वाभाविक रूप से थे।

सैद्धान्तिक नीतियों में अन्तर तो गैर कांग्रेसी सरकार जनता पार्टी के शासन-काल में भी नहीं दिखाई दिया क्योंकि इसके भी वे ही घोषित सिद्धान्त थे। व्यवहार में भी न्यून परिवर्तन ही दृष्टिगोचर होते हैं क्योंकि परिस्थितियों में कोई बदलाव नहीं आया था। यद्यपि तब भारत के प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई और विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी थे।

परन्तु परिस्थितियों में परिवर्तन और एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्तियों की कार्य-प्रणाली, विचार इत्यादि में अन्तर होने के कारण व्यवहार में भिन्नता दिखना स्वाभाविक था। धीरे-धीरे परिस्थितियां बदल जाती हैं, शासक भी बदल जाते हैं। नये शासकों के विचार तथा कार्यप्रणाली पूर्ववर्ती शासकों से भिन्न हो सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सम्बन्ध में एक बात और बड़ी महत्वपूर्ण है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सिद्धान्तों का बहुत अधिक महत्व नहीं होता है क्योंकि सिद्धान्त हमेशा आदर्शवादी होते हैं। इसमें व्यवहार का बड़ा महत्व है और व्यवहार पर काल, परिस्थितियों और समकालीन व्यक्तित्वों का तथा उनके विचारों का गहरा प्रभाव पड़ता है।

1980 के बाद अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की परिस्थितियों में बहुत बदलाव आना शुरू हो गया था क्योंकि शीत युद्ध शिथिल हो रहा था। आर्थिक तत्व समाज पर अधिक हावी होने लगे थे, परन्तु वे उस ढंग से समाज को प्रभावित नहीं कर पा रहे थे जैसा कि 18वीं व 19वीं शताब्दी में कार्ल मार्क्स ने सोचा था। यानी कि मार्क्सवादी प्रयोग अपने आप विफल होने लगा था। राष्ट्रवाद और अन्तर्राष्ट्रीयतावाद ने भी उसी प्रकार एक बीच का रास्ता ढूंढना शुरू कर दिया था, जिस प्रकार समाजवाद और पूँजीवाद ने एक बीच का रास्ता ढूँढ निकाला था। इसका प्रभाव समकालीन विश्व पर पड़ना स्वाभाविक था। समकालीन विश्व तथा अड़ौस-पड़ौस के वातावरण के बदलने का प्रभाव विदेश नीतियों पर पड़ना स्वाभाविक था। अतः भारत की विदेश नीति के परम्परागत 7 मूल सिद्धान्तों की अब क्या सार्थकता बची है? यह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विद्यार्थी के लिये एक विचारणीय प्रश्न है। इसके लिये यदि हम उपरोक्त सातों परम्परागत सिद्धान्तों पर दृष्टिपात करें तो व्यवहार में अब इनकी कोई सार्थकता नहीं दिखाई देती है।

(1) विश्व-शान्ति में गहन आस्था– यह एक आदर्शवादी घोषणात्मक सिद्धान्त है। फासिस्टवादी या माओवादियों के अलावा कोई भी राष्ट्र शान्ति का विरोधी होने का दम्भ नहीं भर सकता। आज विश्व जिस प्रकार बारूद के ढेर पर बैठा है, उससे दुनियाँ का कोई भी देश अपने आप को युद्ध का समर्थक नहीं कह सकता, फिर महात्मा गांधी, महावीर स्वामी और गौतम बुद्ध का देश विश्व युद्ध का समर्थन कैसे कर पायेगा?

ऐसी कल्पना करना भी व्यर्थ है। छोटे-मोटे युद्ध या सशस्त्र संघर्ष तो हमें पंडित नेहरू के काल में भी करना पड़े थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व-शान्ति की समस्या गम्भीरतम थी, परन्तु अब द्वितीय विश्व युद्ध के 50 वर्ष बाद उतनी गम्भीर नहीं रह गई है। वास्तव में विश्व-शान्ति में गहन आस्था आज भारत ही नहीं समस्त विश्व की आदर्श या सामान्य इच्छा बन गई है। इसका केवल भावुकतापूर्ण महत्व है।

(2) **साम्राज्यवाद का विरोध**– जहां तक साम्राज्यवाद के विरोध का प्रश्न है, इसकी सार्थकता इसलिये समाप्त हो गई है क्योंकि अब दुनियाँ में साम्राज्यवाद का वह रूप ही विलुप्त हो गया जिसके विरोध करने का दृढ़-संकल्प भारत ने अपनी विदेश नीति के मुख्य सिद्धान्त के रूप में घोषित करते हुये यह घोषणा की थी, कि वह दुनियाँ में कहीं भी चलने वाले साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलनों का समर्थन करेगा। आज जब साम्राज्यवाद का वह लक्षण ही नहीं है, तो साम्राज्यवाद ने नया रूप ग्रहण कर नव साम्राज्यवाद का नया मुखौटा पहन लिया है, जिसका विरोध करना कठिन है क्योंकि यह प्रत्यक्ष में दूसरे देशों को अपने आधीन नहीं बनाता है। इसलिये साम्राज्यवाद के विरोध की भी आज के सन्दर्भ में कोई सार्थकता या अर्थ नहीं रह गया है।

(3) **संयुक्त-राष्ट्र संघ का समर्थन**– यह भी एक आदर्शवादी घोषणात्मक सिद्धान्त बन कर रह गया है क्योंकि संयुक्त-राष्ट्र संघ को बने हुये 57 वर्ष हो चुके है। दुनियाँ का कोई भी सभ्य राष्ट्र आज सयुक्त-राष्ट्र संघ का विरोध करने की बात नही सोच सकता। आज की विश्व राजनीति में संयुक्त-राष्ट्र अपरिहार्य जैसा संगठन बनता जा रहा है। अतः इसमें अनास्था या इसके साथ असहयोग का तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता।

(4) **रंगभेद का विरोध**– भारत की विदेश नीति का एक मूल सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय जगत मे रंगभेद नीति का विरोध करना भी था। रंगभेद नीति का नग्न रूप हमें दक्षिण अफ्रीका के राज्यों मे देखने को मिलता था। दक्षिण अफ्रीका, दक्षिणी पश्चिमी-अफ्रीका, रोडेशिया, जिम्बावे की स्वतंत्रता के बाद और वहां से रंगभेद नीति की समाप्ति के बाद अब इस नीति की भी कोई सार्थकता शेष नहीं बची है। अब रंगभेद एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न नहीं है अपितु यह एक राष्ट्रीय समस्या है। इस समस्या के राष्ट्रीय हो जाने के बाद अब विदेश नीति के सिद्धान्त के रूप में इस सिद्धान्त की कोई सार्थकता शेष नही बची है।

(5) **निःशस्त्रीकरण**– भारत की विदेश नीति का पाँचवा घोषित सिद्धान्त थाः निःशस्त्रीकरण का समर्थन। इसका अर्थ है - शस्त्ररहित विश्व की वकालत। भारत ने जब इस सिद्धान्त की घोषणा की थी, तब दुनियाँ में द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुआ था और दुनियाँ के क्षितिज पर तीसरे विश्व युद्ध के बादल मंडरा रहे थे। भारत स्वयं सैन्य- शक्ति की दृष्टि से एक निर्बल राष्ट्र था। आज की स्थिति भिन्न है। आज भारत स्वयं सशस्त्र और आणविक शक्ति सम्पन्न राष्ट्र है। भारत के पास अनेक अस्त्र, शस्त्र और मिसाइलें हैं तब भला उसके द्वारा अब निःशस्त्रीकरण की बात कहने का क्या अर्थ? अब भारत की इस रट में कोई सार्थकता या ठोस तर्क व्यावहारिक नहीं दिखाई देता है कि दुनियाँ के सभी देश अपने-अपने हथियार समाप्त कर दें भले ही कोई अपनी घर की बन्दूक जमा नहीं कराता तो हथियारों को सभी के द्वारा नष्ट करने या अब भविष्य में न बनाने का वचन देने की क्या सार्थकता है? इस बात में कोई तात्कालिक व्यावहारिकता नहीं दिखाई देकर मात्र आदर्शवाद दिखाई देता है।

(6) भारत की विदेश नीति के वास्तव में केवल दो ही सिद्धान्त थे- (1) पंचशील, (2) गुट-निरपेक्षता। पंचशील हमारे पड़ौसी राष्ट्र के प्रति नीति के 5 आदर्श सिद्धान्त थे जिन्हें एक अच्छे पड़ौसी के सिद्धान्त या नीतियाँ कहा जा सकता है। इस सिद्धान्त को भारत ने चीन के साथ मिलकर लागू किया था। उसी चीन ने इसका सर्वप्रथम गला घोंट दिया। बाद में बंगलादेश, श्रीलंका और नेपाल के मामलों में यह नीति ठीक ढंग से व्यवहार में नहीं लाई जा सकी। **डॉ. पी.डी. कौशिक** के शब्दों में पंचशील एक भ्रान्ति सिद्ध हुई है।

(7) **गुटनिरपेक्षता**– भारत की विदेश नीति का सबसे मूल्यवान और महत्वपूर्ण माना जाने वाला सिद्धान्त गुटनिरपेक्षता का सिद्धान्त है। इसके मुख्य प्रतिपादक पण्डित जवाहरलाल नेहरू

माने जाते हैं, और यह विश्व राजनीति का एक आन्दोलन बन गया था। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन नेहरू, कर्नल नासिर और मार्शल टीटो ने उस समय किया था, जब विश्व दो परस्पर विरोधी गुटों में बँटा हुआ था और जिनके बीच शीत युद्ध चल रहा था। ये गुट थे- संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में संगठित (1) आंग्ल अमेरिकी गुट, (2) सोवियत नेतृत्व में साम्यवादी गुट।

1990 के बाद साम्यवादी गुट की साम्यवादी रूस के विघटन के बाद अब गुटनिरपेक्ष नीति की क्या सार्थकता बची है? समझ में नहीं आता। आज गुटनिरपेक्ष आन्दोलन मात्र तीसरी दुनियाँ का मंच बनकर रह गया है। अब यदि इसे इस रूप में बनाये भी रखना है तो इसका नाम बदल देना चाहिये।

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन सरकार के नेतृत्व में भारत की विदेश नीति– राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन जिसके प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी थे। यह अधिकांश क्षेत्रीय दलों के सहयोग से बना गठबन्धन था। इसमें अधिकांश क्षेत्रीय दलों की रुचि विशेष, नीतियों में या तो थी ही नहीं अथवा बहुत कम थी। इसलिये भारतीय जनता पार्टी की ही चल रही थी। इस पर यह आरोप था कि इसका झुकाव संयुक्त राज्य अमेरिका की ओर है। संयुक्त राज्य अमेरिका एक मात्र सर्वशक्तिशाली राज्य है। इसलिये इस झुकाव से कुछ लाभ भी था और कुछ नुकसान भी थे, क्योंकि संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन तथा पाकिस्तान से हमारे सम्बन्ध प्रारम्भ से ही अच्छे नहीं रहे हैं तो ठीक-ठीक भी नहीं रहे हैं। यह तो ठीक है कि इनसे सम्बन्ध सुधारे जाने चाहिये परन्तु ये इतने कूटनीतिक दृष्टि से स्वार्थी और अविश्वसनीय राज्य हैं कि इनसे सम्बन्ध-सुधार के प्रयास करने पर भी हमें फूंक-फूंक कर कदम रखने की आवश्यकता है, क्योंकि अमेरिका और पाकिस्तान के सम्बन्ध बहुत पुराने हैं और संयुक्त राज्य अमेरिका, पाकिस्तान के उस आतंकवादी रूप को नहीं मान रहा है जिस रूप में वह (पाकिस्तान) वास्तव में है। चीन भी जहां पूर्वप्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी गये थे विश्वसनीय राष्ट्र नहीं है। पाकिस्तान के तत्कालीन शासक जनरल परवेज मुशर्रफ कारगिल के अपराधी तथा क्रूर कूटनीतिज्ञ थे।

यू.पी.ए. सरकार और भारत की विदेशनीति– यू. पी. ए. सरकार की विदेश नीति में वामपंथी विचारधारा की झलक भी दिखाई दी। भूतपूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह भी विदेशनीति के उसी मार्ग पर ही चले। अमेरिका के साथ उन्होंने अक्टूबर 2008 में जो परमाणु डील की थी उसका उद्देश्य भी भारत को विश्व मंच पर सशक्त देशों की श्रेणी में लाकर खड़ा करना ही था। मनमोहन सिंह ने स्पष्ट कर दिया कि भारत के हितों के विपरीत किसी भी प्रकार का समझौता संभव नहीं है। इस मुद्दे पर वामपंथियों ने मनमोहन सरकार से समर्थन वापस ले लिया था। परन्तु समाजवादी पार्टी के सहयोग से सरकार बच गयी। 2014 में आई मोदी सरकार की विदेश नीति में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी की नई तरह की झलक मिलती है। सन् 2019 में भी मोदी जी पुनः प्रधानमंत्री बने और अब तक के अपने 8 वर्षों के कार्यकाल में मोदी जी ने सम्पूर्ण विश्व के राजनेताओं से अपनी मित्रता की नीति अपनाकर विश्व में भारत की स्थिति को मजबूती प्रदान करके नई ऊँचाईयाँ प्रदान की हैं। भारत भी अब विश्व में महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर है।

उपरोक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत के परम्परागत उपरोक्त 7 सिद्धान्तों का अब कोई व्यावहारिक महत्व या सार्थकता नहीं रह गई है।

डॉ. एन. के. श्रीवास्तव के अनुसार, अब भारत की विदेश नीति की निम्नलिखित मूल विशेषतायें हैं–

(1) अपने पडौसियों के साथ यथा-सभव अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करते हुये अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने तथा बनाये रखने का प्रयास।
(2) आणविक शक्ति का सामान्य अवस्था में शान्तिपूर्ण उपयोग, परन्तु सुरक्षा की दृष्टि से शक्ति-सन्तुलन बनाये रखने के लिये आणविक हथियार बनाने और उनके प्रयोग की क्षमता भी हासिल करना।
(3) तीसरी दुनियाँ के देशों की समस्याओं के निराकरण में सहयोग और विकसित राष्ट्रों के शोषण से उनकी रक्षा के लिये प्रयास। इस दृष्टि से तीसरी दुनियाँ के देशों का नेतृत्व।
(4) सभी प्रकार की महाशक्तियों से अच्छे सन्तुलनात्मक संबंध।
(5) सहायता राजनय का दोनों प्रकार से लाभ यानी अपने से विकसित देश से बिना शर्त सहायता तथा अपने से पिछड़े देशों की सहायता।
(6) हिन्द महासागर में शान्ति बनाये रखने का प्रयास।
(7) संयुक्त-राष्ट्र को यथा शक्ति सहयोग तथा सुरक्षा परिषद् में स्थायी स्थान प्राप्त करना।
(8) क्षेत्रीय महाशक्ति बनना, बाद में अन्तर्राष्ट्रीय महाशक्ति बनना।
(9) दुनियों के सभी देशों के साथ आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सम्बन्ध सुदृढ़ बनाये रखना।
(10) साम्राज्यवादी काल में भारत की खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त करना।
(11) प्रशान्त सागरीय क्षेत्र और अटलान्टिक दुनियाँ के बीच मध्यस्थ और सेतु की भूमिका।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि भारत की विदेश नीति बदलती अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के साथ कदम ताल मिलाने का सतत् प्रयास है परन्तु भारत की सबसे बड़ी कमजोरी हमारी कूटनीतिक कमजोरी है।

प्रश्न–5. भारत की विदेश नीति करने वाले मुख्य तत्वों की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक, तत्वों की विवेचना कीजिये।

अथवा

ारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले आन्तरिक और बाह्य तत्वों की संक्षेप में ना कीजिये।

अथवा

'भारत की विदेश नीति दुनियाँ के अन्य देशों की विदेश नीतियों की तरह उसके राष्ट्रीय हित ही निर्धारित करते हैं।' इस बात से आप कहाँ तक सहमत हैं?

अथवा

भारत की विदेश नीति के प्रमुख निर्धारक तत्वों की विवेचना कीजिये।

उत्तर– विदेश नीति एक प्रकार से सरकार की अन्य राष्ट्रों के प्रति सम्बन्धों में नीति है। नीति का निर्धारण सरकारी नेताओं और शासकों द्वारा किया जाता है। इतिहास से हमें भूतकालीन अनुभव मिलते हैं। ये अनुभव हमें अतीत की भूलें तथा गौरव की याद दिलाते हैं। भूलों को ध्यान में रखकर ऐसी नीति बनाई जा सकती है, जिससे कि भविष्य में राष्ट्र के हित

सुरक्षित रहें। इतिहास हमें अतीत काल के गौरव का ध्यान दिलाकर विदेश नीति के लक्ष्य और उद्देश्य निश्चित करने में शासकों को प्रेरणा देता है।

इतिहास हमें बताता है कि भारत महात्मा बुद्ध, महावीर स्वामी और कृष्ण का देश है जिन्होंने विश्व को शान्ति का महान् सन्देश दिया। इतिहास हमें वृहत्तर भारत और नालन्दा-तक्षशिला युग की गौरवमयी याद भी दिलाता है और बताता है कि अतीत में भारत का सांस्कृतिक प्रभाव दक्षिण, दक्षिण पूर्व, दक्षिण पश्चिम, पूर्वी एशिया में दूर-दूर तक फैला था। हमें अपने सम्बन्ध विभिन्न देशों से बनाते हुये इन ऐतिहासिक तत्वों से प्रेरणा मिलती है। भारत की विदेश नीति के निर्माता पण्डित जवाहरलाल नेहरू एक महान् इतिहासकार भी थे। यह उनकी पुस्तकें 'विश्व इतिहास की झलक', तथा 'हिन्दुस्तान की खोज' पढ़कर स्पष्ट होता है। भारत की विदेश नीति पर लगभग 100 वर्ष चले हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन का भी महत्वपूर्ण योगदान है। हमारे देश की विदेश नीति की नींव राष्ट्रीय आन्दोलन के काल में ही पड़ गई थी।

वास्तव में किसी देश की विदेश नीति यों ही नहीं बन जाती है। विदेश नीति के निर्माण और निर्धारण के इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, सैन्य-शास्त्र, नेतृत्व, नौकरशाही, राजनीतिक विचारधारायें इत्यादि विभिन्न तत्वों की प्रभावकारी भूमिका होती है। आजकल अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन में नई अध्ययन पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। कुछ विद्वान इसके निर्धारण में व्यक्तियों की भूमिका को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं दूसरी ओर कुछ लोग इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र इत्यादि को महत्वपूर्ण मानते हैं वैसे इस सम्बन्ध में विवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विभिन्न देशों की विदेश नीति के निर्धारण विभिन्न-विभिन्न तत्वों की परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न-विभिन्न भूमिका होती है। यहाँ हमें भारत की विदेश नीति पर विचार करना है। भारत की विदेश नीति के निर्धारण में निम्नलिखित तत्वों की भूमिका महत्वपूर्ण है–

1. **भौगोलिक तत्व–** भूगोल किसी देश की विदेश नीति को प्रभावित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। भारत की विदेश नीति को भी निम्नलिखित भौगोलिक तत्व प्रभावित करते हैं–

(1) **स्थिति–** भारत हिन्द महासागर के उत्तर में तथा हिमालय के दक्षिण में स्थित दक्षिणी एशिया का एक महत्वपूर्ण देश है। यह एक उपमहाद्वीप है। यह विश्व के महत्वपूर्ण जलमार्गों तथा वायुमार्ग पर स्थित है। यह सोवियत संघ और चीन के बिल्कुल निकट है। भारत ने अपनी स्थिति के कारण ही गुटनिरपेक्षता की नीति स्वीकार की है। इसी कारण भारत विश्व-शान्ति का समर्थक है।
(2) **सीमा–** भारत की सीमा नेपाल, भूटान, पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका और चीन से मिलती है। भारत की कुछ सीमायें सुनिश्चित नहीं हैं, इसलिये भारत के अनेक देशों के साथ सीमा-विवाद रहे हैं। चीन के साथ सीमा-विवाद का परिणाम 1962 का युद्ध तथा पाकिस्तान के साथ सीमा-विवाद ने 1965 का कच्छ-रन विवाद पैदा किया। भारत के बर्मा, बंगलादेश, श्रीलंका के साथ भी सीमा-विवाद रहे हैं। भारत ने अपनी सीमाओं के कारण ही पंचशील का प्रतिपादन किया। हमारी विश्व-शान्ति नीति भी इसी की देन है। भारत की नीति सुरक्षा से भी जुड़ी हुई है।
(3) **विस्तार–** विस्तार भी किसी देश की विदेश नीति को निर्धारित करता है। भारत लगभग 2,000 मील लम्बा और इतना ही चौड़ाई में फैला देश है। इतने विशाल देश की विदेश नीति भी सहिष्णुता और शान्ति पर आधारित होनी ही चाहिये। अतः भारत सदैव ही एक शान्तिप्रिय देश रहा है।

(4) धरातल– भारत का उत्तरी भाग पहाड़ी, मध्य का भाग नदी घाटियों का मैदानी तथा दक्षिण का भाग पठारी क्षेत्र है। इस प्रकार के धरातल वाले राष्ट्र में विविधता मे एकता देखने को मिलती है। इस प्रकार की धरातलीय रचना के कारण भारत एक शान्तिप्रिय देश है। भारत भी विश्व शान्ति का समर्थक तथा उपनिवेशवाद का विरोधी है।

(5) जलवायु– भारत की जलवायु मानसूनी जलवायु है। इस प्रकार की जलवायु वाला देश कृषि प्रधान देश होता है। एक कृषि प्रधान देश की विदेश नीति अहिंसा और शान्ति मे विश्वास रखती है।

(6) खनिज पदार्थ– भारत मे पर्याप्त मात्रा मे लोहा, कोयला, मैंग्नीज इत्यादि खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। इनके द्वारा भारत एक महान् औद्योगिक शक्ति बन सकता है, परन्तु पूजी और आधुनिक टेक्नोलॉजी की कमी के कारण भारत में अपेक्षित औद्योगिक विकास नही हो पाया था। इसलिये भारत ने दोनों गुटों से आर्थिक और टेक्नीकल सहायता लेकर अपना विकास करने की नीति अपनाई है। हमारी गुटनिरपेक्ष नीति का यही कारण है।

(7) शक्ति के साधन– भारत मे कोयला यद्यपि पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है परन्तु यह शक्ति का श्रमशील साधन है। भारत मे जलविद्युत का पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है। यूरेनियम भी पर्याप्त मात्रा में नहीं है। मिट्टी का तेल भी हमारी आवश्यकता के अनुरूप नहीं है इसलिये भारत पेट्रोल के लिये पेट्रोल उत्पादक पश्चिमी एशिया के देशों का समर्थक है, क्योंकि हमारी तेल संबंधी आवश्यकतायें वहीं से पूरी होती हैं।

भारत का मानव भूगोल भी भारत की विदेश नीति के निर्धारण में सहायक हुआ क्योंकि यहाँ आस्ट्रेलियाईड मंगोलाइड और नीग्रोलाईड तथा आर्य द्रविड़ इत्यादि कई प्रजातियों के लोग रहते हैं इससे भारत को विश्व के सभी देशों के साथ मित्रता बनाये रखना आवश्यक है। भारत की विदेश नीति पर उसकी स्थिति, धरातल, सीमा इत्यादि का गहन प्रभाव है।

2. भू–राजनीति– भारत की भू–राजनीति भारत को एक शक्तिशाली अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का ऐसा देश बनाती है जिसकी अवहेलना अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में कभी किया जाना न संभव हुआ, न भविष्य में होना संभव है। हाँ, हमारे देश की राष्ट्रीय एकता की स्थापना इसी की देन है जिसे बनाये रखना भारत का मुख्य राष्ट्रीय हित है।

3. भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले आर्थिक तत्व– आधुनिक युग भौतिकवादी युग है। इस युग में आर्थिक तत्व किसी देश की विदेश नीति को सबसे अधिक प्रभावित करते हैं। भारत की विदेश नीति पर स्वतंत्रता के समय उसकी पिछड़ी हुई दशा का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। भारत के पास समृद्ध राष्ट्र बनने के लिये साधनों, कच्चे माल तथा जनसंख्या की कमी नहीं है। भारत को अपना विकास करना था, इसलिये उसने विश्व–शांति और गुट निरपेक्षता की नीति अपनाई। साम्राज्यवादी ब्रिटेन ने भारत का इतना शोषण किया था कि भारत को साम्राज्यवाद के विरोध की नीति अपनानी पड़ी।

भारत एक विकासशील देश है। यह दुनियाँ के तमाम विकासशील देशों में से एक है जिन्हें तीसरी दुनियाँ के नाम से जाना जाता है। इन तीसरी दुनियाँ के देशों के विकास में सबसे बड़ी बाधा यह है कि पूर्व साम्राज्यवादी विकसित देशों का वर्तमान विश्व अर्थव्यवस्था पर एकाधिकार है इसलिये भारत नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिये प्रयत्नशील है जिससे तीसरी और चौथी दुनियाँ के देश भी विकास कर सकें। भारत का बढ़ता हुआ व्यापार भी उसकी विदेश नीति को प्रभावित करता है।

भारत की आर्थिक उन्नति तभी संभव है जब अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति बनी रहे। भारत को विकास के लिये विदेशी सहायता की अत्यन्त आवश्यकता है। इसलिये भारत की विदेश नीति हमेशा इस बात का ध्यान रखकर बनाई या चलाई जाती है जिससे भारत के आर्थिक विकास के लिये पर्याप्त मात्रा में आर्थिक सहायता तथा सहयोग प्राप्त होता रहे। पं. जवाहरलाल नेहरू के काल से ही भारत की विदेश नीति आर्थिक तत्व प्रधान बन गई है।

4. भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले वैचारिक तत्व– भारत की विदेश नीति को गाँधीवादी विचारधारा तथा नेहरू के विचारों ने प्रभावित किया था। गाँधीवादी विचारधारा ने हमारी विदेश नीति को विश्वशाति में आस्था, अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों में आस्था, रंगभेद नीति का विरोध, निःशस्त्रीकरण का समर्थन इत्यादि सिद्धान्त प्रदान किये। नेहरू ने ब्रूसेल्स सम्मेलन के बाद भारत को साम्राज्यवाद के विरोध का बहुमूल्य सिद्धान्त दिया। पचशील और गुटनिरपेक्षता नेहरू के विचारों की ही देन है। हमारी विदेश नीति पर सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह की स्पष्ट छाप है। नेहरू समाजवादी थे, अतः समाजवादी देशों के प्रति भारत की मैत्री का स्वाभाविक विकास हमें देखने को मिलता है। भारत की विदेश नीति पर राष्ट्रवाद तथा अध्यात्म वाद का भी स्पष्ट प्रभाव है। भारत की विदेश नीति पर अन्तर्राष्ट्रीयतावाद तथा राष्ट्रवादी विचारकों व विचारधाराओं का भी स्पष्ट प्रभाव है। भारत की विदेश नीति पर राष्ट्रवादी विचार का भी स्पष्ट प्रभाव है यद्यपि यह राष्ट्रवाद उदार राष्ट्रवाद है। भारतीय अपने राष्ट्र की उन्नति और प्रेम के साथ दूसरे राष्ट्रों के प्रति भी सहिष्णु होता है। भारत की विदेश नीति पर अध्यात्म और धर्म का भी पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है। धार्मिक दृष्टि से भारत एक दार्शनिक सहिष्णु देश है। हमारी आस्था मानवता, शान्ति और लोकतंत्र में है।

5. भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले सैनिक तत्व– आधुनिक युग में किसी राष्ट्र की सैन्य–शक्ति बहुत महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि राष्ट्र की सुरक्षा और आत्मरक्षा के लिये सैन्य–शक्ति आवश्यक होती है। सैनिक आवश्यकता विदेश नीति का व्यवहार निश्चित करती है। भारत की विदेश नीति भी व्यवहार में भारत की सुरक्षा नीति की अनुयायी है। जब तक हमारी विदेश नीति हमारी सुरक्षा नीति के साथ सम्बद्ध नहीं थी, भारत को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपमान सहने पड़े थे। चीन का आक्रमण, उसके बाद पाकिस्तान का कच्छ पर आक्रमण भारत का खुला अपमान था। यह अपमान करने की हिम्मत पाकिस्तान की इसलिये पड़ी क्योंकि भारत सैनिक दृष्टि से शक्तिहीन था। जब से भारत ने अपने आपको सैनिक दृष्टि से सक्षम सिद्ध कर दिया है, हम देख रहे हैं तभी से हमारा राष्ट्रीय हित सुरक्षित है।

भारत ने सैनिक सुरक्षा की दृष्टि से ही 1971 में सोवियत संघ के साथ मैत्री–सन्धि की थी। भारत–नेपाल सम्बन्धों में तनाव का कारण भी सैनिक ही है। सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली होने के कारण ही दक्षिण एशिया के देश भारत से सशंकित रहते हैं। श्रीलंका को भी भारत की सैनिक–शक्ति के कारण ही शंकायें हैं। भारत ने 1974 में परमाणु विस्फोट किया यद्यपि भारत ने बार–बार परमाणु शक्ति के शान्तिपूर्ण उपयोग की घोषणायें की हैं परन्तु कोई इन घोषणाओं पर विश्वास नहीं करता। पाकिस्तान ने भी इसी की प्रतिक्रियास्वरूप आणविक शक्ति हासिल कर ली है। अब 11 व 13–5–98 के पश्चात् पाँच विस्फोटों के कारण भारत एक अणु शक्ति सम्पन्न देश बन गया है। अतः अब इसका प्रभाव विश्व राजनीति पर पड़ना आवश्यक हो गया है।

भारत की विदेश नीति पर सुरक्षा का तत्व ही हमारी हिन्द महासागर सम्बन्धी नीति को भी प्रभावित करता है। ऐसा ही प्रसिद्ध राजनयिक के. एम. पणिक्कर ने अपनी पुस्तक हिन्द

महासागर में लिखा भी है कि 'जब-जब भारत की हिन्द महासागर पर पकड़ ढीली हुई या हमारा हिन्द महासागर में प्रभाव कम हुआ भारत को गुलामी की जंजीरों में जकड़ना पड़ा।'

भारत की सुरक्षा का हिन्द महासागर से घनिष्ठ सम्बन्ध है। हिमालय भी सुरक्षा के कारण से ही भारत की विदेश नीति में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भारत-पाक सम्बन्ध तथा भारत-चीन सम्बन्धों को सैनिक कारणों ने बहुत अधिक प्रभावित किया है।

6. **राष्ट्रीय हित**– इस सम्बन्ध में प्रश्न यह है कि जिस प्रकार एक व्यक्ति के व्यक्तिगत स्वार्थ या हित होते है, उसी प्रकार एक राष्ट्र या राज्य के भी कुछ ऐसे हित या स्वार्थ होते है जिनकी पूर्ति के लिये राज्य सदैव प्रयत्नशील रहता है। प्रत्येक राज्य अपनी विदेश नीति को बनाते और व्यवहार में लाते समय इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखता है कि विदेश नीति इस प्रकार बनाई जाये जिससे राष्ट्र के अधिकाधिक हितों की पूर्ति होती रहे। भारत के राष्ट्रीय हित निम्नलिखित है-

(1) **भारत का आर्थिक पुनर्निर्माण और विकास**– इसके लिये शांति और पूँजी आवश्यक है, अतः भारत ने विश्व-शांति और निर्गुट विदेश नीति अपनाई है।

(2) **अखण्डता और सुरक्षा**– भारत का ब्रिटिश कूटनीति के कारण 1947 में विभाजन हो चुका है। अंग्रेज लोग भारत में ऐसे बीज बो गये हैं जिससे यह राष्ट्र खण्डित हो जाये और भविष्य में इसका और खण्डन होकर यह एक निर्बल राष्ट्र बना रहे। भारत का राष्ट्रीय हित अब इस बात में है कि भारत की वर्तमान सीमायें अपरिवर्तित रहें। इस हेतु हमने अब अपनी विदेश नीति को व्यवहार में सुरक्षा नीति के साथ जोड़कर क्षेत्रीय महाशक्ति बनने की नीति अपनाई है। हम अपनी सुरक्षा की दृष्टि से चाहते हैं, कि भारतीय उपमहाद्वीप में शांति और मित्रता का वातावरण रहे। इसके लिये हमने सार्क (दक्षिण एशियायी सहयोग संगठन) नामक संगठन बनने में सहयोग दिया है। अपनी सुरक्षा की दृष्टि से ही हम हिन्द महासागर को महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा से दूर रखकर एक शांति क्षेत्र बनाये रखना चाहते हैं।

(3) **भारतीय व्यापार में वृद्धि और संतुलन**– स्वतंत्रता के बाद भारत का औद्योगिक विकास हुआ है। इसके फलस्वरूप भारत में, जो विभिन्न प्रकार का सामान बनने लगा है, उसके विक्रय के लिये भारत को बाजार चाहिये। भारत साम्राज्यवादी देश नहीं है अतः उसे बाजार प्राप्त करने के लिये विभिन्न देशों की मित्रता ही सहायक हो सकती है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया में चीन, जापान और कोरिया उसके प्रतिस्पर्धी हैं इसलिये भारत को पश्चिमी एशिया के राष्ट्रों तथा अरब राष्ट्रों पर निर्भर रहना पड़ता है अतः अरबों की मित्रता हमारे लिये आवश्यक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राष्ट्रीय हित भारत की विदेश नीति को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं। भारत की विदेश नीति के व्यवहार और विकास पर राष्ट्रीय हितों का व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। सुरक्षा की आवश्यकता ने हमें सोवियत संघ की मित्रता पर मजबूर किया। तेल की आवश्यकता तथा भारतीय माल बाजारों ने हमें पश्चिमी एशिया तथा अफ्रीका के राष्ट्र के साथ मैत्री और उनका समर्थन करने पर विवश किया।

7. **भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले सामाजिक और सांस्कृतिक तत्व**– किसी देश की विदेश नीति को सामाजिक और सांस्कृतिक तत्व भी प्रभावित करते हैं। भारत एक परम्परावादी एवं अध्यात्मवादी देश है। यहाँ बौद्ध, हिन्दू, ईसाई आदि विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं। बौद्ध धर्म का प्राचीन काल में जापान, कोरिया, मंगोलिया, चीन, दक्षिण पूर्वी एशिया, श्रीलंका, अफगानिस्तान में काफी प्रचार-प्रसार हुआ है।

यहाँ भारत के सांस्कृतिक अवशेष आज भी मौजूद हैं। इन देशों से भारत सामाजिक और सांस्कृतिक आधार पर अपने रिश्ते बहुत अच्छे बना सकता है, इसके लिये सांस्कृतिक राजनय की आवश्यकता है। नेपाल एक हिन्दू देश है। भारत-नेपाल सम्बन्धों को भी यह तत्व सर्वाधिक प्रभावित कर सकता है। भारत की धर्म-निरपेक्ष नीति के कारण हम इस सांस्कृतिक विरासत से कोई लाभ नहीं उठा पाये हैं। हमारी नीति सर्व-धर्म सापेक्ष होनी चाहिये तथा भारत को इस सांस्कृतिक विरासत से लाभ उठाना चाहिये।

भारतीय संस्कृति और धर्म जिसका विश्व के विभिन्न भागों में सर्वाधिक प्रचार-प्रसार प्राचीनकाल में हुआ था। बौद्ध धर्म और तत्कालीन सभ्यता व संस्कृति थी। इसी सांस्कृतिक धरोहर को भुनाकर हम चीन, जापान, कोरिया, दक्षिणी पूर्वी एशिया, दक्षिणी एशिया से अपने सम्बन्धों को प्रगाढ़ बना सकते हैं परन्तु अभी तक भारत ने इस सांस्कृतिक राजनय पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है।

8. **भारत की विदेश नीति के निर्धारण में व्यक्तित्वों की महत्वपूर्ण भूमिका**– रीति-नीति निर्माण या नीति-निर्धारण एक महत्वपूर्ण प्रशासकीय प्रक्रिया है। यह ठीक है कि कोई भी पदाधिकारी परिस्थितियों के अनुसार नीतियों का निर्धारण करता है परन्तु यह भी सत्य है कि कभी-कभी पद पर आसीन महत्वपूर्ण व्यक्ति या अधिकारी अपने स्वयं के विचारों के अनुरूप भी नीतियों को ढाल लेते हैं और नीति-सम्बन्धी व्यवहार पर उस व्यक्ति विशेष की विशिष्ट छाप स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। कभी-कभी भौगोलिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों द्वारा निर्धारित विदेश नीति के महत्वपूर्ण सिद्धान्त भी जब व्यवहार में लाये जाते हैं तो उनका स्वरूप भिन्न होता है क्योंकि उनके व्यवहार पर उन समकालीन व्यक्तियों के व्यक्तिगत विचारों का गहरा प्रभाव पड़ता है जो नीति बनाने या उसे क्रियान्वयन के पक्ष के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े होते हैं। भारत की विदेश नीति के निर्माण और निर्धारण में स्वतंत्रता पूर्व के व्यक्तियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। वे हैं- महात्मा गाँधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, मानवेन्द्रनाथ राय, राम मनोहर लोहिया एवं सुभाषचन्द्र बोस। इनमें सर्वाधिक प्रभाव पंडित नेहरू का था। स्वतंत्रता के बाद भारत की विदेश नीति के निर्माण और उसे दिशा देने में पंडित जवाहरलाल नेहरू का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिनकी विशिष्ट छाप विदेश नीति पर स्पष्ट दिखाई देती है। विपक्षियों में स्वतंत्रता के बाद अटलबिहारी वाजपेयी, इन्द्रकुमार गुजराल, दिनेश सिंह, श्रीकृष्ण मेनन, मुहम्मद करीम छागला तथा डॉ. राममनोहर लोहिया की भारत की विदेश नीति निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। नौकर शाही का भारत की विदेश नीति और उसे दिशा देने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय नाम हैं- गिरजाशंकर वाजपेयी, के.एम. पणिक्कर, डी.पी. धर, जगत मेहता तथा जे.एन. दीक्षित, बृजेश मिश्र। इन महत्वपूर्ण नौकरशाहों के योगदान की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस प्रकार भारत की विदेश नीति के निर्माण, निर्धारण और उसे मोड़ देने में तथा दिशा प्रदान करने में महात्मा गाँधी से लेकर राजीव गाँधी तक महत्वपूर्ण राजनीतिज्ञों की तथा विदेश सेवा से जुड़े हुये अनेक राजनयिकों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वास्तव में व्यक्ति यदि एक प्रभावशाली व्यक्तित्व का स्वामी है तो वह परिस्थितियों से प्रभावित तो होता है परन्तु वह परिस्थितियों का दास नहीं बन पाता है। वह परिस्थितियों को भी अपने विचारों के अनुरूप बनाने का प्रयास करता है। नेहरू तथा श्रीमती गाँधी ने यही किया इसलिये भारत की विदेश नीति को वर्तमान स्वरूप देने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका मानी जा सकती है। डॉ. एन. के. श्रीवास्तव का मत है कि यदि संयोग से भारत के प्रथम प्रधानमंत्री कहीं सरदार पटेल या

सुभाषचन्द्र या मोरार जी देसाई बने होते या डॉ. राजेन्द्र प्रसाद होते तो भारत की विदेश नीति वर्तमान से थोड़ा हटकर अवश्य भिन्न होती, पर कुछ लोग इससे सहमत नहीं हैं।

उपरोक्त तत्व भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले आन्तरिक तत्व हैं, क्योंकि इनका सम्बन्ध देश की आन्तरिक व्यवस्था से है। इसके अतिरिक्त कुछ बाहरी तत्व भी किसी देश की विदेश नीति को प्रभावित करते है जैसे- पड़ौसियों की प्रवृत्ति, तात्कालिक अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति, अन्तर्राष्ट्रीय कानून, देश की राजनीति मे महाशक्तियों की रुचि, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, विदेशी मीडिया, विश्व जनमत तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठन इत्यादि।

किसी देश की विदेश नीति उपरोक्त कारणों से स्थितियों मे परिवर्तन होने के कारण बदलती रहती है। परिवर्तनशील विश्व में किसी राष्ट्र का व्यवहार स्थाई नहीं रह सकता। भारत एक विशाल, प्राचीन सभ्यता और संस्कृति वाला, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण देश है। इसी के अनुरूप भारत की विदेश नीति बाह्य तत्वों से भी प्रभावित होती रही है।

भारतीय विदेश नीति को प्रभावित करने वाले बाह्य तत्व- बाह्य तत्वों से यहाँ हमारा तात्पर्य बाह्य परिस्थितियाँ से है, इनमें निम्नलिखित तत्व मुख्य हैं-

(1) **अन्तर्राष्ट्रीय संगठन**- आधुनिक युग अन्तर्राष्ट्रीयता का युग है इसमें कोई राष्ट्र पूर्ण रूप से एकाकी या स्वावलम्बी नहीं रह सकता है। उसे दूसरे राष्ट्रों के साथ व्यवहार करना अनिवार्य है। इस व्यवहार में कभी-कभी मतभेद भी उत्पन्न हो जाते हैं। इन मतभेदों को दूर करने के क्रम में विवाद भी उत्पन्न हो जाते हैं। ये विवाद कभी इतने उग्र रूप धारण कर लेते हैं कि इनके निबटारे के लिये एक बाह्य संगठन या शक्ति चाहिये जो राष्ट्रों को आपस में लड़ने से रोके और इनके विवादों का पंचायती आधार पर निबटारा कर शान्ति बनाये रखे। इस प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन बहुत दिनों से बनते आ रहे हैं, परन्तु इस सम्बन्ध में 20वीं शताब्दि में बने दो संगठन महत्वपूर्ण हैं पहला था राष्ट्र संघ, दूसरा वर्तमान संगठन है- संयुक्त-राष्ट्र। ये संगठन यदि प्रभावशाली हैं तो किसी देश की विदेश नीति निर्धारण में इनकी अवहेलना नहीं की जा सकती। भारत की विदेश नीति के निर्धारण में संयुक्त-राष्ट्र संघ की महत्वपूर्ण भूमिका है। हमने संविधान में नीति निर्देशक-तत्वों में इसे महत्वपूर्ण स्थान दिया है और सदैव इसके तन-मन-धन से सहयोग का बीड़ा उठाया है। इसकी सफलता ही हमारी विदेश नीति का एक लक्ष्य है ताकि विश्व-शान्ति बनी रहे क्योंकि इसी में भारत का हित है। भारत की दक्षेस सम्बन्धी नीति भी इसी से प्रभावित है। राष्ट्रकुल भी बहुत दिनों तक भारत की विदेशनीति को प्रभावित करता रहा।

(2) **अन्तर्राष्ट्रीय कानून एवं न्याय व्यवस्था**- राष्ट्रों के मध्य व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए कोई बाध्यकारी शक्ति न होते हुये संधियां, कानून तथा स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार को नियंत्रित करने वाले कुछ नियमों का समूह अन्तर्राष्ट्रीय कानून कहलाता है। यह किसी देश की विदेश नीति को प्रभावित करने वाला एक शक्तिशाली महत्वपूर्ण बाह्य तत्व है क्योंकि सम्प्रभु होते हुये भी प्रत्येक राष्ट्र अपने वैदेशिक व्यवहार के निर्धारण में इस अन्तर्राष्ट्रीय कानून को ध्यान में रखकर ही अपनी विदेश नीति बनाता है। भारत जैसे सिद्धान्तवादी देश से कभी यह आशा नहीं की जा सकती कि उसकी विदेश नीति अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विरुद्ध होगी। भारत की मान्यता सम्बन्धी नीति, विवादों के निबटारे के शान्तिपूर्ण साधनों में विश्वास, पंचशील इत्यादि पर अन्तर्राष्ट्रीय कानून का स्पष्ट प्रभाव है। भारत ने इसी आधार पर मानवाधिकार आयोग की व्यवस्था की है। अतः हमारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार हमेशा कानून-सम्मत रहता है।

(3) **अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था**- आधुनिक युग आर्थिक या भौतिक युग भी है। इसमें एक देश आर्थिक दृष्टि से चाहते हुये भी आत्मनिर्भर नहीं हो सकता है। उसे दूसरे देशों से आर्थिक

व्यवहार, व्यापार, वाणिज्य करना अनिवार्य है। इस युग में एक विश्व अर्थव्यवस्था है जिस पर अभी पूंजीवादी तथा साम्राज्यवादी वर्चस्व कायम है। विश्व की सम्पूर्ण पूंजी टेक्नोलोजी एक विकसित राष्ट्रों के समूह के आधिपत्य में है। शेष देश विकासशील और निर्धन हैं। इन्हें विकसित देशों की कृपा पर निर्भर रहना पड़ता है। यह ठीक है कि विश्व के विभिन्न देश इस एकाधिकारी या पूंजीवादी साम्राज्यवादी व्यवस्था को बदलना चाहते हैं, साम्यवादी अर्थव्यवस्था विफल हो चुकी है। किसी भी देश को अपनी विदेश नीति विश्व के वर्तमान और बदलते आर्थिक सम्बन्धों को ध्यान में रखकर बनाना अनिवार्य है। भारत भी इससे अछूता नहीं है। प्रारम्भ में भारत ने साम्यवादी अर्थव्यवस्था से प्रभावित परन्तु विकास की आवश्यकता से प्रेरित सभी से आर्थिक सहयोग की नीति अपनाई परन्तु अब राजीव गांधी के काल से इसमें नया मोड़ आया है तथा इसे अब विश्व की वर्तमान अर्थव्यवस्था के अनुरूप ढाला जा रहा है।

भारतीय विदेश नीति को प्रभावित करने वाले बाह्य तत्व

1. अन्तर्राष्ट्रीय संगठन
2. अन्तर्राष्ट्रीय कानून एवं न्याय व्यवस्था
3. अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था
4. विश्व जनमत

(4) **विश्व जनमत**- किसी भी देश की विदेश नीति विश्व जनमत की अवहेलना नहीं कर सकती। विश्व जनमत उसे कभी-कभी ऐसे निर्णय लेने के लिये भी बाध्य कर सकता है जो कभी राष्ट्रीय हितों के भी विरुद्ध हो सकते हैं। आधुनिक युग में मानवाधिकार एक ऐसा ही मुद्दा है। रंग भेद नीति, जाति और नस्ल भेद नीति तथा निःशस्त्रीकरण इत्यादि भी ऐसी ही विश्व समस्यायें हैं जिन पर किसी राष्ट्र की विश्व जनमत की अवहेलना करना संभव नहीं होता। युद्ध और शान्ति भी विश्व जनमत से प्रभावित होते हैं। भारत जैसा आदर्शवादी विश्व-शान्ति का महान समर्थक कहा जाने वाला देश विश्व जनमत की अवहेलना नहीं कर सकता इसलिये श्रीमती इंदिरा गाँधी ने जब बंगलादेश के मामले में पाकिस्तान के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप की नीति अपनाई तो सर्वप्रथम अपने दूत भेजकर या स्वयं यात्रायें कर विश्व जनमत को यह कहकर अपने अनुकूल किया था, कि पाकिस्तान पूर्वी पाकिस्तान में अत्याचार कर उस पर अप्रत्यक्ष आक्रमण कर रहा है। इसी प्रकार आजकल भारत को विश्व जनमत के क्षेत्र में पाकिस्तान के साथ कश्मीर के प्रश्न पर अघोषित युद्ध लड़ना पड़ रहा है, क्योंकि पाकिस्तान कश्मीर मुद्दे को हर अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर उठाने का अवसर नहीं छोड़ता।

प्रश्न-6. राष्ट्रीय हित को परिभाषित कीजिये एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति मे विदेश नीति और राष्ट्रीय हित का महत्व समझाइये।

उत्तर- **राष्ट्रीय हित की परिभाषा**- मॉर्गेन्थाऊ के अनुसार, 'कोई भी राष्ट्र चाहे कितना ही शक्तिशाली हो, किसी भी विचारधारा का पोषक हो, यह अपनी विदेश नीति राष्ट्रीय हितों के आधार पर निर्धारित करता है। जो राष्ट्र इस तथ्य को ध्यान में नहीं रखता, उसका अस्तित्व कभी भी स्थायी नहीं हो सकता।'

राष्ट्रीय हित वह हित है जिसे राष्ट्र अपनी सुरक्षा और कल्याण के लिए आवश्यक मानता है, राष्ट्रीय हित उन सामान्य और सतत् उद्देश्यों को दर्शाता है जिनके लिए एक राष्ट्र कार्य करता है।

राष्ट्रीय हित की अवधारणा अस्पष्ट है क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र का राष्ट्रीय हित अलग-अलग होता है। इसका निर्धारण भी भौगोलिक और ऐतिहासिक आवश्यकताओं के आधार पर

किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन में राष्ट्रीय हित एक महत्वपूर्ण अवधारणा है–

मॉर्गेन्थाऊ के अनुसार, 'राष्ट्रीय हित विदेश नीति का प्रारंभिक स्तम्भ है।'

रेमन आरो के अनुसार, 'राष्ट्रीय हित की अवधारणा इतनी अस्पष्ट है कि यह अर्थहीन है या इसे अधिक से अधिक दिखावे की अवधारणा कहा जा सकता है।'

लॉर्ड पामरस्टन के अनुसार, 'हमारा कोई शाश्वत मित्र नहीं है और हमारा कोई शाश्वत शत्रु नही है। केवल हमारे हित शाश्वत हैं और हमें उन हितों को आगे बढ़ाना और बढ़ावा देना चाहिए।'

भारतीय विदेश नीति का प्रमुख उद्देश्य– ये निम्नवत् है–

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का प्रमुख उद्देश्य कोरा आदर्शवाद नहीं होता, बल्कि अपना राष्ट्रीय हित होता है और इसी के आधार पर विदेश नीति का निर्माण होता है। कोई भी देश, चाहे वह कितना ही शक्तिशाली तथा साधन सम्पन्न क्यों न हो अपनी सुरक्षा, अखण्डता और आर्थिक हितों की उपेक्षा नहीं कर सकता है। यही उसकी विदेश नीति का प्रारंभिक और अंतिम केन्द्र-बिन्दु तथा सफलता की कसौटी है। भारत की विदेश नीति का उद्देश्य भी यही है।

राष्ट्रीय हित की अवधारणा का अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विशेष महत्व है। यह विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण तत्व है। विदेश नीति की सफलता और विफलता का मूल्यांकन राष्ट्रीय हित के परिप्रेक्ष्य से ही किया जा सकता है। यदि विदेश नीति राष्ट्रीय हित की रक्षा करने में सफल होती है, तो उसे सफल विदेश नीति कहा जाता है और यदि वह राष्ट्रीय हित की रक्षा करने में विफल रहती है, तो उसे असफल विदेश नीति कहा जाता है। मोर्गेन्थाऊ के राजनीतिक दर्शन का मुख्य तत्व राष्ट्रीय हित की प्रधानता है। मोर्गेन्थाऊ ने राष्ट्रीय हित को 'शक्ति' कहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के दो महत्वपूर्ण तत्व हैं– राष्ट्रीय हित और संघर्ष। इसका महत्व इस बात से स्पष्ट है कि एक राष्ट्र के हित हमेशा दूसरे राष्ट्र के हितों से भिन्न होते हैं। परिणामस्वरूप राष्ट्रों के बीच संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। सभी राष्ट्र अपने हितों की पूर्ति से सम्बन्धित कार्य करते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विदेश नीति और राष्ट्रीय हित का महत्व– यह एक विवादास्पद प्रश्न है राष्ट्रीय हित विदेश नीति का उद्देश्य है या मूल्य। राष्ट्रहित को उद्देश्य मानने वाले विद्वानों के अनुसार यह स्थायी है। यह अवधारणा अपरिवर्तनीय है एवं शक्ति से जुड़ी है। इसे मूल्यवान अवधारणा मानने वाले विचारकों के अनुसार यह शक्ति के अलावा अन्य मूल्यों से जुड़ी अवधारणा है। **पैडलफोर्ड और लिंकन** के अनुसार राष्ट्रीय हित की अवधारणा समाज के बुनियादी मूल्यों से जुड़ी हुई है। इन मूल्यों के कुछ उदाहरण राष्ट्र का कल्याण, उसकी राजनीतिक मान्यताओं की सुरक्षा, राष्ट्रीय जीवन शैली, क्षेत्रीय अखण्डता और सीमाओं की सुरक्षा हैं। राष्ट्रीय हित की अवधारणा विदेश नीति का मूल सिद्धान्त है। विदेश नीति-निर्माण का प्रारंभिक बिन्दु राष्ट्रीय हित है। जब तक विश्व राजनीतिक रूप से राज्यों में विभाजित रहेगा तब तक विश्व राजनीति में राष्ट्रहित एक महत्वपूर्ण मुद्दा बना रहेगा। राष्ट्रीय हित अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की कुंजी है। किसी राष्ट्र के आदर्श और ऊँचे आकांक्षाएँ कितनी भी ऊँची क्यों न हों, वह अपनी विदेश नीति को राष्ट्रीय हित के अलावा किसी अन्य धारणा पर आधारित नहीं कर सकता। मोर्गेन्थाऊ के अनुसार राष्ट्रीय हित विदेश नीति की आत्मा है। यह विदेश नीति का है, की प्रेरणा एवं आधारशिला है। विदेश नीति राष्ट्रीय हितों के पक्ष में

विदेश नीति समय एवं परिस्थिति के अनुरूप तथा राष्ट्रीय हित की माँग के अनुसार संचालित की जाती है।

किसी भी राज्य की विदेश नीति शून्य मे स्थापित नहीं होती हैं, अर्थात् विदेश नीति का अध्ययन केवल हितों के संदर्भ में किया जाता है। राष्ट्रीय हित के अभाव में विदेश नीति का कोई महत्व नहीं है। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि विदेश नीति साधन है और राष्ट्रीय हित साध्य है।

प्रश्न–7. राष्ट्रीय हित की परिभाषा दीजिए तथा विदेश नीति के निर्धारक के रूप में राष्ट्रीय हित का क्या महत्व है? राष्ट्रीय हितों की उन्नति के उपाय लिखिए।

उत्तर– विदेश नीति के निर्धारक के रूप में राष्ट्रीय हित– विदेश नीति में राष्ट्रीय हित 'मुख्य अवधारणा' है। यह विदेश नीति-निर्माण का प्रारंभिक बिन्दु है। यदि विदेश नीति साध्य और साधन के बीच परस्पर क्रिया का परिणाम है, तो राष्ट्रीय हित, जो साध्य है, को स्पष्ट रूप से समझा जाना चाहिए। राष्ट्रीय हित वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का मूल मंत्र है।

जोसेफ फ्रैंकलिन ने 'राष्ट्रीय हित' नामक अपनी पुस्तक में 'राष्ट्रीय हित' शब्द के उपयोग को आकांक्षात्मक, परिचालनात्मक और व्याख्यात्मक और विवादास्पद के रूप में वर्गीकृत किया है।

आकांक्षात्मक स्तर पर, राष्ट्रीय हित का आशय अच्छे जीवन की दृष्टि से है एवं आदर्श लक्ष्यों से है जिन्हें प्रत्येक राष्ट्र साकार करना चाहेगा यदि यह संभव हो।

परिचालन स्तर पर, राष्ट्रीय हित का तात्पर्य उसके कुल हितों और अपनाई गई नीतियों से है। व्याख्यात्मक और विवादास्पद स्तर पर, इस अवधारणा का उपयोग विदेश नीति को समझाने, मूल्यांकन करने, तर्कसंगत बनाने या आलोचना करने हेतु किया जाता है।

राष्ट्रीय हित को 'सामान्य और निरन्तर लक्ष्य जिसके लिए एक राष्ट्र कार्य करता है' के रूप में वर्णित किया जाता है।

बंदोपाध्याय के अनुसार 'प्रत्येक राज्य का लक्ष्य अपनी क्षेत्रीय सीमाओं की सुरक्षा करके अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता और क्षेत्रीय अखण्डता को संरक्षित करना है।'

सभी राष्ट्रों को राष्ट्रीय सुरक्षा, राजनीतिक स्वतंत्रता और क्षेत्रीय अखण्डता की अन्तहीन खोज की आवश्यकता है। सुरक्षा के बाद आर्थिक हित को बढ़ावा देना आता है, जिसमें अनुकूल परिस्थितियों और व्यापार की शर्तों का संरक्षण या अधिग्रहण शामिल है।

सुरक्षा और आर्थिक समृद्धि मुख्य घटक हैं। किसी देश के राष्ट्रीय हित में अन्य तत्व भी शामिल हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति बनाए रखना, अन्तर्राष्ट्रीय कानून को बढ़ावा देना या वैश्विक संगठनों की स्थापना भी कुछ राज्यों, विशेषतः महान शक्तियों की विदेश नीति के उद्देश्यों में से एक हो सकती है।

राष्ट्रीय हितों की उन्नति के उपाय– राष्ट्रीय हित को बढ़ावा देने में तीन सबसे महत्वपूर्ण तरीके मदद करते हैं–

(1) **बलपूर्वक उपाय**– ये उपाय, यदि राज्य द्वारा अपनाए जाएँ, तो उसके राष्ट्रीय हित की उन्नति और प्रवर्तन में सहायता कर सकते हैं। इन उपायों को जबरदस्ती के उपाय माना जाता है, यदि वे चरित्र में हिंसक हैं और अन्तर्राष्ट्रीय संकट का कारण बन सकते हैं। राज्य को प्रभावित करने या बाध्य करने के लिए सीधे तौर पर लागू होने वाले उपायों में वास्तव में शारीरिक बल का प्रयोग शामिल होता है। इन उपायों में बल का वास्तविक प्रदर्शन भी शामिल है। उदाहरणार्थ, विश्व को यह बताने के लिए कि अमेरिका आतंकवाद के खिलाफ है और

अपनी ताकत का दावा करता है। उदाहरणार्थ जॉर्ज बुश जूनियर ने 9/11 के वर्ल्ड ट्रेड सेंटर के हमले के बाद अफगानिस्तान पर युद्ध की घोषणा की।

(2) गठबंधन– सामान्य हितों की रक्षा और बढ़ावा देने हेतु दो या दो से अधिक देशों के गठबंधन के कारण, इन सामान्य हितों की सुरक्षा एक कानूनी दायित्व बन जाती है जिसे सदस्य राज्य एक कर्तव्य के रूप में निभाने के लिए बाध्य होते हैं। इस प्रकार के गठबंधन बड़ी संख्या में राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा के लिए किए जा सकते हैं। गठबंधन की प्रकृति इस बात पर निर्भर करती है कि यह किस प्रकार के हितों की रक्षा करना चाहता है। इसलिए हम कह सकते हैं कि गठबंधन की प्रकृति और अवधि उन हितों की सापेक्ष ताकत पर निर्भर करती है।

(3) कूटनीतिक वार्ताएँ– ये वार्ताएँ सामान्यतः आपसी लेन-देन की प्रक्रिया के माध्यम से राज्य के भिन्न हितों में सामंजस्य स्थापित करने में सहायता करती हैं। कूटनीतिक वार्ताएँ तभी सफल होती हैं जब सम्बन्धित राज्यों के हित पूरक या सुसंगत हों। ऐसे मामलों में आपसी सौदेबाजी में समझौता हो सकता है। दूसरी ओर, यदि हित असंगत या परस्पर विरोधी हों तो आम बातचीत लगभग असंभव हो जाती हैं।

प्रश्न–8. गुटनिरपेक्षता की मूल धारणा क्या है? इसका आधार क्या है? इसकी विश्व नीति में भूमिका तथा आधुनिक युग में इसकी सार्थकता तथा महत्व बताइये।

अथवा

गुट–निरपेक्षता क्या है? गुट–निरपेक्षता किस प्रकार एक आन्दोलन बन गया है? इसकी प्रगति । विवेचना कीजिये।

उत्तर– गुट निरपेक्षता एक विदेश नीति या अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का सिद्धान्त है। इसे असंलग्नता भी कहते हैं। इसका सरल अर्थ विभिन्न शक्ति-गुटों से तटस्थ दूर रहते हुये अपनी स्वतंत्र निर्णय-नीति है। इसका अर्थ तटस्थता नहीं है क्योंकि गुट निरपेक्ष देश विश्व की घटनाओं के प्रति उदासीन नहीं रहते हैं बल्कि एक स्पष्ट रचनात्मक नीति का अनुसरण करते हैं जो विश्व-शान्ति की स्थापना में सहायक हो।

गुट निरपेक्षता द्वितीय विश्व युद्ध में अमेरिका और सोवियत संघ के नेतृत्व में बने हुये शीत युद्धीय गुटों से दूर रहने की नीति है। गुट निरपेक्षता कोई निष्क्रिय सिद्धान्त नहीं है, यह एक सक्रिय और स्वतंत्र सिद्धान्त है। इसका अर्थ यह नहीं है कि गुट निरपेक्ष राष्ट्र किसी से मैत्री नहीं रखेगा। इसका अर्थ तो केवल इतना है कि गुट निरपेक्ष राष्ट्र किसी भी मामले में स्वतंत्र विदेश नीति अपना सकता है, वह किसी प्रश्न पर चाहे किसी भी गुट का समर्थन कर सकता है, वह सैनिक गठबन्धनों से जैसे– नाटो-सीटो-सेन्टो और वारसा पेक्ट से पृथक रहने की नीति अपना सकता है।

गुट निरपेक्ष सिद्धान्त का जन्म– यह द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न हुआ विचार है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व दो गुटों में बंट गया था– एक गुट आंग्ल– अमेरिकी गुट था इसमें मुख्य रूप से पूर्व साम्राज्यवादी शक्तियां शामिल थीं। दूसरा गुट सोवियत संघ के नेतृत्व में साम्यवादी देशों का गुट था। दोनों के बीच शीत युद्ध प्रारम्भ हो गया था। इस काल में सोवियत संघ की नीति दुनियाँ के विभिन्न राष्ट्रों में साम्यवाद का प्रचार-प्रसार कर उसे साम्यवादी झण्डे के तले लाना था। इसके विपरीत संयुक्त राज्य अमेरिका और उसके साम्राज्यवादी पूँजीवादी साथियों ने सोवियत प्रभाव को बढ़ने से रोकने के लिये उसे घेरने की नीति अपनाई थी। इस नीति के तहत् आंग्ल-अमेरिकी गुट ने रूस को घेरने के लिये नाटो, सीटो, सेन्टो और एन्जस जैसे कई सैन्य-संगठन बनाये थे। इसकी प्रतिष्ठा में रूस ने भी 'वारसा पेक्ट' नामक संगठन बनाया था।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दुनियाँ में एक महत्वपूर्ण घटना और घटी, वह यह थी कि साम्राज्यवाद का विघटन प्रारंभ हो जाने से एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के राष्ट्र स्वतंत्र होना प्रारम्भ हुये। इन नव स्वतंत्र राष्ट्रों को उपरोक्त दोनों ही गुट अपने में शामिल हो जाने के लिये आकर्षित कर रहे थे ताकि उनकी शक्ति बढ़े।

ध्वजवाहक गुट निरपेक्ष राष्ट्र– नव स्वतंत्र राष्ट्रों में भारत एक विशाल राज्य था, मिस्र भी एक शक्तिशाली अरब राज्य था। पूर्वी यूरोप के देश यूगोस्लाविया को भी स्टालिन की उग्र आक्रामक नीति पसन्द नहीं आई, अतः उपरोक्त तीनों राष्ट्रों ने दोनों ही गुटों से अलग रहने की नीति अपनाई और इसे गुट निरपेक्ष नीति नाम दिया। इस प्रकार उपरोक्त तीनों राष्ट्र (भारत, मिस्र, यूगोस्लाविया) गुट निरपेक्ष नीति के प्रारम्भिक प्रतिपादक थे। इन्हें इस नीति का ध्वजवाहक कहा जा सकता है। इन्होंने इस नीति का अपने देशों की विदेश नीति के रूप में प्रतिपादन किया और 1955 में जब प्रसिद्ध बाण्डुंग- सम्मेलन में इसका प्रचार किया तो एशिया, आफ्रीका व लैटिन अमेरिका के नव स्वतंत्र राष्ट्रों को एक नया रास्ता अनुभव हुआ और उन्होंने भी गुट निरपेक्ष नीति स्वीकार कर ली। धीरे-धीरे यह गुट निरपेक्षता की नीति काफी लोकप्रिय हो गई और यह एक आन्दोलन बन गया। आज विश्व के 101 राष्ट्र इस गुट निरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य हैं। इसने कुछ देशों की नीति से अन्तर्राष्ट्रीय बनने की मंजिल कई कदमों में पूरी की है।

गुट निरपेक्ष आन्दोलन का विकास– गुट निरपेक्ष आन्दोलन का जन्म 1961 के बेलग्रेड-सम्मेलन में हुआ। इस प्रकार अब तक नौ सम्मेलन हो चुके हैं जिनका विवरण निम्नानुसार है-

प्रथम गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन, 1961– गुट निरपेक्ष आन्दोलन का प्रथम शिखर सम्मेलन, 1961 में बेलग्रेड (यूगोस्लाविया की राजधानी) में हुआ था। इसमें 25 राष्ट्रों ने भाग लिया था। इसमें भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू, मिस्र के राष्ट्रपति कर्नल नासिर तथा यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति मार्शल टीटो ने भाग लिया था। इस सम्मेलन की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें गुट निरपेक्षता के मापदण्ड तय हुये थे, इसमें 5 बातें तय की गईं। कोई राष्ट्र तब ही गुट निरपेक्ष कहला सकता है जब वह निम्नलिखित शर्तें पूरी करता हो-

(1) सदस्य-देश स्वतंत्र-नीति पर चलता हो। (2) सदस्य-देश उपनिवेशवाद का विरोध करता हो। (3) सदस्य-देश किसी सैनिक गुट का सदस्य न हो। (4) सदस्य-देश ने किसी ताकत के साथ द्विपक्षीय समझौता न किया हो। (5) सदस्य-देश ने किसी बड़ी ताकत को अपने क्षेत्र में सैनिक अड्डा बनाने की अनुमति न दी हो।

द्वितीय शिखर सम्मेलन, काहिरा (1964)– अक्टूबर, 1964 में काहिरा में गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का दूसरा शिखर सम्मेलन हुआ। इसमें 47 देशों ने भाग लिया। 11 पर्यवेक्षक थे। इसमें गुट निरपेक्ष क्षेत्र को बढ़ाने पर बल दिया गया। इसमें भारत के प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने भाग लिया, उन्होंने विश्व शान्ति के लिये पांच सूत्री प्रस्ताव रखा था। इस सम्मेलन में जारी घोषणा-पत्र की सोवियत संघ ने सराहना की।

तृतीय शिखर सम्मेलन, लुसाका (1970)– सितम्बर, 1970 में गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का तीसरा शिखर सम्मेलन अफ्रीका के लुसाका में हुआ। इसमें 54 देशों ने भाग लिया तथा 9 राज्यों ने पर्यवेक्षक के रूप में भाग लिया। इसमें आर्थिक प्रश्नों और निर्धनता पर विचार हुआ। उपनिवेशवाद के बाद नव-उपनिवेशवाद की भी आलोचना की गई। इसमें गुट निरपेक्ष आन्दोलन के स्थायी कार्यालय की बात कही गई, भारत ने इसका कड़ा विरोध किया।

चतुर्थ शिखर सम्मेलन, अल्जीरिया (1973)– सितम्बर, 1973 में 4 से 8 तारीख तक अल्जीरिया में गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का जो शिखर सम्मेलन हुआ उसमें 76 देशों ने भाग

लिया। इसमें अल्जीरिया और लीबिया ने गुट निरपेक्षता की नई परिभाषा करने का प्रस्ताव रखा और इसका स्थायी सचिवालय बनाने का प्रस्ताव भी आया, दोनो प्रस्ताव अस्वीकृत हुये।

पांचवा गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन, कोलम्बो (1976)– गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का पांचवा शिखर सम्मेलन 16 से 19 अगस्त, 1976 में श्रीलंका की राजधानी कोलम्बो में हुआ। इसमे 86 गुट निरपेक्ष देशों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व श्रीमती इन्दिरा गांधी ने किया। सम्मेलन में विगत् 15 वर्षों में हुये परिवर्तनों की समीक्षा की गई तथा सम्मेलन इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि गुट निरपेक्ष आन्दोलन की सार्थकता तथा विश्व संदर्भ में इसकी उत्तरोत्तर बढ़ती भूमिका के कारण इन देशों का यह उत्तरदायित्व बन जाता है कि वे गुट निरपेक्षता के मूल स्वरूप के संरक्षण के लिये सतत् जागरूक रहें तथा इसके सिद्धान्तों और नीतियों में अटूट श्रद्धा रखते हुये इस आन्दोलन की एकजुटता तथा अखण्डता की रक्षा के लिये इसके निर्णयों का आदर करें। इस शिखर सम्मेलन में गुट निरपेक्ष देशों का आर्थिक कार्यक्रम स्वीकार किया गया। आर्थिक, सामाजिक विकास के लिये एक एकता–कोष की बात स्वीकार की गई। यह सम्मेलन ऐतिहासिक इसलिये था क्योंकि निर्गुट आन्दोलन के इतिहास में पहली बार अपने अधिकारों की लड़ाई को पहला स्थान दिया गया तथा पारस्परिक मतभेदों को गौण स्थान दिया गया जिससे गुट निरपेक्ष देशों को विश्व–बिरादरी में बराबरी का दर्जा मिल सके।

गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का छठा शिखर सम्मेलन, (1979) हवाना सम्मेलन– गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का यह छठा शिखर सम्मेलन क्यूबा की राजधानी हवाना में 3 सितम्बर, 1979 से 9 सितम्बर, 1979 के बीच सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में आगामी तीन वर्ष के लिये इस आन्दोलन के अध्यक्ष क्यूबा के राष्ट्रपति फिदेल कास्त्रो बने। यह लैटिन अमेरिका में आयोजित पहला शिखर सम्मेलन था। पूर्ण सदस्यों के रूप में इसमें 94 राष्ट्रों ने भाग लिया। इसमें भारत का प्रतिनिधित्व भारत के तत्कालीन विदेशमंत्री श्री श्यामानन्दन मिश्र ने किया था। इसमें 94 देशों के प्रतिनिधि–मण्डल ने भाग लिया था। 18 राष्ट्रों ने अतिथि कै रूप में भाग लिया। यह सम्मेलन तनावपूर्ण वातावरण में हुआ क्योंकि इसमें कई विवादास्पद मुद्दे थे, जैसे– कम्पूचिया, मिस्र, इजराईल सन्धि, पश्चिम सहारा। इसमें गुट निरपेक्ष आन्दोलन के मूलभूत उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को सुरक्षित रखने के बारे में भी अनिश्चितता की स्थिति बन गई थी। हवाना सम्मेलन में पारित अन्तिम घोषणा–पत्र में एक आर्थिक तथा राजनीतिक खण्ड और कार्यवाही सम्बन्धी कार्यक्रम सम्मिलित थे।

गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का सातवां शिखर सम्मेलन (नई दिल्ली, 1983)– गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का सातवां शिखर सम्मेलन 7 से 11 मार्च, 1983 के बीच नई दिल्ली में हुआ। इसमें 101 राष्ट्रों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में आगामी तीन वर्ष के लिये इस आन्दोलन की अध्यक्षा भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी चुनी गईं। यह सम्मेलन बहुत ही नाजुक हालातों में हुआ परन्तु सदस्यों की उपस्थिति के रिकॉर्ड टूट गये। श्रीमती गांधी के अथक् परिश्रम से यह सम्मेलन सफल रहा।

गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का आठवां शिखर सम्मेलन, हरारे (1986)– गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का यह आठवां शिखर सम्मेलन 1986 में 1 सितम्बर से 7 सितम्बर के बीच हुआ। इसमें 101 देशों ने भाग लिया। इसमें रंगभेद पर करारा प्रहार किया गया। राबर्ट मुगांबे इसके अध्यक्ष बने। इसमें प्रीटोरिया सरकार द्वारा निकटवर्ती राज्यों पर लगाये गये आर्थिक प्रतिबन्धों से निबटने के लिये एक अफ्रीकी–कोष की स्थापना की गई। इसके अध्यक्ष भारत के प्रधानमंत्री राजीव गांधी बनाये गये। इसमें आन्तरिक मतभेद भी उभरे, जैसे– लीबिया के कर्नल गद्दाफी

ने इस आन्दोलन को छलावा बताया, परन्तु इसकी मुख्य उपलब्धि यह रही कि इसमें विकास के लिये विकासशील देशों का एक आयोग गठित किया गया। इसके अध्यक्ष तंजानिया के भूतपूर्व राष्ट्रपति ज्यूलियस न्यरेरे थे। कुल मिलाकर यह सम्मेलन अपने उद्देश्य में सफल रहा।

गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का नवां शिखर सम्मेलन, बेलग्रेड (1989)– गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का नवां शिखर सम्मेलन अपनी स्थापना के ठीक 28 वर्ष बाद पुनः यूगोस्लाविया की राजधानी बेलग्रेड में 4 सितम्बर से 8 सितम्बर, 1989 तक हुआ। इस सम्मेलन में 101 सदस्य उपस्थित थे। इस सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व श्री राजीव गांधी के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि–मण्डल ने किया। इस सम्मेलन में अफ्रीकी समस्याओं पर विचार हुआ और अफ्रीका पर भारत की अध्यक्षता में अफ्रीका कोष बनाया गया। इस कोष को जारी रखा गया। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का यह शिखर–सम्मेलन इत्तिफाक से 28 वर्ष बाद वहीं हुआ जहां से गुट निरपेक्षता ने एक आन्दोलन का रूप लिया था। यहां गुट निरपेक्ष आन्दोलन की अब तक की प्रगति का मूल्यांकन भी किया गया।

जकार्ता सम्मेलन, 1992– यह इण्डोनेशिया की राजधानी जकार्ता में सितम्बर, 1992 से 6 सितम्बर, 1992 तक चला था। इसमें 118 देशों ने भाग लिया, लेकिन इसमें केवल 5 सदस्यीय भारतीय प्रतिनिधिमंडल ने पी.वी. नरसिंह राव के नेतृत्व में भाग लिया। इसमें बूनेई, उजबेकिस्तान और फिलीपींस को इस आन्दोलन का सदस्य बनाया गया। म्यांमार (बर्मा) को आन्दोलन में पुनः शामिल कर लिया गया। सम्मेलन में पाकिस्तान द्वारा काश्मीर का मामला उठाने पर कई नेताओं ने उसकी आलोचना की। कई देशों ने वर्तमान विश्व अर्थव्यवस्था की आलोचना की जिसमें विकासशील देशों की हालत गुलामों जैसी हो गई है। इसमें हजैनिया, नोस्वानिया का मामला छाया रहा। लीबिया के राष्ट्रपति कर्नल गद्दाफी ने उनके देश पर अमेरिकी आक्रमण के समय गुट निरपेक्ष आन्दोलन की आलोचना की। सम्मेलन के बाद जकार्ता घोषणा जारी की गई। इस घोषणा–पत्र में आतंकवाद की निन्दा की गई और सदस्यों के आपसी विवाद शान्तिपूर्ण ढंग से निबटाने की बात कही गई इसमें इस्लामी राष्ट्रों ने अपना अलग सम्मेलन कर डाला।

12वां शिखर सम्मेलन– गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों का 12वां शिखर सम्मेलन 1998 में दक्षिण अफ्रीका की राजधानी डरबन में सम्पन्न हुआ। इसमें 114 राष्ट्रों ने सदस्य के रूप में भाग लिया तथा इसमें बेलारूस ने सदस्यता ग्रहण की।

13 वां शिखर सम्मेलन– गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों का 13वां शिखर सम्मेलन जो कि 2001 में बंगला देश की राजधानी ढाका में प्रस्तावित था लेकिन यह 24–25 फरवरी, 2003 को मलेशिया की राजधानी क्वालालम्पुर में सम्पन्न हुआ। इसमें भारत के पूर्वप्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने भारत का प्रतिनिधित्व किया। इराक पर अमेरिकी हमले की संभावनाओं के बीच सम्पन्न इस सम्मेलन में यही मुद्दा हावी रहा। इसमें एक निर्गुट घोषणा–पत्र भी जारी किया गया जिसमें एक–ध्रुवीय प्रवृत्ति थी तथा अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश द्वारा इराक–इरान व उत्तरी कोरिया को शैतान की धुरी कहे जाने की आलोचना की गई। इसमें निःशस्त्रीकरण के प्रयासों को आगे बढ़ाने की बात भी की गई थी।

14वाँ शिखर सम्मेलन– गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का 14वाँ शिखर सम्मेलन 15–17 सितम्बर, 2006 को क्यूबा की राजधानी हवाना मे सम्पन्न हुआ। इसे सम्बोधित करते हुये भारतीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने आतंकवाद के विरुद्ध दोहरे मानदण्ड अपनाये जाने का विरोध किया तथा कहा कि गुट–निरपेक्ष आंदोलन यदि अपनी प्रासंगिता बनाये रखना चाहता है तो उसे चरमपंथी ताकतों के विरुद्ध संगठित होना होगा तथा आतंकवादी ताकतों के विरुद्ध

खुली जंग छेड़नी होगी। इस सम्मेलन में दो नये सदस्य हैती तथा सेंट किट्स और नेविस शामिल किये गये। इससे सदस्य संख्या बढ़कर 118 हो गई है। आंदोलन का अगला शिखर सम्मेलन 2009 में मिश्र में होगा। संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा मार्च–अप्रैल, 2003 में इराक के विरुद्ध ऑपरेशन इराकी फ्रीडम के नाम से की गई अमेरिकी कार्यवाही और इरान व इराक तथा उत्तर कोरिया को शैतानियत की धुरी कहने पर गुटनिरपेक्ष आन्दोलन कोई प्रभावशाली प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर सका। डॉ. एन. के. श्रीवास्तव का मत है कि अब गुटनिरपेक्ष आन्दोलन निस्तेज हो गया है और भविष्य में वह कोई प्रभावशाली भूमिका निभा पायेगा इसकी भारत में अमेरिकी समर्थक राजग सरकार के होते हुये कोई आशा भी नहीं की जानी चाहिये क्योंकि भारत इसका ध्वजवाहक राष्ट्र है।

निष्कर्ष– गुट निरपेक्ष आन्दोलन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का शक्तिशाली और महत्वपूर्ण आन्दोलन है जिसने शीत युद्ध को प्रभावित किया है। यद्यपि गुट निरपेक्ष राष्ट्रों में फूट है और कुछ पाश्चात्य लोगों का मत था कि यह शीघ्र ही छिन्न–भिन्न हो जायेगा परन्तु यह एक शक्तिशाली आन्दोलन है और दिनों–दिन और अधिक शक्तिशाली बनता जा रहा है। इसकी कुछ कमजोरियां अवश्य हैं परन्तु यह इन पर धीरे–धीरे विजय प्राप्त कर लेगा।

उपरोक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि गुट निरपेक्ष आन्दोलन का प्रारम्भ 1948–49 में पंडित जवाहर लाल नेहरू, मिस्त्र के तत्कालीन राष्ट्रपति नासिर तथा यूगोस्लाविया के तत्कालीन राष्ट्रपति मार्शल टीटो के नेतृत्व में शुरू हुआ था। इसे प्रारम्भ में एक छोटे से पौधे के रूप में पंडित नेहरू, नासिर और टीटो ने लगाया था।

क्या आज भी गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की कोई सार्थकता शेष बची है– यह प्रश्न इसलिये महत्वपूर्ण है क्योंकि 1961 में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन ने एक संस्थात्मक रूप ग्रहण कर लिया था और एक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक संस्था के रूप में यह आज भी जीवित है। यद्यपि प्रारम्भ में यह एक गुटीय राजनीति (अन्तर्राष्ट्रीय) की प्रतिक्रिया था परन्तु आज यह तीसरी और चौथी दुनियाँ के राष्ट्रों का एक अलग मंच है, जिसमें ये सब समय–समय पर या प्रति तीसरे वर्ष एकत्रित होकर अपनी आपसी समस्याओं पर विचार–विमर्श करके उनका हल करने का असफल प्रयास करते रहते हैं क्योंकि हमें मालूम है गुटनिरपेक्ष आन्दोलन आज तक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की किसी समस्या का समाधान नहीं ढूंढ पाया है।

इस आन्दोलन का जन्म आंग्ल–अमेरिका गुट तथा सोवियत सैन्य स्थापित गुटों की प्रतिक्रिया था। इसे सैन्य गुटबन्दी से दूर रहने की स्वतंत्र विदेश नीति का नाम देकर शुरू किया गया था, इसलिये इसका नाम गुटनिरपेक्ष आन्दोलन पड़ा। परन्तु अब न वे दोनों गुट हैं और न शीत युद्ध। तब भला इस नाम के संगठन का क्या महत्व और सार्थकता है? इसका नाम तृतीय और चतुर्थ राष्ट्रों का समूह रखकर इसे सही नाम दिया जाये। यह प्रश्न कम से कम अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के छात्रों के लिये तो महत्वपूर्ण है ही क्योंकि इसके नाम से भ्रम उत्पन्न होता है।

इस सम्बन्ध में वर्तमान यथार्थवादी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के युग में इस नाम के ढकोसले को छोड़कर तीसरी दुनियाँ और चौथी दुनियाँ के राष्ट्रों को इसका नाम भी बदल कर, इसके व्यापक नये उद्देश्य तय कर इसका संविधान भी बदलना चाहिये और कार्य–प्रणाली भी। सैन्य गुटों के समाप्त हो जाने के बाद तथा एक ध्रुवीय विश्व–व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद अब गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की कोई सार्थकता शेष नहीं रह गई है।

प्रश्न–9. 'भू–आर्थिक रणनीति' से क्या आशय है? भारत के आर्थिक उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

अथवा

भारत की विदेश नीति और भू–अर्थव्यवस्था के वितरण को समझाइये।

उत्तर– शीत युद्ध की समाप्ति के बाद 'भू–अर्थशास्त्र' शब्द पहली बार प्रमुखता से आया। यह आर्थिक और वाणिज्यिक अवसरों, व्यापक राजनीतिक और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों और सैन्य क्षमताओं सहित अपने रणनीतिक हितों के एक देश द्वारा अनुसरण को दर्शाता है। यह दृष्टिकोण अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में आर्थिक कारकों के बढ़ते महत्व में निहित है। इस प्रकार भू–अर्थशास्त्र दृष्टिकोण तेजी से बदलती विश्व व्यवस्था के संदर्भ में विभिन्न देशों और क्षेत्रों के साथ अपने बहुआयामी सम्बन्धों में भारत की आर्थिक कूटनीति को एकीकृत करने के महत्व पर जोर देता है।

नरेन्द्र मोदी के सत्ता में आने से भारत की विदेश नीति में काफी परिवर्तन आए क्योंकि प्रधानमंत्री मोदी ने देश के आर्थिक सुधार और विकास को बढ़ावा देने हेतु नए विदेशी सम्बन्धों की प्रवृत्ति को आधार माना। अपने भू–आर्थिक विचारों को लागू करने के लिए, मोदी ने पिछले चार वर्षों में कई पहलें और परियोजनाएँ शुरू की हैं।

'भू–राजनीति' का अर्थ– 'किसी देश का आकार, स्थिति आदि किस प्रकार उसकी शक्ति और अन्य देशों के साथ उसके सम्बन्धों को प्रभावित करते हैं इसका अध्ययन करना भू–राजनीति कहलाती है।' भू–राजनीति का सम्बन्ध राजनीति से है और जिस प्रकार से भूगोल राजनीति या देशों के बीच सम्बन्धों को प्रभावित करता है उसी प्रकार राजनीतिक गतिविधियाँ किसी देश या दुनिया के क्षेत्र की भौतिक विशेषताओं से प्रभावित होती हैं। ये घटनाक्रम उस क्षेत्र की भू–राजनीति पर बड़ा प्रभाव डाल रहे हैं।

विदेश नीति और भू–अर्थव्यवस्था– सन् 1947 से भारत की विदेश नीति का लक्ष्य क्षेत्रीय और वैश्विक दोनों दृष्टि से राजनीतिक स्थिरता को मजबूत करना, आर्थिक विकास को बढ़ावा देना और औपचारिक गठबंधन में शामिल होने से बचना है। 20वीं और 21वीं सदी के मोड़ पर विदेश नीति का आर्थिक पक्ष निरन्तर मजबूत हो रहा है और भू–आर्थिक हित सामने आए हैं।

प्रधानमंत्री मोदी के भू–आर्थिक उद्देश्य– प्रधानमंत्री मोदी का मुख्य लक्ष्य भारत की अर्थव्यवस्था को बदलना और इसकी उभरती हुई महान शक्ति की स्थिति को सुदृढ़ता प्रदान करना है। इस उद्देश्य से, सितम्बर 2014 में उन्होंने देश को विदेशी निवेश के माध्यम से विनिर्माण केन्द्र में बदलने हेतु मेक इन इंडिया कार्यक्रम शुरू किया। इसके अलावा, ऊर्जा सुरक्षा, बुनियादी ढाँचे के विकास और व्यापार के विस्तार पर भी प्राथमिकता से ध्यान दिया। सामान्य तौर पर, भू–आर्थिक योजनाओं की प्राप्ति निम्न तीन स्तम्भों पर टिकी हुई है–

(1) इसमें उभरते भारत के लिए दक्षिण एशिया में अग्रणी भूमिका निभाना एक पूर्व शर्त है। यह 'पड़ोसी प्रथम' नीति में व्यक्त किया गया है।

(2) मोदी का दूसरा उद्देश्य पूर्व और दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों के साथ सहयोग को मजबूत करना है, जो एक्ट ईस्ट पॉलिसी की पहचान है।

(3) भारत को एक नौसैनिक शक्ति के रूप में पहले की तुलना में कहीं अधिक महत्व मिला और हिन्द महासागर क्षेत्र के विकास को भी महत्व मिला।

(1) पड़ोस की पहली नीति– मोदी जी भारत को वैश्विक शक्ति बनाना चाहते हैं। इस हेतु उन्होंने 1 मई, 2014 में उद्घाटन समारोह में दक्षिण–एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) के सदस्य देशों से द्विपक्षीय वार्ता के बाद, 5 मई को भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान प्राधिकरण ने दक्षिण–एशियाई देशों के बीच संचार विकसित करने हेतु भारत द्वारा निःस्वार्थ

भाव से आसपास (पड़ोसी) के देशों के बीच संचार विकसित करने हेतु दक्षिण एशिया उपग्रह को कक्षा में स्थापित किया।

मोदी ने सत्ता में आने के बाद भूटान से शुरू करके पड़ोसी देशों की अनेक यात्राएँ कीं, जिसमें उनका उद्देश्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों द्वारा आर्थिक सहयोग को मजबूत करना था। जहाँ तक भूटान, नेपाल और बांग्लादेश का प्रश्न है, भारतीय निवेश में वृद्धि और क्षेत्रीय कनेक्टिविटी में सुधार भी महत्वपूर्ण उद्देश्य थे। बांग्लादेश, भूटान, भारत और नेपाल की चार-शक्ति उप-क्षेत्रीय पहल के कर्त्तव्यों में व्यापार का विकास और उत्तर दक्षिण दिशात्मक संचार चैनलों की स्थापना शामिल है, जबकि जून 2015 में सम्पन्न मोटर वाहन समझौता एक महत्वपूर्ण कदम है। भारत सरकार ने बांग्लादेश, भूटान और नेपाल को जोड़ने वाले 558 किलोमीटर लम्बे सड़क नेटवर्क के निर्माण और विकास हेतु एक विलियन डॉलर से अधिक का आवंटन किया, जिसका 50% एशियाई विकास बैंक द्वारा वित्त पोषित है।

अन्तर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारा परियोजना में ईरान एक निर्णायक भूमिका निभाता है, जिसका मुख्य उद्देश्य मध्य एशिया के माध्यम से रूस, ईरान और भारत को जोड़ना है। ईरान अन्तर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारा की स्थापना से यह संभव हो जाएगा, क्योंकि भारत के अनुसार, वर्तमान में उपयोग किए जाने वाले वाणिज्यिक मार्गों की तुलना में दूरी 40% कम हो जाएगी, जिसके परिणामस्वरूप लागत में 30% की कमी हो गी।

वर्तमान में, भारत और रूस के बीच ग्रीन कॉरिडोर की स्थापना और टीआईआर कन्वेशन में भारत के शामिल होने से पहले से ही सीमा शुल्क निकासी की सुविधा मिलती है और भविष्य में और अधिक सरलीकरण की आशा की जा सकती है।

(2) **'एक्ट ईस्ट' नीति–** वर्ष 1991 में नरसिम्हा राव सरकार ने इसकी घोषणा की थी और उसके बाद की सरकारों ने सदैव इसे लागू करने का प्रयास किया। इस अवधारणा का सार यह है कि भारत को दक्षिण-पूर्वी देशों के साथ रणनीतिक और आर्थिक दोनों दृष्टि से समेकित साझेदारी सम्बन्ध स्थापित करने और क्षेत्र में बढ़ते चीन को सन्तुलित करने की आवश्यकता है। नवम्बर 2014 में मोदी सरकार ने आसियान देशों के साथ कड़े सहयोग के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को मजबूत किया और सक्रिय कार्रवाई पर जोर देते हुए, पहले की शब्दावली को 'एक्ट ईस्ट' नाम दिया।

(i) म्यांमार के साथ भारत का सम्बन्ध– 'पड़ोसी प्रथम' नीति का पूरक बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि आर्थिक दृष्टि से इसका अर्थ दिल्ली के लिए दक्षिण-पूर्व एशिया का द्वार है। इस रण से भारत सरकार ने शुरू से ही कनेक्टिविटी में सुधार करने का लक्ष्य रखा है क्योंकि युक्त सड़कों और रेलवे की कमी के कारण दक्षिण-पूर्व एशिया में व्यापार भी काफी सीमा तक प्रतिबंधित है। इसलिए, भारत-म्यांमार-थाईलैण्ड विपक्षीय राजमार्ग का निर्माण अभी भी किय जा रहा है और इसे ईस्ट-वेस्ट इकोनॉमिक कॉरिडोर के नाम से लाओस, कंबोडिया और वियतनाम की ओर बढ़ाया जाएगा। एक और महत्वपूर्ण पहल कलादान परियोजना है, जो कोलकाता को समुद्र पर सितवे से, फिर सितवे को कलादान नदी के माध्यम से लशियो से और अन्त में लशियो को एक सार्वजनिक सड़क पर मिजोरम से जोड़ेगी।

(ii) सिंगापुर-भारत सम्बन्ध– सिंगापुर-भारत के सबसे बड़े विदेशी निवेशकों में से एक है, इसलिए, दोनों देशों के बीच सम्बन्धों पर आर्थिक सहयोग हावी रहा। हालांकि, 2016 में दोनों पक्षों ने 'रणनीतिक सम्बन्ध' की स्थापना से सम्बन्धित एक समझौते पर हस्ताक्षर किए,

जिससे राजनीतिक, रक्षा और सैन्य-सहयोग के लिए पर्याप्त अवसर मिल सके। सिंगापुर भारत के साथ व्यापक आर्थिक साझेदारी पर हस्ताक्षर करने वाला पहला आसियान देश था।

(iii) वियतनाम-भारत सम्बन्ध– जहाँ तक वियतनाम का प्रश्न है, राजनीतिक और रक्षा सहयोग के अलावा, भारत दक्षिण चीन सागर में कार्बन-हाइड्रोजन स्रोतों में रूचि रखता है। द्विपक्षीय व्यापार में निरन्तर वृद्धि के साथ-साथ वियतनामी बाजार में भारतीय पूंजी का विस्तार भी दोनों पक्षों का साझा हित है। 2022-23 के मध्य 14.70 विलियन अमेरिकी डॉलर के द्विपक्षीय व्यापार के साथ वियतनाम भारत का 23वाँ सबसे बड़ा वैश्विक व्यापार भागीदार और आसियान देशों में 5वाँ सबसे बड़ा भागीदार है। आसियान के साथ भारत के कुल व्यापार में वियतनाम की भागीदारी 11.2% है।

(iv) जापान-भारत सम्बन्ध– पूर्वी-एशियाई देशों के लिए इस नीति का उद्घाटन मुख्य रूप से दक्षिण कोरिया और जापान पर केन्द्रित था। मई 2015 में मोदी की सियोल यात्रा के दौरान दोनों पार्टियाँ अपने सहयोग को विशेष रणनीतिक सम्बन्धों के स्तर तक विकसित करने पर सहमत हुईं। मेक इन इंडिया कार्यक्रम के तहत, दोनों सरकारें 2017 में कुल 2 विलियन डॉलर मूल्य के युद्धपोत बनाने पर भी सहमत हुईं।

2014 में मोदी की टोक्यो यात्रा से जापान के साथ सहयोग और गहरा हुआ। पार्टियों द्वारा विशेष रणनीतिक और वैश्विक साझेदारी पर समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद, आर्थिक सम्बन्ध पुनर्जीवित होने लगे। जापान अगले 5 वर्षों में भारत में 35 विलियन डॉलर का निवेश करने की योजना बना रहा है, जिसमें स्मार्ट सिटी परियोजनाएँ और दिल्ली-मुंबई औद्योगिक कॉरिडोर शामिल हैं। दिसम्बर 2015 में मोदी ने पुष्टि की कि उनका लक्ष्य जापानी योगदान के साथ शिंकानसेन तकनीक का उपयोग करके मुंबई-अहमदाबाद हाई-स्पीड रेल का निर्माण करना है।

(v) चीन-भारत सम्बन्ध– चीन के साथ मोदी ने घनिष्ठ वाणिज्यिक और आर्थिक सहयोग का रूख अपनाया। परिणामस्वरूप, चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने 2014 में भारत का दौरा किया। इसके परिणामस्वरूप व्यापार घाटा भी कम हुआ। मोदी को चीनी बुनियादी ढाँचे के निवेश में भी रूचि थी, क्योंकि चीन ने हाई-स्पीड रेल और अन्य परियोजनाएँ शुरू करने की परिकल्पना की थी, जिनका मूल्य लगभग 100 विलियन डॉलर है।

(3) **भू-राजनीतिक कारक–** हमें भू-आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के दौरान, देश के भू-राजनीतिक हितों पर भी नजर रखनी होगी, जिसका अर्थ है कि दोनों देशों का उचित सामंजस्य ही भारत की सफलता का प्रतीक है। कुछ मतों के अनुसार, मोदी मंत्रिमंडल ने अब तक एक स्पष्ट भू-राजनीतिक दृष्टि स्थापित नहीं की है और इसके बिना भू-आर्थिक उद्देश्यों को प्रगट करने वाली उनकी विदेश नीति लम्बे समय तक सफल नहीं हो सकती है। चीन, अपनी आक्रामक विदेश नीति के साथ, भारत के लिए एक बड़ी चुनौती है, क्योंकि सीमा विवाद से परे, बीजिंग के वैश्विक भू-आर्थिक उद्देश्यों का प्रतिनिधित्व करने वाली 'वन बेल्ट वन रोड' पहल भी अधिक आपसी दुविधा का कारण बनती है। मोदी सरकार चीन के भारतीय और क्षेत्रीय बुनियादी ढाँचे के निवेश को केवल आर्थिक दृष्टि से सही साबित करेगी। हालांकि, भू-राजनीतिक विचारों के कारण भारत इस मेगाप्रोजेक्ट में भाग लेने का इच्छुक नहीं है, क्योंकि यह बांग्लादेश-चीन-भारत-म्यांमार आर्थिक गलियारे जैसे विचारों को साकार करने में बाधा बन सकता है। चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (जो भारत के दावे वाले और पाकिस्तान द्वारा नियंत्रित कश्मीर से होकर गुजरेगा) को भी भारत के विरोध का सामना करना पड़ा है। हाल ही में, संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ भारत के सम्बन्धों में

काफी सुधार हुआ है। हालांकि, डोनाल्ड ट्रम्प की नीति, अमेरिका–रूस सम्बन्ध तथा चीन और अमेरिका के बीच सम्बन्धों में बदलाव भविष्य में भारत के भू–राजनीतिक उद्देश्यों को काफी सीमा तक प्रभावित कर सकते हैं।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मोदी सरकार की विदेश नीति और भू–आर्थिक रणनीति से विगत तीन वर्षों में अनेक आशाजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं।

प्रश्न–10. भारत की 'पूर्व की ओर देखो' नीति को समझाइए। इस नीति के क्या उद्देश्य हैं?

अथवा

भारत की पूर्वान्मुख नीति (पूर्व की ओर देखो नीति) के बारे में महत्वपूर्ण तथ्यों की व्याख्या कीजिये। 'लुक ईस्ट पॉलिसी' का उद्देश्य क्या है?

उत्तर– 'पूर्व की ओर देखो नीति' भारत द्वारा दक्षिण–पूर्वी एशिया के देशों के साथ बड़े पैमाने पर आर्थिक और सामरिक सम्बन्धों को विस्तार देने, भारत को एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्थापित करने और इस इलाके में चीन के प्रभाव को सन्तुलित करने के उद्देश्यों से बनाई गई नीति है।

पहली बार 1992 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव ने भारत की 'पूरब की ओर देखो नीति' अपनाई थी। तब से यह नीति भारत की विदेश नीति का प्रमुख अंग बन चुकी है। यह नीति भारत की विश्व दृष्टि तथा उभरती हुई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में भारत के स्थान के प्रति उसकी सोच में एक रणनीतिक बदलाव की ओर संकेत करती है।

यह नीति विविध क्षेत्रों में बहुमुखी प्रयासों को प्रोत्साहित करती है, जैसे– उन्नत संचार, व्यापार एवं निवेश प्रोत्साहन तथा सांस्कृतिक आदान–प्रदान इत्यादि। इस नीति के अन्तर्गत जो महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, उसमें चीन, म्यांमार, बांग्लादेश, थाईलैण्ड तथा आसियान देशों के साथ संवाद या व्यापार प्रारम्भ करना है।

इस नीति का उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रीय समूहों या संगठनों जैसे आसियान पूर्व एशिया सम्मेलन बिम्सटेक आदि के साथ रचनात्मक सहयोग को आगे बढ़ाना है।

आर्थिक उदारीकरण और शीत युद्ध–युग की नीतियों एवं गतिविधियों से दूर जाने के साथ–साथ भारत की रणनीति ने नजदीकी आर्थिक और वाणिज्यिक सम्बन्ध बनाने, रणनीतिक तथा सुरक्षा सहयोग बढ़ाने और ऐतिहासिक सांस्कृतिक और वैचारिक सम्बन्धों पर जोर देने पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है। भारत ने व्यापार, निवेश और औद्योगिक विकास के लिए क्षेत्रीय बाजार बनाने तथा विस्तार करने की माँग की। इसने चीन के आर्थिक और रणनीतिक प्रभाव के विस्तार से चिंतित देशों के साथ रणनीतिक एवं सैन्य सहयोग भी आरम्भ किया।

नवम्बर 2014 में घोषित 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' 'लुक ईस्ट पॉलिसी' का अपग्रेड है।

(1) यह विशाल एशिया–प्रशांत क्षेत्र के साथ विभिन्न स्तरों पर आर्थिक, रणनीतिक और सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने की एक राजनयिक पहल है।

(2) इसमें द्विपक्षीय, क्षेत्रीय और बहुपक्षीय स्तरों पर कनेक्टिविटी, व्यापार, संस्कृति, रक्षा और लोगों से लोगों के बीच सम्पर्क के क्षेत्र में दक्षिण–पूर्व एशियायी देशों के साथ गहन और निरन्तर जुड़ाव शामिल है।

'पूर्व की ओर देखो' नीति के उद्देश्य– इस नीति का उद्देश्य आर्थिक सहयोग, सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ावा देना और सक्रिय तथा व्यावहारिक दृष्टिकोण के साथ भारत–प्रशांत क्षेत्र

के देशों के साथ रणनीतिक सम्बन्ध विकसित करना और इस प्रकार उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के आर्थिक विकास में सुधार करना जो कि दक्षिण–पूर्व एशिया क्षेत्र का प्रवेश द्वार है।

भारत की पूर्वोन्मुख नीति के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य– ये निम्नवत् हैं–

(1) 'पूर्व की ओर देखो' नीति एशियायीकरण की सामग्री के साथ आसियान और पूर्वी एशियाई देशों से जुड़ती है।

(2) भारत ने पूर्वी एशियाई देशों के साथ अनेक बहुपक्षीय समझौते किए हैं जिससे भारत की 'एक्ट ईस्ट नीति' को बढ़ावा मिला है।

(3) महत्वपूर्ण द्वि–पक्षीय सम्बन्ध– (अ) भारत–चीन सम्बन्ध, (ब) भारत–म्यांमार सम्बन्ध, (स) भारत–श्रीलंका सम्बन्ध।

(4) अन्य मंच, क्षेत्रीय समूह या मंच जिन्होंने भारत की 'पूर्व की ओर देखो' नीति का समर्थन किया है, उनका उल्लेख नीचे किया गया है–

(i) बीसीआईएम– बांग्लादेश, चीन, भारत और म्यांमार आर्थिक गलियारा।

(ii) बिम्सटेक– बंगाल की खाड़ी बहु–क्षेत्रीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग की पहल।

(iii) आसियान– दक्षिण–पूर्वी एशियाई देशों का संघ।

(iv) साटा– दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र।

(v) एमजीसी– मेकांग–गंगा सहयोग।

(vi) ईएएस– पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन।

(5) सन् 2004 में गुवाहाटी में बाटम (इंडोनेशिया) तक पूर्व की ओर देखो नीति भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों, म्यांमार, थाईलैण्ड, लाओस, वियतनाम, कंबोडिया, मलेशिया और सिंगापुर से गुजरने वाली ट्रांस–एशियन कार रैली भारत के स्वरूप के आगमन का एक महत्वपूर्ण संकेत थी।

(6) भारत की पूर्वोन्मुख नीति को बढ़ावा देने वाली अनेक सरकारी पहल हैं–

(i) सिंगापुर से इस्तांबुल तक शुरू होने वाला ट्रांस–एशियाई राजमार्ग भारत से होकर गुजरता है।

(ii) म्यांमार, बांग्लादेश और भारत के बीच 800 किमी. लम्बी ट्रांस–नेशनल गैस पाइप लाइन।

(iii) दिल्ली से हनोई तक ट्रांस–एशियाई रेलवे।

प्रश्न–11. 'लुक ईस्ट पॉलिसी' का पूर्वी एशिया तथा चीन के साथ सम्बन्ध बताइये तथा मोदी प्रशासन के संदर्भ में इस नीति को समझाइए।

उत्तर– (1) पूर्वी एशिया के साथ सम्बन्ध– भारत ने फिलीपींस, सिंगापुर, वियतनाम और कम्बोडिया के साथ भी सुदृढ़ वाणिज्यिक, सांस्कृतिक और सैन्य सम्बन्ध स्थापित किए हैं। भारत ने श्रीलंका और थाईलैण्ड के साथ मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किए और उनके साथ अपना सैन्य सहयोग भी बढ़ाया। इसके पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं के साथ अनेक मुक्त व्यापार समझौते हैं, जिनमें मलेशिया के साथ व्यापक आर्थिक सहयोग समझौता और थाईलैण्ड के साथ अर्ली हार्वेस्ट स्कीम शामिल है, जबकि यह जापान, दक्षिण कोरिया के साथ समझौतों पर बातचीत कर रहा है। भारत में विदेशी निवेश के प्रमुख स्रोतों में दक्षिण कोरिया और जापान प्रमुख हैं।

(2) चीन के साथ सम्बन्ध– जबकि भारत और चीन रणनीतिक प्रतिद्वन्द्वी बने हुए हैं। भारत की 'पूर्व की ओर देखो' नीति में चीन के साथ महत्वपूर्ण मेलजोल शामिल हैं। वर्ष

1993 में, भारत ने चीनी नेताओं के साथ उच्च-स्तरीय वार्ता शुरू की और विश्वास-निर्माण के उपाय स्थापित किए। सन् 2006 में चीन और भारत ने 1982 के युद्ध के बाद पहली बार सीमा पार व्यापार के लिए नाथुला दर्रा खोला। 21 नवम्बर, 2006 को भारतीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और चीनी राष्ट्रपति हू जिंताओ ने सम्बन्धों में सुधार और लम्बे समय से चले आ रहे विवादों को हल करने हेतु 10-सूत्रीय संयुक्त घोषणा जारी की। चीन और भारत के बीच व्यापार प्रतिवर्ष 50% बढ़ जाता है। हालांकि, पाकिस्तान के साथ चीन के घनिष्ठ सम्बन्ध, सिक्किम के भारत के एकीकरण के बारे में संदेह और अरुणांचल प्रदेश पर चीन के दावे ने द्विपक्षीय सम्बन्धों में सुधार की संभावनाओं को कम किया है।

मोदी प्रशासन के अन्तर्गत एक्ट ईस्ट नीति– मोदी प्रशासन के अन्तर्गत एक्ट ईस्ट नीति निम्नवत् है–

(1) एक्ट ईस्ट पॉलिसी ने बुनियादी ढाँचा परियोजनाएँ शुरू कीं, जैसे अगरतला-अखौरा रेल परियोजना (उत्तर-पूर्वी भारत और बांग्लादेश को जोड़ने वाला पहला रेलमार्ग) और एशियाई त्रिपक्षीय राजमार्ग (म्यांमार के माध्यम से मोरेह, भारत को थाईलैण्ड से जोड़ने वाला एक नया रेलमार्ग)। इन लुक ईस्ट नीति परिवर्तनों ने दक्षिण चीन सागर और हिन्द महासागर दोनों में चीनी प्रभुत्व का मुकाबला करने हेतु फिलीपींस, मलेशिया और वियतनाम के साथ रणनीतिक साझेदारी में सुधार किया।

(2) भारत की 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' विशाल एशिया-प्रशांत क्षेत्र के साथ विभिन्न स्तरों पर आर्थिक, रणनीतिक और सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने की एक राजनयिक पहल है। यह एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में अपनी स्थिति को मजबूत करने और पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना के रणनीतिक प्रभाव का प्रतिकार करने के लिए दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ व्यापक आर्थिक और रणनीतिक सम्बन्ध विकसित करने का एक प्रयास है।

(3) भारत की 'पूर्व की ओर देखो नीति' पूर्व प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा द्वारा शुरू की गई। यह नीति 2014 में एनडीए सरकार बनने तक जारी रही। मोदी सरकार बनने के बाद से सरकार ने 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' को अपग्रेड किया। नवम्बर 2014 में म्यांमार में पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन में 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' लॉन्च की गई थी।

(4) भारत की एक्ट ईस्ट नीति एशिया-प्रशांत क्षेत्र में विस्तारित पड़ोस पर केन्द्रित है। इस नीति की कल्पना मूल रूप से एवं आर्थिक पहल के रूप में की गई थी, उसने संवाद और सहयोग के लिए संस्थागत तंत्र की स्थापना सहित राजनीतिक, रणनीतिक और सांस्कृतिक आयाम स्थापित किए हैं।

(5) पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए लुक ईस्ट पॉलिसी एक्ट ईस्ट पॉलिसी (LEP) के महत्वाकांक्षी लक्ष्यों में दक्षिण एशिया और दक्षिण-पूर्व एशियाई क्षेत्रों के बीच वाणिज्य के निर्बाध पारगमन के लिए कनेक्टिविटी और व्यापार बुनियादी ढाँचे का विकास शामिल है।

(6) 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' बुनियादी ढाँचे, विनिर्माण, व्यापार, कौशल, शहरी नवीनीकरण, स्मार्ट शहर, मेक इन इंडिया और अन्य पहलों पर हमारे घरेलू एजेंडे में भारत-आसियान सहयोग पर भी जोर देती है। क्षेत्रीय एकीकरण और समृद्धि के लिए कनेक्टिविटी परियोजनाएँ अन्तरिक्ष में सहयोग, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और लोगों से लोगों के बीच आदान-प्रदान एक स्प्रिंगबोर्ड बन सकता है।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–(1) भारतीय विदेशनीति के मुख्य लक्ष्य संक्षेप में लिखिये।

उत्तर– भारत की विदेश-नीति के मुख्य लक्ष्य निम्नलिखित हैं–

(1) जातीय भेदभाव और साम्राज्यवाद का प्रबल विरोध।

(2) साम्यवाद अथवा शक्ति राजनीति की अपेक्षा राष्ट्रों के आधारभूत आर्थिक, सामाजिक और
राजनीतिक विकास पर बल।

(3) एशियायी देशों की उपेक्षा न करने एवं उन पर बलात् कुछ न थोपने का आग्रह।

(4) स्वतंत्रता, गुट-निरपेक्षता की नीति पर बल। संयुक्त-राष्ट्र संघ तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के प्रयास में विश्वास।

(5) शीत युद्ध एवं क्षेत्रीय सुरक्षा संगठनों से बचना।

(6) अन्तर्राष्ट्रीय तनावों को कम करने वाले और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को बढ़ाने वाले प्रयत्नों में आस्था।

प्रश्न–(2) विदेश नीति और राष्ट्रीय हित में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– विदेश नीति और राष्ट्रीय हित में अन्तर– विदेश नीति अन्य देशों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ उसके सम्बन्धों और बातचीत के सम्बन्ध में सरकार के कार्यों और निर्णयों को संदर्भित करती है। इसमें कूटनीति, व्यापार, रक्षा और मानवाधिकार जैसे मुद्दे शामिल हो सकते हैं। दूसरी ओर, राष्ट्रीय हित उन लक्ष्यों और उद्देश्यों को संदर्भित करता है जिन्हें एक सरकार अपने देश के लिए हांसिल करना चाहती है। इनमें आर्थिक स्थिरता, राष्ट्रीय सुरक्षा और अपने नागरिकों की सुरक्षा शामिल हो सकती है। हालांकि विदेश नीति और राष्ट्रीय हित प्रायः निकटता से जुड़े होते हैं, परन्तु वे एक ही चीज नहीं है। विदेश नीति वह साधन है जिसके माध्यम से कोई सरकार अपने राष्ट्रीय हितों को प्राप्त करना चाहती है। उदाहरणार्थ कोई सरकार आर्थिक विकास और स्थिरता को बढ़ावा देने हेतु मुक्त व्यापार की विदेश नीति अपना सकती है, जो उसके राष्ट्रीय हित में होगी।

विदेश नीति निर्माण में राष्ट्रीय हितों की भूमिका– विदेश नीति एवं राष्ट्रीय हितों के बीच एक गहन सम्बन्ध होता है। राष्ट्रहित विभिन्न संदर्भों में विदेश नीति हेतु अपनी महती भूमिका निभाते हैं–

(1) अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण के संदर्भ में ये विदेश नीति को सामान्य अभिविन्यास प्रदान करते हैं।

(2) ये निकट भविष्य की स्थिति में विदेश नीति को नियंत्रण करने वाले मापदण्डों का विकल्प प्रदान करते हैं।

(3) राष्ट्रीय हित विदेश नीति को निरन्तरता प्रदान करते हैं।

(4) विदेश नीति इन्हीं के आधार पर बदलते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप में अपने आपको ढालने में सक्षम हो सकती है।

(5) राष्ट्रीय हित विदेश नीति को सुदृढ़ आधार प्रदान करते हैं क्योंकि ये समाज के समन्वित एवं सर्वसम्मति पर आधारित मूल्यों की अभिव्यक्ति होते हैं। अन्ततः ये विदेश नीति हेतु दिशा-निर्देशन का कार्य करते हैं।

प्रश्न–(3) गुट–निरपेक्ष सिद्धान्त का जन्म किस प्रकार हुआ? यह आन्दोलन के रूप में कैसे सामने आया? संक्षिप्त में उल्लेख कीजिये।

उत्तर– गुट–निरपेक्ष सिद्धान्त का जन्म– यह द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उत्पन्न हुआ विचार है। द्वितीय विश्व–युद्ध के बाद विश्व दो गुटों में बँट गया था– एक गुट आंग्ल–अमेरिकी गुट तथा इसमें मुख्य रूप से पूर्व साम्राज्यवादी शक्तियाँ शामिल थीं। दूसरा गुट सोवियत संघ के नेतृत्व में साम्यवादी देशों का गुट था। दोनों के बीच शीतयुद्ध प्रारम्भ हो गया था। इस काल में सोवियत संघ की नीति दुनियाँ के विभिन्न राष्ट्रों में साम्यवाद का प्रचार–प्रसार कर उसे साम्यवादी झंडे के तले लाना था। इसके विपरीत संयुक्त–राज्य अमेरिका और उसके साम्राज्यवादी पूँजीवादी साथियों ने सोवियत प्रभाव को बढ़ने से रोकने के लिये उसे घेरने की नीति अपनायी थी। इस नीति के तहत आंग्ल–अमेरिकी गुट ने रूस को घेरने के लिये नाटो, सीटो, सेन्टो और एन्जस जैसे कई सैन्य–संगठन बनाये थे। इसकी प्रतिष्ठा में रूस ने भी 'वारसा पेक्ट' नाम का संगठन बनाया था।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद दुनियाँ में एक महत्वपूर्ण घटना और घटी, वह यह थी कि साम्राज्यवाद का विघटन प्रारम्भ हो जाने से एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के राष्ट्र स्वतंत्र होना प्रारम्भ हुये। इन नव स्वतंत्र राष्ट्रों को उपरोक्त दोनों ही गुट अपने में शामिल हो जाने के लिये आकर्षित कर रहे थे ताकि उनकी शक्ति बढ़े।

ध्वजवाहक गुट–निरपेक्ष राष्ट्र– नव स्वतन्त्र राष्ट्रों में भारत एक विशाल राज्य था, मिस्र में एक शक्तिशाली अरब राज्य था। पूर्वी यूरोप के देश यूगोस्लाविया को भी स्टालिन की उग्र आक्रमक नीति पसंद नहीं आयी, अतः उपरोक्त तीनों राष्ट्रों ने दोनों ही गुटों से अलग रहने की नीति अपनायी और इसे गुट–निरपेक्ष नीति नाम दिया। इस प्रकार उपरोक्त तीनों राष्ट्र (भारत, मिस्र, यूगोस्लाविया) गुट–निरपेक्ष नीति के प्रारम्भिक प्रतिपादक थे। इन्हें इस नीति का ध्वजवाहक कहा जा सकता है। इन्होंने इस नीति का अपने देशों की विदेश–नीति के रूप में प्रतिपादन किया और 1955 में जब प्रसिद्ध बांडुग–सम्मेलन में इसका प्रचार किया तो एशिया, अफ्रीका व लैटिन अमेरिका के नव–स्वतन्त्र राष्ट्रों को एक नया रास्ता अनुभव हुआ और उन्होंने भी गुट–निरपेक्ष नीति स्वीकार कर ली। धीरे–धीरे यह गुट–निरपेक्षता की नीति काफी लोकप्रिय हुयी और यह एक आन्दोलन बन गया।

प्रश्न–(4) भारत की पूर्वोन्मुख नीति का महत्व समझाइये।

उत्तर– भारत की पूर्वोन्मुख नीति का महत्व– ये निम्नवत् हैं–

(1) भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों को 'लुक ईस्ट पॉलिसी' या 'पूर्व की ओर देखो नीति' के तहत सीधी भूमिका दी गई।

(2) पूर्वी भारत के तटीय राज्यों की तस्वीरें सामने लाकर सामुद्रिक केन्द्रित पूर्व की ओर देखो नीति के द्वार खोलने से दक्षिण–पूर्वी देशों के साथ सम्बन्ध बनाने में सहायता मिलेगी जो मुख्य रूप से तटीय हैं।

(3) 'पूर्व की ओर देखो नीति' पूर्वी एशिया में चीन की उपस्थिति के साथ प्रतिस्पर्धा करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

हालिया परिणामों को देखा जाए तो इस बात को स्वीकारने के अनेक कारण हैं कि भारत को इस नीति से लाभ हुआ है और वह इस नीति के द्वारा अपने सम्बन्ध इन पूर्वी देशों से सुदृढ़ करने में सफल रहा है।

इकाई-2

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–1. 'भारत एक तेजी से उभरती वैश्विक शक्ति है।' समझाइए।

उत्तर– भारत एक तेजी से उभरती वैश्विक शक्ति है। भारत ने यूनाइटेड किंगडम, यूरोपीय संघ, जापान, रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसी विश्व शक्तियों के साथ अपने सम्बन्ध विकसित किए हैं। साथ ही इसने अफ्रीकी संघ (विशेषकर दक्षिण अफ्रीका), अरब विश्व, दक्षिण–पूर्व एशिया, इजराइल और दक्षिण अमेरिकी देशों (विशेषकर ब्राजील) के साथ भी सम्बन्ध विकसित किए। 21वीं सदी में भारत की विदेश नीति में अपने पड़ोस और विश्व में एक सक्षम वातावरण बनाने की खोज हावी रही है, जो इसकी अर्थव्यवस्था को बढ़ने, इसके समाज को विकसित करने और 1.42 अरब लोगों के इस देश के रूप में इसकी नरम शक्ति को पनपने की अनुमति देती है। भारत की वर्तमान विदेश नीति पैरा–डिप्लोमेसी है। यह मोदी सरकार के नवीन विचारों में से एक है। भारत की विदेश नीति में पैरा–डिप्लोमेसी के तत्वों की शुरूआत जहाँ प्रत्येक राज्य और शहर, राज्य और अन्य देश या यहाँ तक कि उनकी रूचि के शहर को भी देशों और संघीय के साथ विशेष सम्बन्ध रखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

प्रधानमंत्री मोदी का भारत को एक अग्रणी शक्ति बनने के लिए आव्हान देश के शीर्ष राजनीतिक नेतृत्व की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपनी भूमिका के बारे में सोच में बदलाव का प्रतिनिधित्व करता है। मोदी की दृष्टि में, एक अग्रणी शक्ति अनिवार्य रूप से एक महान शक्ति है। हालांकि भारत को यह ऊर्जा तभी हांसिल होगी जब उसकी आर्थिक नींव, उसके राज्य संस्थान और उसकी सैन्य क्षमताएँ वास्तव में मजबूत होंगी। इस शिखर तक पहुँचने के लिए भारत को कठोर प्रयास की आवश्यकता होगी।

प्रश्न–2. 'भारत एक तेजी से बढ़ती आर्थिक शक्ति है।' व्याख्या कीजिए।

उत्तर– भारत एक आर्थिक शक्ति के रूप में– आर्थिक शक्ति किसी देश की वैश्विक या क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने की क्षमता है। आर्थिक शक्ति आमतौर पर उसके आर्थिक आकार का परिणाम होती है। यह आर्थिक विकास का आधार भी है। आर्थिक शक्ति का सम्बन्ध देश की क्रय शक्ति से होता है।

सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) आँकड़ों के अनुसार, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, जर्मनी, जापान और भारत 2023 में दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाएँ हैं। जीडीपी किसी देश की अर्थव्यवस्था के परिमाण का आकलन करने हेतु एक प्रमुख पैमाने के रूप में कार्य करता है। भारत की अर्थव्यवस्था मिश्रित नियोजित अर्थव्यवस्था से रणनीतिक क्षेत्रों में उल्लेखनीय सार्वजनिक क्षेत्र के साथ मिश्रित मध्यम आय वाली विकासशील सामाजिक बाजार अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो गई है। यह नॉमिनल जीडीपी के हिसाब से विश्व की पांचवी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है और क्रय शक्ति समता (पीपीपी) के हिसाब से तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) के अनुसार, प्रति व्यक्ति आय के आधार पर भारत जीडीपी (नाममात्र) के हिसाब से 139वें और जीडीपी (PPP) के हिसाब से 127वें स्थान पर है। इक्कीसवीं सदी की शुरूआत के बाद से, वार्षिक औसत सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि 6% से 7% रही है।

भारत में अभी भी अनौपचारिक घरेलू अर्थव्यवस्थाएँ हैं। कोविड–19 ने आर्थिक विकास और गरीबी में कमी दोनों को उलट दिया। ऋण पहुँच की कमजोरियों ने निजी खपत और मुद्रास्फीति को कम करने में योगदान दिया और नए सामाजिक और बुनियादी ढाँचे

इक्विटी प्रयास 2016 में 'नोटबंदी' के झटके और 2017 में वस्तु एवं सेवा कर की शुरूआत के कारण 2017 में आर्थिक विकास धीमा हो गया। भारत की लगभग 70% जीडीपी घरेलू खपत से संचालित होती है। भारत दुनिया का छठाँ सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार बना हुआ है। किसी खपत के अलावा भारत की जीडीपी सरकारी खर्च, निवेश और निर्यात से भी चलती है।

वर्ष 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान, अर्थव्यवस्था को हल्की मंदी का सामना करना पड़ा। भारत ने केन्जियन नीति का समर्थन किया और विकास को बढ़ावा देने और माँग उत्पन्न करने हेतु (राजकोषीय और मौद्रिक दोनों) प्रोत्साहन उपाय शुरू किए। बाद के वर्षों में आर्थिक विकास पुनर्जीवित हुआ। विश्व बैंक के अनुसार, सतत आर्थिक विकास हासिल करने हेतु भारत को सार्वजनिक क्षेत्र में सुधार, बुनियादी ढाँचे, कृषि और ग्रामीण विकास, भूमि और श्रम नियमों को हटाने, वित्तीय समावेशन, निजी निवेश और निर्यात को बढ़ावा देने, शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। भारत ने आसियान, साटा, मर्कोसुर, दक्षिण कोरिया, जापान, ऑस्ट्रेलिया, यूएई और कई अन्य देशों और ब्लॉकों के साथ मुक्त व्यापार समझौते किए हैं, जो वर्तमान में प्रभावी हैं या बातचीत के अन्तिम चरण में हैं। सन् 2022 में, भारत विश्व का छठा सबसे बड़ा आयातक और 9वाँ सबसे बड़ा निर्यातक था। भारत 1 जनवरी, 1995 से विश्व व्यापार संगठन (WTO) का सदस्य रहा है।

जहाँ विश्व की अर्थव्यवस्था सुस्त इस समय पड़ी हुई है, वहीं भारत तेजी से वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में उभर रहा है। 2050 तक भारत विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था 'तेज महाशक्ति' बनने की ओर अग्रसर है और 2050 तक इसका आकार अमेरिका के बराबर हो जाएगा।

'चीन प्लस वन रणनीति' का भारत को मिलेगा लाभ– **मार्टिन वुल्फ** के अनुसार 'चाइना प्लस वन' रणनीति अपनाने वाली कम्पनियों के लिए भारत एक प्रमुख गंतव्य है। बड़े घरेलू बाजार के कारण भारत इस मामले में अन्य प्रतिस्पर्धियों की तुलना में लाभ की स्थिति में है। भारत दुनिया की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। क्रय शक्ति की दृष्टि से यह तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि 2050 तक देश की आबादी 1.67 अरब तक पहुँच जायेगी। अभी भारत की जनसंख्या 1.42 अरब है। वुल्फ ने कहा कि देश के बैंकों की बैलेंस शीट में सुधार हुआ है। क्रेडिट ग्रोथ भी अब वृहद् आकार ले रही है। आने वाले दशकों में देश की अर्थव्यवस्था और जनसंख्या दोनों ही तेजी से बढ़ेगी। इससे भारत का मुकाबला चीन से होगा।

भारत एक तेजी से बढ़ती शक्ति है। भारत एक युवा देश है जिसमें अपने कार्यबल की गुणवत्ता, उच्च बचत दर और अधिक समृद्धि की व्यापक उम्मीदों में सुधार करने की क्षमता मौजूद है।

प्रश्न–3. 'भारत एक वैश्विक सैन्य शक्ति है।' विवेचना कीजिए।

अथवा

'भारतीय सेना विश्व के लिए एक प्रेरणा है।' समझाइये।

अथवा

'आने वाले दौर में भारत एक उभरती हुई महाशक्ति कैसे बन सकती है?' स्पष्ट कीजिये।

उत्तर– भारत एक वैश्विक सैन्य शक्ति– भारतीय सशस्त्र सेना मुख्य रूप से भारतीय थल सेना, वायु सेना और नौसेना के संयुक्त गठन से बनती है। हमारी भारतीय सशस्त्र सेना विश्व की विशालतम सेनाओं में से एक है। सरकार ने देश की सीमाओं की सुरक्षा देश के सैनिकों के

हाथों में सौंपी है और इस जिम्मेदारी को हमारी सेनाओं द्वारा बखूबी निभाया जा रहा है। हमारे देश के राष्ट्रपति के हाथों में भारतीय सेनाओं की सर्वोच्च कमान होती है। सेनाओं का निर्वहन देश के रक्षा-मंत्रालय द्वारा किया जाता है, जो देश की रक्षा के दायित्व और सेनाओं के निर्वहन की रूपरेखा तैयार करता है।

भारतीय सेना देश की सीमाओं को सुरक्षित करके देश के भीतर शांति और सुरक्षा बनाये रखती है। भारतीय सशस्त्र सेना का एक बड़ा भाग हमारी थल सेना के रूप में हमारी भारतीय सीमाओं की रक्षा करता है। वायु सेना हमारी आकाशीय सीमाओं को और जल सेना हमारी समुद्री सीमाओं की रक्षा में सदैव तत्पर रहते हैं। युद्ध या प्राकृतिक आपदाओं के समय जरूरत पड़ने पर ये तीनों सेनाएँ एक साथ मिलकर देश की सेवा करती हैं।

भारतीय सैनिकों ने प्रत्येक मौके पर अपने पराक्रम का परिचय दिया है। यही नहीं, भारत को अक्षुण्ण और अखंड बनाए रखने हेतु अपने प्राणों को भी न्यौछावर किया है। भारत की ऐसी सेना जिसके पास आतंक का पर्याय बन चुके पाकिस्तान के साथ तथा चीन से भी लगभग हर दिन टकराने का 70 वर्षों का अनुभव है। सेना ने 1962, 1965 और 1971 युद्धों में अपने महा शौर्य का परिचय दिया। वर्ष 1990 के दशक में कारगिल की चोटियों पर जीत हासिल की तो 2000 में अफ्रीका की जमीन पर ऑपरेशन खुखरी को अंजाम दिया। वर्ष 2016 में पाकिस्तान पर भारतीय वायुसेना ने ऐसी सर्जिकल स्ट्राइक की कि पाकिस्तान अभी तक सदमे में है। अब सभी बाह्य मोर्चों पर भारत की शक्ति का अनुभव दुनिया को हो गया है।

विगत दशकों में भारत में नया डिफेंस इकोसिस्टम विकसित किया जा रहा है। वैश्विक मंचों पर भारत की छवि डिफेंस के मामले में सुदृढ़ होती जा रही है। सरकार मेक इन इंडिया पर जोर दे रही है। आज भारत में ही हथियार से लेकर लड़ाकू विमान तक बनाए जा रहे हैं। विगत दशक में भारत का निर्यात 25 गुना यानी करीब 2400 प्रतिशत बढ़ चुका है। लोवी इंस्टीट्यूट पॉवर इंडेक्स की रिपोर्ट कहा गया है कि भारत डिफेंस सेक्टर में दुनिया के सर्वोच्च देशों की कतार में गर्व और इज्जत के साथ खड़ा है। भारत सैन्य क्षमता के पाँच पैमानों और प्रतिरोध क्षमता के पाँच पैमानों में चौथी पोजीशन पर है।

वर्तमान में हमारी भारतीय सशस्त्र सेना विश्व की सबसे ताकतवर सेनाओं में से एक है। 1.4 मिलियन से अधिक सक्रिय सैन्य कर्मियों की ताकत के साथ, यह विश्व का दूसरा सबसे बड़ा सैन्य बल है और इसके पास विश्व की सबसे बड़ी स्वयंसेवी सेना है। इसका दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा रक्षा बजट भी है। ग्लोबल फायरपॉवर इंडेक्स रिपोर्ट में इसे चौथी सबसे शक्तिशाली सेना के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि विश्व में भारतीय सेना की रैंक बड़ी तेजी से बढ़ रही है और भारत एक वैश्विक सैन्य शक्ति बन चुका है।

प्रश्न–4. बहुध्रुवीय विश्व का क्या अर्थ है? समझाइए। बहुध्रुवीय विश्व की विशेषताएँ लिखिए।

अथवा

बहुध्रुवीय विश्व क्या है? इसकी विशेषताएँ समझाइये।

उत्तर– बहुध्रुवीय विश्व एक ऐसा विश्व है जहाँ एक प्रमुख महाशक्ति या द्विध्रुवीय प्रतिद्वन्द्विता के बजाय शक्ति और प्रभाव के अनेक केन्द्र होते हैं। बहुध्रुवीय विश्व में, विभिन्न क्षेत्रों और देशों के अपने-अपने हित, मूल्य और एजेंडे हैं और वे विभिन्न मुद्दों पर एक-दूसरे के साथ सहयोग या प्रतिस्पर्धा करते हैं।

बहुध्रुवीय दुनिया एक वैश्विक प्रणाली को संदर्भित करती है जिसमें शक्ति एक (एकध्रुवीय) या दो (द्विध्रुवीय) प्रमुख शक्तियों में केन्द्रित होने के बजाय कई राज्यों या राज्यों के गुटों के बीच वितरित की जाती है। इस अवधारणा का उपयोग मुख्य रूप से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों और भू-राजनीति के संदर्भ में किया जाता है।

बहुध्रुवीय विश्व में विभिन्न क्षेत्रों और देशों के अपने-अपने हित, मूल्य और एजेंडे हैं और वे विभिन्न मुद्दों पर एक-दूसरे के साथ सहयोग या प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसमें आर्थिक नीति, सैन्य गठबंधन, राजनयिक वार्ता, पर्यावरण नियम और बहुत एक कुछ जैसे क्षेत्र शामिल हो सकते हैं, जो कि सत्ता के अनेक केन्द्र हैं। एक बहुध्रुवीय दुनिया एकध्रुवीय या द्विध्रुवीय दुनिया की तुलना में अधिक गतिशील, विविध और जटिल हो सकती है। शक्तियों के बीच सम्बन्धों को शक्ति सन्तुलन की विशेषता होती है, जहाँ एक शक्ति से कार्यों को दूसरे के कार्यों द्वारा जाँचा जाता है।

बहुध्रुवीय विश्व की परिभाषा– यहाँ बहुध्रुवीय विश्व की तीन संभावित परिभाषाएँ (स्रोतों सहित) दी गई हैं–

(1) बहुध्रुवीय दुनिया एक ऐसी दुनिया है जहाँ दुनिया में शक्ति और प्रभाव के अनेक केन्द्र हैं, जैसे– संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, भारत, रूस, यूरोपीय संघ, जापान, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका।

(2) बहुध्रुवीय विश्व एक ऐसी स्थिति है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय अराजकता की स्थिति में एक राज्य को शक्ति का प्रभुत्व प्राप्त होता है और उसे किसी प्रतिस्पर्धी राज्य का सामना नहीं करना पड़ता है।

(3) बहुध्रुवीय दुनिया वह है जहाँ सत्ता एक या दो राज्यों के प्रमुख के बजाय अनेक राज्यों के बीच वितरित की जाती है।

एक बहुध्रुवीय विश्व– एकध्रुवीय दुनिया के विपरीत जहाँ एक राष्ट्र लय निर्धारित करता है या एक द्विध्रुवीय दुनिया जहाँ दो प्रमुख राष्ट्र नृत्य का नेतृत्व करते हैं, एक बहुध्रुवीय दुनिया एक भव्य ऑर्केस्ट्रा के समान है जहाँ प्रत्येक राष्ट्र सद्भाव या असंगति में अपनी भूमिका निभाता है, सिम्फनी में वैश्विक गतिशीलता का योगदान देता है।

यह बहुध्रुवीय दुनिया विविध अभिनेताओं का एक मंच है, जहाँ वैश्विक घटनाओं की पटकथा सहयोगात्मक रूप से लिखी जाती है और शक्ति सन्तुलन लगातार बदलता और विकसित होता है। यह हमारी तेजी से परस्पर जुड़ी हुई दुनिया की एक गतिशील, जटिल और कभी-कभी अराजक वास्तविकता है।

बहुध्रुवीय विश्व की विशेषताएँ– बहुध्रुवीय दुनिया की विशेषता एकध्रुवीय या द्विध्रुवीय प्रणाली से सत्ता के अधिक विकेन्द्रीकृत और विविध वितरण में बदलाव है। बहुध्रुवीय विश्व की कुछ संभावित विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

(1) दुनिया में शक्ति और प्रभाव के अनेक केन्द्र हैं, जैसे– संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, भारत, रूस, यूरोपीय संघ, जापान, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका।

(2) कोई एक प्रमुख महाशक्ति या द्विध्रुवीय प्रतिद्वन्द्विता नहीं है जो अन्य सभी राज्यों के व्यवहार को नियंत्रित या निर्देशित कर सकें।

(3) अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली में अधिक विविधता, गतिशीलता और जटिलता है, क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों और देशों के अपने-अपने हित, मूल्य और एजेंडे हैं।

(4) संघर्षों को सुलझाने और सामान्य लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सत्ता के ध्रुवों और अन्य अभिनेताओं के बीच बातचीत और समझौते की अधिक आवश्यकता है।

(5) बहुध्रुवीय दुनिया की उभरती वास्तविकताओं और समस्याओं के अनुकूल स्थापित सोच और पारस्परिक टेम्पलेट्स के लिए अधिक चुनौती है।

(6) वैश्विक शासन, व्यापार, सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन, मानवाधिकार और विकास जैसे विभिन्न मुद्दों पर सत्ता के ध्रुवों के बीच अधिक सहयोग और प्रतिस्पर्धा है।

प्रश्न–5. बहुध्रुवीय विश्व के 7 प्रमुख स्तम्भ कौन-कौन से हैं? समझाइये।

उत्तर– बहुध्रुवीय विश्व के 7 प्रमुख स्तम्भ हैं– इनका विवरण निम्नवत् है–

(1) **वियुत वितरण–** बहुध्रुवीय दुनिया का पहला स्तम्भ बिजली वितरण के आसपास घूमता है। एकल महाशक्ति के प्रभुत्व वाले एकध्रुवीय विश्व या दो प्रमुख शक्तियों द्वारा परिभाषित द्विध्रुवीय विश्व के विपरीत, बहुध्रुवीय विश्व में कई प्रभावशाली अभिनेताओं का उदय होता है। ये अभिनेता राष्ट्र-राज्य, क्षेत्रीय गठबंधन या यहाँ तक कि गैर-राज्य संस्थाएँ भी हो सकती हैं। अब सत्ता कुछ लोगों के हाथों में ही केन्द्रित नहीं है, वरन् प्रभाव के विभिन्न क्षेत्रों में बिखरी हुई है।

(2) **सांस्कृतिक बहुलवाद–** सांस्कृतिक बहुलवाद बहुध्रुवीय विश्व का एक अभिन्न पहलू है। विभिन्न कर्ताओं के बीच शक्ति के बिखराव के साथ, अनेक संस्कृतियाँ, भाषाएँ और विचारधाराएँ सामने आती हैं। यह सांस्कृतिक पच्चीकारी समावेशिता और विविधता के प्रति सम्मान के वातावरण को बढ़ावा देती है। जैसे-जैसे समाज परस्पर क्रिया करते हैं और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं, एक समृद्ध वैश्विक टेपेस्ट्री उभरती है, जो एकरूपता की पारम्परिक धारणाओं को चुनौती देती है और सांस्कृतिक संवाद को बढ़ावा देती है।

(3) **आर्थिक परस्पर निर्भरता–** आर्थिक परस्पर निर्भरता बहुध्रुवीय विश्व का एक अन्य प्रमुख स्तम्भ है। इस युग में आर्थिक सम्बन्ध कुछ प्रमुख खिलाड़ियों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसमें राष्ट्रों और क्षेत्रों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है। अब अनेक आर्थिक शक्तियाँ उभरकर सामने आ रही हैं, जो विश्व भर में व्यापार और निवेश सम्बन्धों को बढ़ावा दे रही हैं। यह परस्पर निर्भरता आर्थिक सम्बन्धों का एक जटिल जाल बनाती है जो वैश्विक समृद्धि और स्थिरता में योगदान करती है।

(4) **तकनीकी प्रगति–** तकनीकी प्रगति बहुध्रुवीय विश्व को आकार देने में सहायक है। तेजी से नवाचार और प्रौद्योगिकी के प्रसार ने वैश्विक मामलों में भाग लेने हेतु अभिनेताओं की एक विस्तृत श्रृंखला को सशक्त बनाया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ब्लॉकचेन और नवीकरणीय ऊर्जा जैसी उभरती प्रौद्योगिकियाँ पारस्परिक बिजली संरचनाओं को बाधित करती हैं और छोटे देशों और गैर-राज्य अभिनेताओं को प्रभाव डालने और परिवर्तन लाने के अवसर प्रदान करती हैं।

(5) **कूटनीति एवं बहुपक्षवाद–** बहुध्रुवीय दुनिया में कूटनीति और बहुपक्षवाद जटिल अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शक्ति के प्रसार के साथ, राष्ट्र वैश्विक चुनौतियों से निपटने हेतु बातचीत, बातचीत और सहयोग में शामिल होने के लिए विवश हैं। संयुक्त राष्ट्र, क्षेत्रीय संगठन और द्विपक्षीय समझौते जैसे बहुपक्षीय संस्थान, सहयोग को बढ़ावा देने और संघर्षों को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने हेतु आवश्यक मंच बन जाते हैं।

(6) **अनुकूलनशीलता तथा लचीलापन–** बहुध्रुवीय दुनिया में अनुकूलनशीलता और लचीलापन प्रमुख स्तम्भ हैं। जैसे-जैसे शक्ति की गतिशीलता बदलती रहती है और नई चुनौतियाँ सामने आती हैं, परिवर्तन को अपनाने और स्वीकार करने की क्षमता महत्वपूर्ण हो

जाती है। बहुध्रुवीय दुनिया के जटिल परिदृश्य को सफलतापूर्वक पार करने के लिए राष्ट्रों को अपनी रणनीतियों, नीतियों और गठबंधनों को समायोजित करने हेतु लचीली रखना चाहिए।

(7) **सुरक्षा तथा सहयोग**– सुरक्षा और सहयोग बहुध्रुवीय दुनिया का एक और महत्वपूर्ण स्तम्भ है। अनेक कर्ताओं के बीच शक्ति वितरित होने से, शक्ति सन्तुलन गतिशील हो जाता है, और इसके लिए निरन्तर पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। राष्ट्र हितों और आपसी सुरक्षा चिंताओ के आधार पर गठबंधन, साझेदारी और गठबंधन बनाना चाहते हैं। वैश्विक स्थिरता बनाए रखने के लिए आतंकवाद विरोध, जलवायु परिवर्तन और परमाणु अग्रसर जैसे मुद्दों पर सहयोग अनिवार्य हो जाता है।

प्रश्न–6. 'भारत बहुध्रुवीय विश्व में एक उभरती हुई शक्ति है।' इस कथन को समझाइये।

उत्तर– उभरती बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में भारत : गतिशीलता और रणनीतिक चुनौतियाँ– विश्व पटल पर भारत का आगमन हो चुका है। पिछले तीन दशकों में, भारत की विशाल और तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था, उसकी विशाल आबादी और उसकी परमाणु शक्तियों ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ध्यान आकर्षित किया और एक गहरे बदलाव के साथ भारत की छवि को उच्च स्थिति पर पहुँचाया।

भारत की विदेश नीति, शीत युद्ध के रणनीतिक ढाँचे की संरचनात्मक सीमाओं से बाहर, पिछले कुछ वर्षों में अपनी प्राथमिकताओं से निपटने में और अधिक विस्तृत हो गई है। अपनी आर्थिक और सैन्य क्षमताओं और रणनीतिक हितों के बढ़ने के साथ, भारत ने ऐसी कूटनीति को आकार दिया है जो उन हितों की पूर्ति हेतु कहीं अधिक आक्रामक है।

भारत : उभरती हुई शक्ति मानसिकता वाली एक मध्य शक्ति– भारत ने एक महान शक्ति का दर्जा प्राप्त नहीं किया है। हालांकि इसके पास परमाणु हथियार और मध्यम दूरी की बैलिस्टिक मिसाइलें हैं, फिर भी इसमें वैश्विक हमले की क्षमता के साथ-साथ गंभीर अतिरिक्त-क्षेत्रीय शक्ति क्षमताओं का अभाव है। यह निर्णायक रूप से अपने क्षेत्र पर हावी नहीं है और यह आर्थिक या सैन्य सन्तुलन के संदर्भ में शक्ति को आकार देने वाली प्रणाली नहीं है। भारत न तो महान शक्तियों में से एक है और न ही छोटी शक्ति, लेकिन यह ऐसी शक्ति है जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और इस अर्थ में यह इसे मध्य शक्ति कहना उचित होगा। इसलिए, भारत एक उभरती हुई शक्ति है– एक मध्य शक्ति जो वैश्विक शक्ति पदानुक्रम में क्रमशः आगे बढ़ रही है।

इसके अलावा एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में भारत की स्थिति पर विवाद है। अपने पड़ोसियों की तुलना में भारत के आकार, क्षेत्रफल, जनसंख्या, सकल घरेलू उत्पाद और सशस्त्र बलों को ध्यान में रखते हुए इसे दक्षिण एशिया में एक क्षेत्रीय शक्ति कहा जा सकता है। हालांकि, अपने पड़ोसी पर हावी होने और अपनी इच्छा थोपने में सक्षम होने के पैमाने से मापने पर, भारत एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में योग्य नहीं है। भूटान को छोड़कर भारत को दक्षिण एशिया का स्वाभाविक नेता नहीं माना जाता है।

भू-रणनीतिक रूप से भारत अपने पूरे महाद्वीपीय उत्तर में परमाणु शक्ति सम्पन्न पाकिस्तान और चीन द्वारा अवरूद्ध है। दक्षिण में हिन्द महासागर का विशाल विस्तार एक प्रकार की शक्ति प्रक्षेपण क्षमताओं के विकास में बाधा डालता है जो प्रमुख शक्तियों की वैश्विक रणनीतिक गणना में गिना जाएगा।

भारत की पहचान एक उभरती हुई शक्ति मानसिकता वाली मध्य शक्ति के रूप में की जा सकती है, जो महत्वाकांक्षा के बढ़ते स्तर, बढ़ती सैन्य और भौतिक क्षमताओं, विस्तारित अर्थव्यवस्था तथा समेकित लोकतंत्र को दर्शाती है। भारत सैन्य और भौतिक शक्ति प्राप्त

करने के रास्ते खोज रहा है जो उसे एक 'अग्रणी शक्ति' में बदलने के अपने लक्ष्य के करीब लाने का मार्ग प्रशस्त करेगा।

प्रश्न–7. बहुध्रुवीय विश्व में भारत के अवसरों और चुनौतियाँ का विवरण दीजिये।

उत्तर– बहुध्रुवीय विश्व में अवसर और चुनौतियाँ– 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शीत युद्ध, जो कि द्विध्रुवीयता का युग था। इसके अन्त के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रभुत्व वाला 'एकध्रुवीय क्षण' आया। अब एकध्रुवीय क्षण तेजी से लुप्त हो रहा है, जिससे अनेक विद्वान अब एक बहुध्रुवीय/बहुकेन्द्रीय विश्व, एक 'मल्टीप्लेक्स' विश्व के उद्भव को देखते हैं।

उभरती बहुध्रुवीय विश्व अवसर प्रदान करने के साथ-साथ भारत की विदेश नीति के लिए चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करता है। उभरती विश्व व्यवस्था में बढ़ती शक्तियों के संदर्भ में, वैरी बुजान शक्ति के बढ़ते प्रसार को बाकी के उदय के रूप में एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली की ओर ले जाने की बात कहते हैं जिसमें कोई महाशक्तियाँ नहीं होंगी, अनेक महान शक्तियाँ होंगी और बहुत क्षेत्रीय शक्तियाँ होंगी।

बहुकेन्द्रीय अथवा बहुध्रुवीय विश्व न केवल चार-पाँच महान शक्तियों और उनके गठबंधनों से बल्कि नई और क्षेत्रीय शक्तियों, वैश्विक संगठनों, निगमों, सामाजिक आन्दोलनों और आतंकवादी नेटवर्क से भी आकार लेती हैं। बहुध्रुवीय विश्व में आर्थिक परस्पर निर्भरता बहुआयामी और जटिल है। एक बहुकेन्द्रीय विश्व में शासन की कई परतें होती हैं। क्षेत्रीय शक्तियों और संस्थाओं को द्विध्रुवीय या एकध्रुवीय विश्व की तुलना में कहीं अधिक महत्व प्राप्त है।

एक बहुध्रुवीय विश्व भारत के लिए अनेक अवसर प्रस्तुत करता है। द्विध्रुवीय शीत युद्ध और एकध्रुवीय क्षण या अमेरिकी विश्व व्यवस्था दोनों ने भारत की विश्व व्यवस्था को आकार देने की क्षमता को बाधित किया। पश्चिमी प्रभुत्व के कम होने से भारत जैसी उभरती शक्तियों के लिए वैश्विक मामलों में सक्रिय भूमिका निभाने का अवसर खुल गया है।

तेजी से, भू-राजनीति द्वारा परिभाषित एक बहुध्रुवीय दुनिया भारत को वैश्विक अन्तरनिर्भरता प्रदान करके, वैश्विक शासन के सक्रिय साझा नेतृत्व को आगे बढ़ाने और दक्षिण एशिया और एशिया-प्रशांत में एक सकारात्मक क्षेत्रीय वातावरण का निर्माण करके अपने राष्ट्रीय हित और नेतृत्व की महत्वाकांक्षाओं को आगे बढ़ाने के लिए अधिक विकल्प प्रदान करती है।

भारत ने हाल ही में, जी-20 और शंघाई सहयोग संगठन की अध्यक्षता की है, इसलिए 'भारत एक ध्रुव के रूप में' महत्वपूर्ण हो गया है।

प्रश्न–8. भारतीय आर्कटिक नीति के उद्देश्य क्या हैं?

अथवा

भारत के लिए आर्कटिक अध्ययन का महत्व क्यों महत्वपूर्ण है?

उत्तर– भारतीय आर्कटिक नीति के उद्देश्य– ये निम्नलिखित हैं-

(1) इस नीति का उद्देश्य विज्ञान और अन्वेषण, जलवायु और पर्यावरण संरक्षण और आर्कटिक क्षेत्र के साथ समुद्री और आर्थिक सहयोग में राष्ट्रीय क्षमताओं और दक्षताओं को मजबूती प्रदान करना है।

(2) इस नीति का उद्देश्य आर्कटिक में भारत के हितों की खोज में अन्तर-मंत्रालयी समन्वय के माध्यम से सरकार और शैक्षणिक, अनुसंधान और व्यावसायिक संस्थानों के भीतर संस्थागत और मानव संसाधन क्षमताओं को मजबूत करना चाहता है।

(3) इस नीति का उद्देश्य भारत की जलवायु, आर्थिक और ऊर्जा सुरक्षा पर आर्कटिक क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव की समझ को बढ़ाना है।

(4) इस नीति का उद्देश्य वैश्विक शिपिंग मार्गों, ऊर्जा सुरक्षा और खनिज सम्पदा के दोहन से सम्बन्धित भारत के आर्थिक, सैन्य और रणनीतिक हितों पर आर्कटिक में बर्फ पिघलने के प्रभाव पर बेहतर विश्लेषण, भविष्यवाणी और समन्वित नीति निर्धारण को बढ़ावा देना है।

(5) इस नीति का उद्देश्य ध्रुवीय क्षेत्रों और हिमालय के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करना और वैज्ञानिक और पारम्परिक ज्ञान से विशेषता हासिल करते हुए विभिन्न आर्कटिक मंचों के अन्तर्गत भारत और आर्कटिक क्षेत्र के देशों के बीच सहयोग को बढ़ाना है।

(6) यह नीति आर्कटिक परिषद् में भारत की भागीदारी बढ़ाने और आर्कटिक में जटिल शासन संरचनाओं, प्रासंगिक अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों और क्षेत्र की भू-राजनीति की समझ में सुधार करने का भी प्रयास करती है।

भारत के लिए आर्कटिक अध्ययन का महत्व– ये निम्नवत् हैं–

(1) भारत का कोई भी क्षेत्र सीधे तौर पर आर्कटिक क्षेत्र में नहीं आता है। यह एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है क्योंकि आर्कटिक पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र के वायुमंडलीय, समुद्र विज्ञान और जैव-रासायनिक चक्रों को प्रभावित करता है।

(2) जलवायु परिवर्तन के कारण इस क्षेत्र को समुद्री बर्फ, हिमखंडों के नुकसान और समुद्र के गर्म होने का सामना करना पड़ता है, जो बदले में वैश्विक जलवायु को प्रभावित करता है।

(3) ठंडा आर्कटिक, जो ग्लोबल वार्मिंग के कारण बर्फ पिघलने के कारण उसे खोता रहता है, भारतीय मानसून में विविधता लाने वाली बैटरियों में से एक है।

वर्तमान में भारत विकसित पश्चिमी देशों के साथ बराबरी करने का प्रयास करते हुए अपने अत्यधिक जीवाश्म-निर्भर आर्थिक विकास के रास्ते पर आगे बढ़ रहा है।

आगे बढ़ने का मार्ग–

(1) भारत की आर्कटिक नीति सामयिक है और इस क्षेत्र के साथ भारत के जुड़ाव की रूपरेखा पर भारत के नीति-निर्माताओं को एक दिशा प्रदान करने की संभावना है।

(2) यह क्षेत्र के साथ भारत के जुड़ाव के लिए सम्पूर्ण सरकारी दृष्टिकोण विकसित करने की दिशा में पहला कदम है।

(3) यह नीति भारत और आर्कटिक में कार्यक्रमों, सेमिनारों और कार्यक्रमों के आयोजन के माध्यम से भारत के अन्दर और इसके विपरीत आर्कटिक के बारे में जागरूकता बढ़ाने की भी संभावना है।

(4) इस हेतु, भारत को अधिकारिक तौर पर एक आर्कटिक राजदूत/प्रतिनिधि भी नियुक्त करना होगा जो आर्कटिक मामलों पर भारत के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व और आवाज उठाएगा।

(5) भारत की आर्कटिक नीति की योजना बनाने, निगरानी करने, संचालन करने, लागू करने और समीक्षा करने के लिए एक समर्पित विशेषज्ञ समिति का गठन करने से देश के दृष्टिकोण को बेहतर तरीके से सुव्यवस्थित करने में सहायता मिल सकती है।

निष्कर्ष– भारत में वैज्ञानिक अन्वेषण और ध्रुवीय क्षेत्रों के संरक्षण में योगदान देने की अपार क्षमता है। हालांकि, इसकी आबादी के बीच ध्रुवीय क्षेत्रों के विषय पर ज्ञान की कमी और दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी इस दिशा में कोई भी सफलता हासिल करने में प्रमुख बाधाओं के रूप में कार्य कर रही है।

प्रश्न–५. आर्कटिक क्या है? भारत की आर्कटिक नीति के प्रमुख प्रावधान क्या हैं? समझाइये।

अथवा

आर्कटिक क्या है? इसकी पृष्ठभूमि का वर्णन कीजिए।

उत्तर– आर्कटिक पृथ्वी के सबसे उत्तरी भाग में स्थित एक ध्रुवीय क्षेत्र है। आर्कटिक क्षेत्र के भीतर की भूमि में मौसम के अनुसार अलग-अलग बर्फ और बर्फ का आवरण होता है। इसमें आर्कटिक महासागर निकटवर्ती समुद्र और अलास्का (संयुक्त राज्य अमेरिका), कनाडा, रूस, फिनलैंड, डेनमार्क और स्वीडन, आइसलैंड, नॉर्वे के कुछ भाग शामिल हैं।

आर्कटिक की पृष्ठभूमि–

(1) आर्कटिक के साथ भारत का जुड़ाव (कनेक्शन) तब शुरू हुआ जब 1820 में पेरिस में नॉर्वे, इटली, अमेरिका, डेनमार्क, नीदरलैंड, फ्रांस, जापान, ग्रेट ब्रिटेन, आयरलैंड और स्पिट्सबर्गेन के सम्बन्ध में ब्रिटिश विदेशी डोमिनियन और स्वीडन के बीच स्वालबार्ड संधि पर हस्ताक्षर किए गए।

(i) स्पिट्सबर्गेन आर्कटिक महासागर में नॉर्वे के भाग, स्वालबार्ड द्वीपसमूह का सबसे बड़ा द्वीप है।

(ii) स्पिट्सबर्गेन स्वालबर्ड का एकमात्र स्थायी रूप से बसा हुआ भाग है। यहाँ 50% से अधिक भूमि पूरे वर्ष बर्फ से ढँकी रहती है। ग्लेशियरों के साथ-साथ पहाड़ और पहाड़ ही परिदृश्य को परिभाषित करते हैं।

(2) तब से भारत आर्कटिक क्षेत्र के सभी विकासों पर अपनी सूक्ष्म नजर रख रहा है।

(3) भारत ने क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन पर ध्यान केन्द्रित करते हुए 2007 में अपना आर्कटिक अनुसंधान कार्यक्रम आरम्भ किया। उद्देश्यों में आर्कटिक जलवायु और भारतीय मानसून के बीच टेलीकनेक्शन का अध्ययन करना और ग्लोबल वार्मिंग पर प्रभाव का अनुमान लगाने हेतु उपग्रह डेटा का उपयोग करके आर्कटिक में समुद्री बर्फ की विशेषता बताना शामिल है।

(4) भारत आर्कटिक ग्लेशियरों की गतिशीलता और बड़े पैमाने पर बजट और समुद्र-स्तर में बदलाव पर शोध करने, आर्कटिक की वनस्पतियों और जीवों का आकलन करने पर भी अपना ध्यान केन्द्रित करता है।

भारत की आर्कटिक नीति के प्रमुख प्रावधान– भारत की आर्कटिक नीति में 6 केन्द्रीय स्तम्भ निम्नलिखित हैं–

(1) विज्ञान और अनुसंधान, (2) पर्यावरण संरक्षण, (3) परिवहन और कनेक्टिविटी, (4) आर्थिक एवं मानव विकास, (5) राष्ट्रीय क्षमता निर्माण, (6) शासन और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग।

पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय ने हाल ही में भारत की आर्कटिक नीति का अनावरण किया है, जिसका शीर्षक 'भारत और आर्कटिक सतत विकास के लिए साझेदारी का निर्माण' है। भारत आर्कटिक परिषद् में पर्यवेक्षक के रूप में 13 पदों में से 1 पद रखता है। आर्कटिक काउंसिल एक अन्तर-सरकारी निकाय है जो अनुसंधान को बढ़ावा देता है और आर्कटिक क्षेत्र के

पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर आर्कटिक देशों के बीच सहयोग की सुविधा प्रदान करता है।

प्रश्न–10. जलवायु परिवर्तन क्या है? इसके क्या प्रभाव होते हैं?

अथवा

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव तथा समाधान पर चर्चा करते हुए भारत द्वारा उठाए गए कदमों की समीक्षा कीजिये।

अथवा

जलवायु परिवर्तन क्या हैं? जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु वैश्विक प्रयास क्या हैं?

उत्तर– जलवायु परिवर्तन का आशय दशकों, सदियों या उससे अधिक समय में होने वाली जलवायु में दीर्घकालिक परिवर्तनों से है। यह मुख्य रूप से जीवाश्म ईंधन (जैसे– कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस) को जलाने के कारण पृथ्वी के वातावरण में तेजी से बढ़ती ग्रीन हाउस गैसों के कारण होता है। ये गर्मी-पैमाने वाली गैसें पृथ्वी और महासागरों को गर्म कर रही हैं, जिसके परिणामस्वरूप समुद्र का जल–स्तर बढ़ रहा है, तूफान के पैटर्न में बदलाव, समुद्र की धाराओं में बदलाव, बारिश में बदलाव, बर्फ और बर्फ पिघलना, अधिक चरम गर्मी की घटनाएँ, आग और सूखा इत्यादि। इन प्रभावों को जारी रखने और कुछ मामलों में मानव स्वास्थ्य, बुनियादी ढाँचे, जंगलों, कृषि, मीठे पानी की आपूर्ति, समुद्र तटों और समुद्री प्रणालियों को प्रभावित करने तथा तेज करने का अनुमान है।

जलवायु परिवर्तन का क्या प्रभाव है? प्राकृतिक घटनाओं में जिस तरह से अचानक से बदलाव आए हैं, वह जलवायु परिवर्तन का ही परिणाम है। तूफानों की संख्या बढ़ गई है, भूकम्पों की आवृत्ति बढ़ गई है, नदियों में बाढ़ का विकराल स्वरूप आदि घटनाएँ पहले से कहीं अधिक बढ़ गई हैं, जिसका सीधा असर जीवन और जीवित रहने के माध्यमों पर पड़ रहा है।

यदि तापमान यूँ ही बढ़ता रहा तो कुछ क्षेत्र निर्जल (जल विहीन) हो सकते हैं और इससे खेत रेगिस्तान में परिवर्तित हो सकते हैं। तापमान बढ़ने के कारण कुछ इलाकों में इसके विपरीत परिणाम भी हो सकते हैं। भारी बारिश के कारण बाढ़ आ सकती है। हाल ही में चीन, बेल्जियम, जर्मनी और नीदरलैण्ड्स में आई बाढ़ इसी का परिणाम है। तापमान वृद्धि का सबसे बुरा प्रभाव गरीब देशों पर होगा क्योंकि उनके पास जलवायु परिवर्तन को अनुकूल बनाने के लिए धन नहीं है। अनेक विकासशील देशों में खेती और फसलों को पहले से ही बहुत गर्म जलवायु का सामना करना पड़ रहा है और ठोस कदम में अभाव में इनकी स्थिति और बदतर हो जाएगी।

जलवायु परिवर्तन : भारत को दी गई डेडलाइन पर है दुनिया की नजर– जलवायु परिवर्तन और स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों के उपयोग पर पर्यावरण प्रमुखों की मुलाकातें तो हुईं लेकिन इस बारे म अभी भी स्पष्ट नहीं है कि भारत की अपने शून्य–उत्सर्जन के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु क्या योजना है ?

भारत और अमेरिका ने भारत–अमेरिका जलवायु और स्वच्छ ऊर्जा एजेंडा 2030 साझेदारी के तहत 'क्लाइमेट एक्शन एंड फाइनेंस मोबिलाइजेशन डायलॉग' (CAFMD) शुरू किया है जिसे लेकर भारत ने प्रसन्नता व्यक्त की। भारत ने जलवायु परिवर्तन नीतियों एवं कार्यों पर 59 देशों और यूरोपीय संघ का आकलन करते हुए, सीओपी 27 में जारी किए गए सीसीपीआई 2023 में 2 स्थान (रैंक) का सुधार किया है। जलवायु परिवर्तन के प्रदर्शन के आधार पर भारत को विश्व के शीर्ष 5 देशों में एवं जी–20 देशों में सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है।

नेट जीरो और देशों की स्थिति– नेट–जीरो का आशय है जितना संभव हो ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करना अथवा किसी देश का कुल कार्बन–उत्सर्जन शून्य होना। यानी जो भी मानव जनित कार्बन उत्सर्जन हो रहा है वह सिंक हो जाए।

इस प्रकार वातावरण में जाने वाली कार्बन की मात्रा शून्य होगी। इससे ग्लोबल वॉर्मिंग के खतरे से निपटा जा सकेगा। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु इस स्वच्छ ऊर्जा के प्रयोग को बढ़ाने और वृक्षारोपण जैसे उपाय अपनाने होंगे।

चीन, विश्व का सबसे बड़ा कार्बन उत्सर्जक देश है। चीन घोषणा कर चुका है कि वह 2060 तक कार्बन विहीन हो जाएगा तथा उसका उत्सर्जन 2030 से पहले अपने चरम पर पहुँच जाएगा। दूसरे सबसे बड़े कार्बन उत्सर्जक देश अमेरिका ने नेट–जीरो तक पहुँचने के लिए 2050 तक का लक्ष्य रखा है। अमेरिका का कहना है कि वह 2035 तक अपने पॉवर सेक्टर को डी–कार्बोनाइज कर देगा।

परन्तु विश्व के तीसरे सबसे बड़े कार्बन उत्सर्जक देश भारत ने न तो अपने लिए नेट–जीरो का कोई लक्षित वर्ष तय किया है और न ही उसने सयुक्त राष्ट्र को अभी तक कोई प्रस्तावित योजना ही दी है। जबकि पेरिस समझौते के अन्तर्गत प्रत्येक पाँच वर्ष में यह देना जरूरी है। संयुक्त राष्ट्र का कहना है कि समझौते में भाग लेने वाले 191 देशों में से अब तक केवल 113 देश ही बेहतर योजनाओं और नीतियों के साथ आए हैं।

जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु वैश्विक प्रयास– जलवायु परिवर्तन पर अन्तर–सरकारी पैनल, जलवायु परिवर्तन से सम्बन्धित वैज्ञानिक आकलन करने हेतु संयुक्त राष्ट्र का एक निकाय है जिसमें 195 सदस्य देश हैं। इसका उद्देश्य जलवायु परिवर्तन, इसके प्रभाव और भविष्य के संभावित जोखिमों के साथ–साथ अनुकूलन तथा जलवायु परिवर्तन को कम करने हेतु नीति निर्माताओं को रणनीति बनाने हेतु नियमित वैज्ञानिक आकलन प्रदान करना है।

IPCC आकलन सभी स्तरों पर सरकारों को वैज्ञानिक सूचनाएँ प्रदान करता है, जिसका इस्तेमाल जलवायु के प्रति उदार नीति विकसित करने हेतु किया जा सकता है। IPCC आकलन जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय वार्ताओं में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन फ्रेमवर्क सम्मेलन– यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है जिसका उद्देश्य वायुमण्डल में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। यह समझौता जून, 1992 के पृथ्वी सम्मेलन के दौरान किया गया था। विभिन्न देशों द्वारा इस समझौते पर हस्ताक्षर के बाद 21 मार्च, 1994 में इसे लागू किया गया। वर्ष 1995 से निरन्तर UNFCCC की वार्षिक बैठकों का आयोजन किया जाता है। इसके अन्तर्गत ही वर्ष 1997 में बहुचर्चित क्योटो समझौता हुआ और विकसित देशों (एनेक्स–1 में शामिल देश) द्वारा ग्रीन हाउस गैसों को नियंत्रित करने हेतु लक्ष्य निश्चित किया गया। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत 40 औद्योगिक देशों को अलग सूची एनेक्स–1 में रखा गया है। UNFCCC की वार्षिक बैठक को कॉन्फ्रेंस ऑफ द पार्टीज़ के नाम से जाना जाता है।

प्रश्न–11. जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु भारत के प्रयास क्या हैं?

उत्तर– जलवायु परिवर्तन और भारत के प्रयास– निम्नवत् हैं–

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना– भारत में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना का शुभारम्भ वर्ष 2008 में किया गया था। इसका उद्देश्य जनता के प्रतिनिधियों, सरकार की विभिन्न एजेंसियों, वैज्ञानिकों, उद्योग और समुदायों को जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न खतरे और इससे मुकाबला करने के उपायों के बारे में जागरूक करना है।

इस कार्ययोजना में प्रमुख रूप से निम्नलिखित 8 मिशन शामिल हैं–

(1) राष्ट्रीय सौर मिशन।
(2) विकसित ऊर्जा दक्षता के लिए राष्ट्रीय मिशन।
(3) राष्ट्रीय जल मिशन।
(4) सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन।
(5) हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन।
(6) सुस्थिर हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय मिशन।
(7) जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक ज्ञान पर राष्ट्रीय मिशन।
(8) सुस्थिर कृषि हेतु राष्ट्रीय मिशन।

अन्तर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA)–

(1) अन्तर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA) सौर ऊर्जा से सम्पन्न देशों का एक संधि आधारित अन्तर–सरकारी संगठन है। अन्तर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की पहली बैठक का आयोजन नई दिल्ली में किया गया था।
(2) अन्तर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA) का आरम्भ भारत और फ्रांस ने 30 नवम्बर, 2015 को पेरिस जलवायु सम्मेलन के दौरान किया है। इसका मुख्यालय गुरुग्राम (हरियाणा) में है।
(3) ISA के प्रमुख उद्देश्यों में वैश्विक स्तर पर 1000 गीगावाट से अधिक सौर ऊर्जा उत्पादन क्षमता प्राप्त करना और 2030 तक सौर ऊर्जा में निवेश के लिए लगभग 1000 बिलियन से अधिक की राशि को जुटाना शामिल है।

प्रश्न–12. हिन्द महासागर क्षेत्र (आईओआर) क्या है? भारत के लिए हिन्द महासागर क्षेत्र का भू–रणनीतिक महत्व समझाइये।

अथवा

भू–राजनीति से क्या आशय है? भारत की विदेश नीति में हिन्द महासागर का महत्व समझाइए।

उत्तर– हिन्द महासागर– हिन्द महासागर पृथ्वी ग्रह पर तीसरा सबसे विशाल जल भंडार है। हिन्द महासागर को दुनिया में पाए जाने वाले पाँच महासागरों में से एक के रूप में परिभाषित किया गया है। अन्य चार के नाम प्रशांत महासागर (सबसे बड़ा), अटलांटिक महासागर, आर्कटिक महासागर और दक्षिणी–अंटार्कटिक महासागर हैं। इसमें पृथ्वी के जलीय सतह क्षेत्र का लगभग 20% शामिल हैं। हिन्द महासागर पूर्वी गोलार्द्ध में स्थित है और इसकी सीमाएँ अनेक महाद्वीपों से लगती हैं। यह महाद्वीपीय संयुक्त राज्य अमेरिका के आकार का लगभग 5.5 गुना है।

हिन्द महासागर एकमात्र महासागर है जिसका नाम किसी देश अर्थात् भारत के नाम पर रखा गया है। महासागर का आकार लगभग त्रिकोणीय है। उत्तर में यह एशिया से, पश्चिम में अफ्रीका से और पूर्व में ऑस्ट्रेलिया से घिरा है।

हिन्द महासागर क्षेत्र (आईओआर) क्या है?– आईओआर मोटे तौर पर हिन्द महासागर के तटीय राज्यों वाले क्षेत्रों को परिभाषित करता है। आईओआर में कई उप–क्षेत्र शामिल हैं, जैसे ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण पूर्व एशिया, दक्षिण एशिया, अफ्रीका का हॉर्न ('हॉर्न' में 'सोमाली प्रायद्वीप' और इथियोपिया का पूर्वी भाग शामिल है) और दक्षिणी और पूर्वी अफ्रीका। यह एक स्पष्ट सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विविधता द्वारा चिन्हित है।

भारत की विदेश नीति में हिन्द महासागर का महत्व– ये निम्नवत् हैं–

हिन्द महासागर का भू–राजनीतिक महत्व– हिन्द महासागर का भू–राजनीतिक महत्व इस बात से है कि यह व्यापक हिन्द महासागर क्षेत्र (आईओआर) का केन्द्र बिन्दु है। आर्थिक विकास और मंदी, सैन्य विस्तार, प्राकृतिक संसाधनों की बढ़ती माँग, भू–राजनीतिक स्थिति के साथ संयुक्त जनसांख्यिकी, परमाणु–सक्षम अभिनेताओं की बढ़ती उपस्थिति और शासन की क्षेत्रीय संरचनाओं में भिन्नता का संयोजन, इसके क्षेत्र भू–राजनीतिक महत्व पर प्रकाश डालता है।

(1) हिन्द महासागर विश्व का तीसरा सबसे बड़ा जल निकाय है जिसमें संचार के महत्वपूर्ण समुद्री रास्ते हैं और जो एशिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं को पोषण देता है। विश्व का लगभग 80 प्रतिशत समुद्री तेल व्यापार इस महासागर के चोक पॉइंट से होकर गुजरता है और इसलिए यह पूर्व को पश्चिम से जोड़ता है।
(2) क्षेत्र में शासन की अलग–अलग प्रणाली क्षेत्रीय सुरक्षा वास्तुकला की रूपरेखा निर्धारित करती हैं। अन्तर–क्षेत्रीय और अतिरिक्त–क्षेत्रीय दोनों देशों के बीच सम्बन्ध जटिल मैट्रिक्स को आकार देते हैं जो समग्र वास्तुकला को परिभाषित करता है। राजनीतिक विचार प्रक्रियाओं में बदलाव और सम्बन्धों में कोई भी बदलाव क्षेत्र के सुरक्षा परिदृश्य को बदल सकता है।
(3) क्षेत्र में समुद्री बलों और उनकी क्षमताओं का क्रमिक रूप से तीव्र विस्तार हुआ है। अतिरिक्त–क्षेत्रीय शक्तियों और परमाणु–सक्षम देशों की बढ़ती उपस्थिति ने मौजूदा सुरक्षा ढाँचे को और बदल दिया है। यह मौजूदा सैन्य सन्तुलन को प्रभावित कर रहा है और आसन्न असन्तुलन एक नई वास्तुकला का निर्माण कर सकता है जो मौजूदा सुरक्षा परिदृश्य को प्रभावित कर सकता है।
(4) कुछ देशों की आर्थिक उन्नति और अन्य देशों की स्थिरता–नदी ऐसी चुनौतियाँ खड़ी कर रही हैं जो क्षेत्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों को प्रभावित कर सकती हैं। अतिरिक्त–क्षेत्रीय व्यापार की तुलना में अन्तर–क्षेत्रीय व्यापार की कमी ने क्षेत्र के देशों के बीच सम्बन्धों को सीमित कर दिया है। इसके साथ ही उपलब्ध संसाधनों के दोहन के लिए बढ़ती प्रतिस्पर्धा और दौड़ भी शामिल है, जो आने वाले समय में इस क्षेत्र के लिए नई चुनौतियाँ ला सकती हैं।

हिन्द महासागर (आईओआर) का भू–रणनीतिक महत्व– हिन्द महासागर क्षेत्र जबरदस्त भू–राजनीतिक, भू–आर्थिक और भू–रणनीतिक महत्व रखता है। अफ्रीका के पूर्वी तट से लेकर ऑस्ट्रेलिया के पश्चिमी तट तक फैला हिन्द महासागर क्षेत्र (आईओआर) पृथ्वी की सतह पर पानी का पाँचवाँ भाग है। इसके विशाल समुद्री और महाद्वीपीय विस्तार में महाद्वीपीय द्वीपों से लेकर द्वीपसमूह तक लगभग 38 देश शामिल हैं और यह लम्बे समय से व्यापारियों, नौसैनिकों और नौसेनाओं के लिए एक चौराहा रहा है। पारगमन मार्ग पूर्व और पश्चिम को जोड़ते हैं और इंडो–पैसिफिक ने अर्थव्यवस्थाओं को पूरक करते हैं, विशेष रूप से मलक्का जलडमरूमध्य, होर्मुज जलडमरूमध्य, बाब अल मंडेब और ओमबाई और वेटर जलडमरूमध्य जैसे महत्वपूर्ण अवरोध बिन्दुओं के माध्यम से इसके अतिरिक्त यह क्षेत्र तेल और प्राकृतिक गैस जैसे हाइड्रोकार्बन संसाधनों, समुद्र तट के किनारे उपजाऊ मछली पकड़ने के मैदान और पॉलीमेटेलिक नोड्यूल जैसी दुर्लभ सामग्री से समृद्ध है।

हिन्द महासागर में राजनयिक सम्बन्ध भारत की सबसे बड़ी ताकत है। ऐतिहासिक सम्बन्धों से जन्मे, द्वीप देशों ने भारतीय भागीदारी का स्वागत किया है। क्षेत्र में सभी के लिए

सुरक्षा और विकास (SAGAR) और कोलम्बो सुरक्षा कॉन्क्लेव जैसी पहल में मालदीव, श्रीलंका और भारत के वरिष्ठ अधिकारी शामिल हैं। सागर के माध्यम से भारतीय नौसेना ने कोविड–19 महामारी के दौरान चिकित्सा सहायता दल और खाद्य सहायता भी प्रदान की और यह नई दिल्ली की मानवीय पहुँच और मालदीव, मॉरीशस, मेडागास्कर, कोमोसेस और सेशेल्स जैसे द्वीप राज्यों को दिए गए महत्व का प्रमाण है। इस प्रकार के कदम क्षेत्र (IOR) में भारत की भूमिका को मजबूत करने में सहायता करते हैं।

मॉरीशस को भारत ने आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्य समूह में विशेष आमंत्रित सदस्य के रूप में काम करने हेतु आमंत्रित किया, जिसका नेतृत्व नई दिल्ली इस वर्ष जी–20 के मेजबान के रूप में करेगी। यह कदम समूह में मॉरीशस के इनपुट को बढ़ाता है और उस मुद्दे पर सहयोग को बढ़ावा देता है जिसकी द्वीप के नागरिक सबसे अधिक चिन्ता करते हैं। जलवायु लचीलेपन, टेली–एजुकेशन और टेलीहेल्थ में प्रशिक्षण और कौशल विकास प्रदान करने के अतिरिक्त रास्ते राजनयिक पैठ को आगे बढ़ा सकते हैं।

भारत ने सूचना प्रभुत्व में पहले ही महत्वपूर्ण प्रगति की है। 2018 में, नई दिल्ली ने अवैध मछली पकड़ने, नशीली दवाओं की तस्करी और मानव तस्करी जैसी चुनौतियों से बेहतर ढंग से निपटने हेतु सूचना संलयन केन्द्र– हिन्द महासागर क्षेत्र लॉन्च किया। सरकार ने राष्ट्रीय समुद्री डोमेन जागरूकता परियोजना को भी मंजूरी दे दी, जो समुद्री खतरों से निपटने के लिए 'कार्रवाई योग्य खुफिया जानकारी' प्रदान करेगी।

भारत के लिए IOR का भू–रणनीतिक महत्व– ये निम्नवत् है–

(1) **भारत केन्द्र में है–** आईओआर में भारत की केन्द्रीय स्थिति उसे अत्यधिक लाभ देती है और साथ ही कहीं अधिक बड़ी चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करती है।

(2) **ऊर्जा सुरक्षा–** समुद्र के द्वारा कुल तेल आयात, अपतटीय तेल उत्पादन और पेट्रोलियम निर्यात को ध्यान में रखते हुए, तेल के लिए देश की संचयी 'समुद्र पर निर्भरता' लगभग 93% होने का अनुमान है।

(3) **समुद्र पर निर्भरता–** वर्तमान में, भारत का लगभग 95% व्यापार मात्रा के हिसाब से और 68% व्यापार मूल्य के हिसाब से हिन्द महासागर के माध्यम से होता है।

(4) **मछली पकड़ना और जलीय कृषि–** भारत हिन्द महासागर के संसाधनों पर बहुत अधिक निर्भर है। मछली पकड़ने और जलीय कृषि उद्योग निर्यात का एक प्रमुख स्रोत होने के साथ–साथ 14 मिलियन से अधिक लोगों को रोजगार देते हैं।

(5) **विशाल समुद्री सीमा–** सैन्य रूप से इतनी लम्बी तटरेखा की उपस्थिति भारत को समुद्र से उत्पन्न संभावित खतरों के प्रति संवेदनशील बनाती है।

(6) **शत्रुतापूर्ण पड़ोस–** भारत में सबसे भयानक आतंकवादी हमलों में से एक 2008 का मुम्बई में ताज होटल पर हमला समुद्र के रास्ते आने वाले आतंकवादियों द्वारा किया गया था।

(7) **अप्रत्याशित और गैर–पारम्परिक खतरे–** समुद्री डकैती, तस्करी, अवैध मछली पकड़ने और मानव तस्करी जैसे गैर–पारम्परिक खतरों की उपस्थिति भी बड़ी चुनौतियाँ पेश करती हैं और इसलिए एक सुरक्षित हिन्द महासागर भारत के राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित करने की चाभी है।

भारत द्वारा निम्नलिखित विभिन्न कदम उठाए गए हैं–

(1) हिन्द महासागर रिम एसोसिएशन (IORA), हिन्द महासागर नौसेना संगोष्ठी (आईओएनएस), और नौसैनिक अभ्यास मिलन एक सुसंगत रणनीतिक इरादे को प्रकट करने में भारत के कुछ स्वागत योग्य कदम हैं।

(2) इस क्षेत्र में सभी के लिए सुरक्षा और विकास (SAGAR), प्रोजेक्ट मौसम और प्रस्तावित एशिया–अफ्रीका ग्रोथ कॉरिडोर जैसी पहलों द्वारा और बढ़ाया गया है।

(3) इंडोनेशिया, म्यांमार, थाईलैण्ड और बांग्लादेश के साथ द्विपक्षीय/बहुपक्षीय नौसैनिक अभ्यास और कॉपरेट (समन्वित गश्ती) में भारतीय नौसेना की भागीदारी बढ़ रही है।

(4) भारत पहले से ही विनिमय कार्यक्रमों के भाग के रूप में विभिन्न IOR देशों के नौसैनिकों के प्रशिक्षण में शामिल हैं।

(5) इसके अलावा, भारत मॉरीशस, श्रीलंका, म्यांमार, मालदीव और सेशेल्स जैसे देशों को नौसैनिक सम्पत्ति की आपूर्ति भी कर रहा है।

निष्कर्ष– आपसी सम्मान और शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के भारतीय मूल मूल्य अपार सद्भावना पैदा करते हैं और पूरे IOR में आत्मविश्वास पैदा करते हैं। हिन्द महासागर क्षेत्र (IOR) के छोटे देशों ने मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुसार नेविगेशन की स्वतंत्रता और वैश्विक जल के उपयोग को सुनिश्चित करने में भारतीय नौसेना के वास्तविक इरादे को मान्यता दी है। हालांकि, इस इरादे को एक मिलन क्षमता और एक स्पष्ट रणनीति द्वारा दृढ़ता से समर्थित होने की आवश्यकता है।

प्रश्न–13. भू–राजनीति क्या है? समझाइए तथा भू–राजनीति का महत्व लिखिए।

उत्तर– भू–राजनीति एक ढाँचा है जिसका उपयोग हम अपने आस–पास की जटिल दुनिया को समझने के लिए करते हैं। वैश्विक राजनीति, या 'विश्व में आप जो प्राप्त करना चाहते हैं' भौगोलिक रूप से विचार करना और कार्य करना शामिल है। भू–राजनीति हमें यह संकेत करती है कि कैसे देश, व्यवसाय, आतंकवादी समूह आदि विश्व की भौगोलिक विशेषताओं को नियंत्रित करके अपने राजनीतिक लक्ष्यों तक पहुँचने का प्रयास करें। हम इन विशेषताओं को भौगोलिक इकाइयाँ कहते हैं। भौगोलिक इकाइयाँ वे स्थान, क्षेत्र, पैमाने और नेटवर्क हैं जो विश्व का निर्माण करते हैं।

भू–राजनीति की परिभाषा– भू–राजनीति इस बात का अध्ययन करती है कि किस तरह उसके भौगोलिक तत्व राजनीति को प्रभावित करते हैं?

(1) रैंटजेल एवं जेलेन के अनुसार, 'भू–राजनीति का सम्बन्ध क्षेत्र की भौगोलिकता व राजनीतिक स्वरूपों से है।'

(2) हेरिटेज डिक्शनरी के अनुसार, 'किसी क्षेत्र या राष्ट्र को प्रभावित करने वाले भौगोलिक और राजनीतिक संयोजनों को भू–राजनीति कहते हैं।'

भू–राजनीतिज्ञों के अनुसार, ब्रिटेन की सम्पूर्ण राजनीति को उसके राजनीतिक कार्यकर्ताओं की, उसकी द्वीपीय स्थिति और जलवायु की विशेषता सम्बन्धी चेतना निर्धारित करती है। आधुनिक भू–राजनीतिज्ञ व्यवहारवाद की शब्दावली को अपनाकर यह बताने का प्रयास करते हैं कि राजनीतिक नेता के कार्यकलाप किसी स्थान संचार साधनों के बारे में उसकी स्वयं की धारणाओं व जीवन के निजी अनुभवों पर आधारित होते हैं।

भू–राजनीति का महत्व– ये निम्नवत् हैं–

(1) इसका अध्ययन देश की सीमा सुरक्षा में सहायक होता है।

(2) भू–राजनीति के अध्ययन से दार्शनिक विवेचन के साथ–साथ व्यावहारिक जीवन में इसकी उपयोगिता का पता चलता है।

(3) भू–राजनीति के अध्ययन से देश की आन्तरिक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है, जैसे– जनसंख्या आर्थिक, भाषा, धर्म एवं जाति इत्यादि।

(4) भू–राजनीति के अध्ययन से नवीन समस्याओं का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और पूर्व समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है।

(5) इससे निर्वाचन प्रणाली की सफलता व असफलता का ज्ञान होता है।

(6) भू–राजनीति में राजनीतिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों का अध्ययन साथ–साथ किया जा सकता है।

(7) **राज्य के प्राकृतिक तत्वों का ज्ञान–** भू–राजनीति में राज्य के भौगोलिक तत्वों जैसे– स्थिति, आकार, विस्तार, जलवायु, तटरेखा एवं धरातल इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

(8) **वैश्वीकरण का विकास–** भू–राजनीति विश्व के राज्यों के बीच पारस्परिक सम्बन्धों का एक प्रारूप प्रस्तुत करता है। यह अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों या विवादों का सही रूप प्रस्तुत करता है।

(9) **शांति में सहायक–** भू–राजनीति विभिन्न राज्यों में आपसी मतभेदों को सुलझाकर शांति कायम रखती है। विश्व में गरीबी या अमीरी का कारण वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियाँ होती हैं।

इन तत्वों का वहाँ की राजनीति, प्रशासन तंत्र रक्षा एवं विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। शासन, व्यवस्था का भौगोलिक परिवेश में मूल्यांकन, वातावरण की अनुकूलता या प्रतिकूलता पर राज्य शासन की सफलता या असफलता निर्भर करती हैं। राज्य की शक्तियों एवं विकास की उचित व सही जानकारी भू–राजनीति से होती है।

भारत ने भू–राजनीति के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रमुख भागीदार के रूप में अपनी पहचान बनाई है। भारत ने यह पहचान अपनी गतिशील और अनुकूलनशील विदेश नीति के बल पर प्राप्त की है। बदलती सरकारों और बदलते वैश्विक भू–राजनीतिक परिदृश्य के अनुसार समय–समय पर भारत की विदेश नीति में भी परिवर्तन किए जाते रहे हैं। भारत की विदेश नीति की कुछ विशेषताएँ स्थिर बनी हुई हैं जबकि कुछ विशेषताओं में वैश्विक परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तन हुए हैं। भारत की विदेश नीति किसी न किसी रूप में भारत के नागरिकों और निवासियों को प्रभावित करती है।

प्रश्न–14. भू–अर्थशास्त्र क्या है? इसका महत्व बताइए।

उत्तर– शीत युद्ध की समाप्ति के बाद 'भू–अर्थशास्त्र' शब्द पहली बार प्रमुखता में आया। यह किसी देश द्वारा आर्थिक और वाणिज्यिक अवसरों, व्यापक राजनीतिक और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों और सैन्य क्षमताओं सहित अपने रणनीतिक हितों के अनुसरण को दर्शाता है। यह दृष्टिकोण अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में आर्थिक कारकों के बढ़ते महत्व में निहित है। वास्तव में यह भू–राजनीति की ही एक शाखा है, जिसे भू–अर्थशास्त्र का नाम दिया गया है। यदि इसे परिभाषित किया जाये तो अर्थव्यवस्थाओं और संसाधनों के स्थानिक, लौकिक और राजनीतिक पहलुओं का अध्ययन भू–अर्थशास्त्र कहलाता है।

भू–अर्थशास्त्र का महत्व– ये निम्नवत् है–

(1) राज्यों को आर्थिक युद्ध के लिए अपने रास्तों को विकसित करना चाहिए। जब सरकारें राजनीतिक लक्ष्यों को आगे बढ़ाने हेतु वैश्विक अर्थव्यवस्था के बुनियादी

ढाँचे का उपयोग करने लगती हैं, तो वे वास्तव में प्रणाली की सार्वभौमिकता को चुनौती देने लगती हैं जिससे यह संभावना बन जाती है कि अन्य शक्तियाँ इसके खिलाफ अपना बचाव करेंगी। परिणामस्वरूप प्रतिशोध में फिर हमले भी भड़क सकते हैं। जिस प्रकार से राज्यों ने समझौतों और सम्मेलनों की एक ऐसी श्रृंखला को विकसित किया है जो देशों के बीच पारस्परिक युद्धों के संचालन को नियंत्रित करती है, ठीक उसी प्रकार इन सिद्धान्तों को आर्थिक क्षेत्र में लागू किया जाना आवश्यक है।

(2) राज्यों को सही आर्थिक भूमिका खोजनी चाहिए और नियमों के नए रूपों का अनुसरण करना चाहिए।

(3) यदि भू–आर्थिक प्रतिस्पर्धा और परिवर्ती कारकों द्वारा उत्पन्न जोखिमों को कम करना है तो व्यवसायों को व्यापक वैश्वीकरण को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। व्यापार उदारीकरण और विदेशी निवेश के लिए इसे एक ठोस मध्यस्थ होना चाहिए जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को दृढ़ता प्रदान करेगा और युद्ध के लिए संरक्षणवाद और प्रोत्साहन को कम कर देगा।

(4) राज्यों को 'विशालतम के अस्तित्व' और कमजोरों के एकत्रीकरण से जुड़े रहना चाहिए। जब कोई छोटा देश क्षेत्रीय उत्प्रेरण पर निर्भर हो जाता है, तो उसकी अर्थिक और सामरिक रूप से स्वयं को बेहतर बनाने और उसे बनाए रखने की क्षमता सीमित हो जाती है। इससे बचाव हेतु छोटे राज्यों को अपने संसाधनों को निरन्तर संग्रहीत करने और स्थानीय प्रमुख शक्तियों को अधिक चुनौती देना जरूरी है।

(5) विश्व भर के संस्थानों के बजाय प्रमुख क्षेत्रीय प्रतिद्वन्द्वियों और उप–वैश्विक राजनीति पर ध्यान देना जरूरी है। वैश्विक समस्याओं के समाधान के लिए नागरिक समाज को अधिक व्यवहारिक होने की आवश्यकता है।

इस प्रकार भू–अर्थशास्त्र दृष्टिकोण तेजी से बदलती विश्व व्यवस्था के संदर्भ में विभिन्न देशों और क्षेत्रों के साथ अपने बहुआयामी सम्बन्धों में भारत की आर्थिक कूटनीति को एकीकृत करने के महत्व पर जोर देता है। इसके लिए किसी अवसर या घटना विशिष्ट लचीली रणनीति के साथ रणनीतिक सोच की आवश्यकता होती है। सरकार के विभिन्न स्तरों के बीच और वैश्विक स्तर पर भारत के आर्थिक और रणनीतिक स्थान का विस्तार करने हेतु सरकार, व्यवसायों, विश्वविद्यालयों, थिंक टैंक और मीडिया के बीच मंत्रालयों के भीतर समन्वय होना चाहिए।

प्रश्न–15. वन बेल्ट–वन रोड परियोजना क्या है? इसके भारत पर क्या प्रभाव होंगे?

अथवा

वन बेल्ट–वन रोड परियोजना को समझाइए। इस परियोजना से चीन को क्या लाभ होंगे?

अथवा

चीन की वन बेल्ट–वन रोड परियोजना को विस्तार से समझाइए।

उत्तर– वन बेल्ट–वन रोड (एक पट्टा–एक सड़क) चीन द्वारा प्रायोजित एक योजना है जिसमें पुराने सिल्क रोड के आधार पर एशिया, अफ्रीका और यूरोप के देशों को सड़कों और रेल मार्गों से जोड़ा जाना है। इस परियोजना के लिए निम्न तीन बेल्टों को स्वीकृति दी गई है–

(1) नॉर्थ बेल्ट (2) सेंट्रल बेल्ट (3) साउथ बेल्ट।

चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग द्वारा यह परियोजना 2013 में शुरू की गई थी। इसे 'सिल्क रोड इकॉनोमिक बेल्ट' और 21वीं सदी के समुद्री सिल्क रोड (वन बेल्ट, वन रोड)

के रूप में भी जाना जाता है। यह एक विकास रणनीति है जो कनेक्टिविटी पर केन्द्रित है। इसके माध्यम से सड़कों, रेल, बंदरगाह, पाइपलाइनों और अन्य बुनियादी सुविधाओं को जमीन और समुद्र से होते हुए एशिया, यूरोप और अफ्रीका से जोड़ने का विचार है। इस योजना द्वारा चीन अपना वैश्विक स्तर पर प्रभुत्व बनाना चाहता है।

वन बेल्ट–वन रोड परियोजना– वन बेल्ट, वन रोड परियोजना के माध्यम से चीन प्राचीन सिल्क मार्ग को फिर से विकसित कर रहा है। इस महत्वपूर्ण परियोजना के द्वारा चीन सड़कों, रेल, बंदरगाह, पाइपलाइनों और अन्य बुनियादी सुविधाओं के माध्यम से मध्य एशिया से लेकर यूरोप और फिर अफ्रीका तक स्थलीय व समुद्री मार्ग तैयार कर रहा है। वन बेल्ट, वन रोड परियोजना की शुरूआत चीन ने वर्ष 2013 में की थी। यह परियोजना चीन की विदेश नीति का एक हिस्सा है। इस परियोजना में एशिया, अफ्रीका और यूरोप के अनेक बड़े देश शामिल हैं। चीन की इस परियोजना का उद्देश्य दक्षिण पूर्व एशिया, मध्य एशिया, गल्फ कंट्रीज, अफ्रीका और यूरोप के देशों को सड़क और समुद्री मार्ग से जोड़ना है। चीन की यह योजना दुनिया के लगभग 80 से अधिक देशों को सड़क, रेल और समुद्री मार्ग से जोड़ने का काम करेगी। चीन के अनुसार उसकी इस परियोजना से विश्व के अलग–अलग देश एक–दूसरे के नजदीक आएँगे जिससे आर्थिक सहयोग के साथ आपसी सम्पर्क को भी बढ़ाने में सहायता मिलेगी। चीन के मुताबिक, इस परियोजना का उद्देश्य आर्थिक है जिसके पूरा होने से विश्व का परिदृश्य बदल सकता है।

इस योजना का भारत पर संभावित प्रभाव– भारत की सबसे बड़ी चिंता यह है कि यदि चीन का वन बेल्ट–वन रोड का सपना पूरा हो गया तो चीन निर्विवाद रूप से एशिया की सबसे बड़ी शक्ति के तौर पर उभरेगा, जिससे भारत की महत्वाकांक्षाओं को धक्का लग सकता है। दरअसल चीन चाहता है कि भारत भी उसके वन बेल्ट–वन रोड प्रोजेक्ट का हिस्सा बने, लेकिन भारत इसे लेकर बहुत सावधानी बरत रहा है। इसकी खास वजह यह है कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से गुजरने वाला चीन–पाकिस्तान आर्थिक कॉरिडोर (CPEC) भी OBOR का ही हिस्सा है।

इसके अलावा दिल्ली सरकार ने वन बेल्ट–वन रोड पर इसलिए भी अपनी स्वीकृति नहीं दी है क्योंकि पेइचिंग इसके द्वारा क्षेत्र में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता है। भारत, चीन–पाक, इकॉनामिक कॉरिडोर के खिलाफ लगातार विरोध दर्ज करा रहा है। भारत की दृष्टि में यह कॉरिडोर उसकी सम्प्रभुता को चुनौती देने वाला है। OBOR के माध्यम से चीन अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं को नई दिशा देना चाहता है जो दक्षिण एशिया में उसने करना भी शुरू कर दिया है। भारत पर इसका सीधा तथा प्रतिकूल प्रभाव होगा। चीन की इस पहल में भू–राजनीतिक उद्देश्य निहित हैं।

'वन बेल्ट वन रोड' परियोजना को लेकर भारत के पास विकल्प–

(1) सर्वप्रथम भारत सरकार स्वयं तय करेगी कि वन बेल्ट वन रोड परियोजना उसके लिए खतरा है या एक अवसर। इस परियोजना से लाभ काफी सीमा तक इस बात पर निर्भर करेगा कि भारत की संस्थागत एजेंसियाँ देश के सामरिक उद्देश्यों को पूरा करने में सक्षम है या नहीं।

(2) इस परियोजना के सामरिक जोखिम को कम करने हेतु भारत सीमा प्रबंधन का नवीनीकरण, नए बंदरगाहों का निर्माण करके अपनी सीमा अवसंरचना में सुधार कर सकता है। साथ ही भारत भी विदेशों में बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं को शुरू करने हेतु विदेशी कॉर्पोरेट संस्थाओं को सरकार द्वारा सहयोग देना शुरू कर सकता है।

(3) इस परियोजना के जोखिम को कम करने हेतु भारत को उन क्षमताओं का समर्थन करने की महत्वाकांक्षा को पूरा करने की आवश्यकता है जो उसे हिन्द महासागर क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण सुरक्षा प्रदाता बनने की अनुमति देता है। लेकिन ऐसा करने हेतु भारत को अपनी रक्षा साझेदारी और खरीद के सम्बन्ध में तीव्रता से निर्णय लेने की आवश्यकता होगी।

चीन के लिए OBOR के लाभ– ये निम्नवत् हैं–

(1) OBOR परियोजना चीन को अपने पड़ोसी देशों और सुदूर देशों के साथ सामरिक और आर्थिक सम्बन्धों में सुधार करने में सहायता करेगा। साथ ही इससे चीन अपने पश्चिमी क्षेत्र को विकसित करने और समुद्र पर सुरक्षित नेविगेशन सुनिश्चित कर सकेगा।

(2) यह चीन को हिन्द महासागर में समुद्री सुविधाओं तक पहुँच के माध्यम से 'मलक्का दुविधा' को दूर करने में सहायता करेगा। वहीं इससे चीन को ऊर्जा और खनिज आपूर्ति तक सुरक्षित पहुँच बनाने में भी सहायता मिलेगी। इसलिए इस परियोजना से चीन को महत्वपूर्ण रणनीतिक लाभ मिलने का अनुमान लगाया जा रहा है। OBOR यूरेशियन क्षेत्र में चीन की उपस्थिति को मजबूती प्रदान करेगा और इससे एशिया में चीन काफी प्रभावशाली बनकर उभरेगा।

वन बेल्ट, वन रोड परियोजना के उद्देश्य– ये निम्नवत् हैं–

(1) वन बेल्ट, वन रोड परियोजना के माध्यम से चीन एशिया के साथ–साथ विश्व भर में अपना वर्चस्व कायम करना चाहता है।

(2) चीन वन बेल्ट, वन रोड परियोजना में अनेक देशों के साथ द्विपक्षीय समझौते करके उन्हें ऋण दे रहा है ताकि बाद में उन पर अपनी मनमानी शर्तें थोप सके। इसी के साथ चीन उन देशों के बाजारों पर भी अपना वर्चस्व जमाना चाहता है।

(3) इस परियोजना के द्वारा चीन, दक्षिणी एशिया एवं हिन्द महासागर क्षेत्र में भारत के बढ़ते रुतबे को कम करना चाहता है।

प्रश्न–16. इंडो–पैसिफिक (हिन्द–प्रशांत) क्षेत्र का आशय, क्षेत्र तथा महत्व का वर्णन कीजिए।

अथवा

इंडो–पैसिफिक क्षेत्र क्या है? समझाइए। पैसिफिक क्षेत्र महत्वपूर्ण क्यों है?

उत्तर– इंडो–पैसिफिक क्षेत्र का अर्थ– जैसा कि नाम से ही स्पष्ट होता है कि हिन्द यानी हिन्द महासागर और प्रशांत यानी प्रशांत महासागर के कुछ भागों को मिलाकर जो समुद्र का एक भाग (हिस्सा) बनता है, उसे हिन्द प्रशांत क्षेत्र कहते हैं। वहीं इस क्षेत्र में शामिल देशों को इंडो–पैसिफिक देशों की संज्ञा दी गई है।

अमेरिका के लिए यह क्षेत्र भारत के पश्चिमी तट तक फैला हुआ है, जो कि यूएस इंडो–पैसिफिक कमांड की भौगोलिक सीमा है, जबकि भारत के लिए इसमें पूरा हिन्द महासागर और पश्चिमी प्रशांत महासागर शामिल है।

भारत और इंडो–पैसिफिक क्षेत्र– इंडो–पैसिफिक क्षेत्र के अनेक देश विशेषकर ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका, जापान और इंडोनेशिया आदि भारत की भूमिका को इस क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण मानते हैं। ये सभी देश दक्षिण चीन सागर और पूर्वी चीन सागर में चीन का मुकाबला करने हेतु भारत को एक विकल्प के रूप में देख रहे हैं।

भारत हालांकि इस क्षेत्र में शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देने की दिशा में कार्य करने को तैयार है। भारत के लिए इंडो–पैसिफिक क्षेत्र का अर्थ एक मुक्त, खुले और समावेशी क्षेत्र से है। भारत हिन्द महासागर और प्रशांत महासागर के सभी देशों और उन सभी देशों को इंडो–पैसिफिक क्षेत्र की परिभाषा में शामिल करता है, जिनके हित इस क्षेत्र से जुड़े हुए हैं।

पैसिफिक यानी हिन्द–प्रशांत क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने के उद्देश्य से हाल ही में भारत, फ्रांस और ऑस्ट्रेलिया के बीच त्रिपक्षीय वार्ता का आयोजन किया गया।

नई दिल्ली में आयोजित एशियाई तटरक्षक एजेंसियों के प्रमुखों की 18वीं बैठक में भारत के रक्षा मंत्री ने पारिस्थितिक तंत्र के स्वास्थ्य को संरक्षित करते हुए आर्थिक विकास के लिए समुद्री संसाधनों के सतत उपयोग कर जोर देते हुए कहा कि भारत–प्रशांत क्षेत्र, भारत में खुली और नियम–आधारित समुद्री सीमाओं का पक्षधर है।

पैसिफिक क्षेत्र महत्वपूर्ण क्यों है?

वर्तमान में पैसिफिक क्षेत्र में 38 देश शामिल हैं, जो विश्व के सतह क्षेत्र का 44%, विश्व की कुल आबादी का 65%, विश्व की कुल जीडीपी का 62% तथा विश्व के माल व्यापार का 46% योगदान देता है। इसमें उपभोक्ताओं को लाभ पहुँचाने वाले क्षेत्रीय व्यापार और निवेश के अवसर पैदा करने हेतु सभी घटक मौजूद हैं। इस क्षेत्र में भू–आर्थिक प्रतिस्पर्धा भी बहुत बढ़ रही है, जिसमें विश्व की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाएँ, बढ़ता सैन्य खर्च और नौसैनिक क्षमताएँ, प्राकृतिक संसाधनों को लेकर गलाकाट प्रतिस्पर्धा में शामिल हैं।

दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र है– मलक्का का जलडमरुमध्य। यह रणनीतिक और व्यापारिक दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण है। यह इंडोनेशिया के पास स्थित है। गुआन आईलैण्ड, मार्शल आईलैण्ड रणनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त लाल सागर, गल्फ ऑफ अदेन, पर्शियन, गल्फ ऐसे क्षेत्र हैं, जहाँ से भारत का तेल व्यापार होता है। यहाँ पर हाइड्रोकार्बन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। सेशेल्स और मालदीव भी इसी क्षेत्र में आते हैं। इस प्रकार यह क्षेत्र रणनीतिक तथा व्यापारिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है।

(1) पैसिफिक (प्रशांत) क्षेत्र विश्व के सबसे अधिक आबादी वाले और आर्थिक रूप से सक्रिय क्षेत्रों में से एक है जिसमें एशिया, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया और अमेरिका ये चार महाद्वीप शामिल हैं।

(2) यह क्षेत्र प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए भी एक बड़ा स्रोत और गंतव्य है। विश्व के अनेक महत्वपूर्ण और बड़ी आपूर्ति श्रृंखलाओं का पैसिफिक कनेक्शन हैं।

(3) क्षेत्र की गतिशीलता और जीवन शक्ति स्वयं स्पष्ट है। दुनिया की 60% आबादी और वैश्विक आर्थिक उत्पादन का 2/3 हिस्सा इस क्षेत्र को वैश्विक आर्थिक केन्द्र बनाते हैं।

(4) बड़े समुद्र तट और विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र तटीय देशों को इन संसाधनों के दोहन के लिए प्रतिस्पर्धी क्षमताएँ प्रदान करते हैं।

(5) बदले में भारत, यूएसए, जापान, चीन और ऑस्ट्रेलिया सहित विश्व की अनेक सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाएँ पैसिफिक क्षेत्र में स्थित हैं।

(6) भारत और प्रशांत महासागरों में संयुक्त रूप से समुद्री संसाधनों के विशाल भंडार हैं, जिनमें अपतटीय हाइड्रोकार्बन, मीथेन हाइड्रेट्स, समुद्री खनिज और दुर्लभ पृथ्वी धातुएँ शामिल हैं।

वैश्विक सुरक्षा और नई विश्व व्यवस्था की चाभी हिन्दी–प्रशांत क्षेत्र के हाथ में ही है। इसके अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण क्षेत्र दक्षिण चीन सागर आता है। यहाँ आसियान के देश तथा चीन के मध्य लगातार विवाद चलता है।

पैसिफिक (प्रशांत) क्षेत्र का महत्व– वर्तमान में पैसिफिक क्षेत्र विश्व में आर्थिक विकास का आकर्षण केन्द्र बना हुआ है। विश्व की चार बड़ी अर्थव्यवस्थाएँ जैसे– अमेरिका, चीन, जापान और भारत इसी क्षेत्र में स्थित हैं, जो कि इस क्षेत्र की महत्ता को अत्यधिक बढ़ा देते हैं। इस प्रकार यह क्षेत्र या तो विश्व के आर्थिक विकास को आगे बढ़ाने वाले एक इंजन के तौर पर कार्य कर सकता है या फिर विश्व की अर्थव्यवस्था के विध्वंसक के रूप में कार्य कर सकता है।

(1) पैसिफिक क्षेत्र में ऑस्ट्रेलिया और फ्रांस भारत के प्रमुख साझेदार हैं। इस बैठक से इन तीनों देशों को विगत वर्षों में द्विपक्षीय माध्यम से हासिल हुई प्रगति को और आगे बढ़ाने का अवसर प्राप्त हुआ।

(2) ऑस्ट्रेलिया और फ्रांस, पैसिफिक तथा हिन्द महासागर क्षेत्र में भारत के लिए प्रमुख रणनीतिक साझेदार के रूप में सामने आए हैं और विगत कुछ वर्षों में तीनों देशों के सहयोग में, विशेष रूप से समुद्री क्षेत्र में, काफी वृद्धि हुई है। उदाहरणार्थ भारत ने दोनों देशों (ऑस्ट्रेलिया और फ्रांस) के साथ रक्षा समझौते किये हैं।

(3) पैसिफिक क्षेत्र में चीन के आक्रामक व्यवहार का सामना करने हेतु भारत, ऑस्ट्रेलिया और फ्रांस के साथ अपने सहयोग को बढ़ावा दे रहा है, क्योंकि इन देशों के पास चीन की चुनौती का सामना करने हेतु पर्याप्त क्षमता मौजूद है।

(4) पैसिफिक क्षेत्र सम्पूर्ण विश्व में शांति और समृद्धि को बढ़ावा देने में अनिवार्य भूमिका अदा कर सकता है।

(5) यह त्रिपक्षीय वार्ता ('क्वाड' देशों– जिसमें अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया और भारत शामिल है) के अतिरिक्त है जिससे यह चीन के बढ़ते प्रभाव के विरूद्ध निर्मित हो रहे वैश्विक गठबंधन को अधिक कूटनीतिक शक्ति प्रदान करेगा।

(6) दुनिया की दस सबसे बड़ी स्थायी सेनाओं में से सात पैसिफिक क्षेत्र में शामिल है, यही कारण है कि अमेरिका के मतानुसार, 'पैसिफिक क्षेत्र अमेरिका के भविष्य के लिए सबसे अधिक परिणामी क्षेत्र है।'

(7) पैसिफिक क्षेत्र में विश्व का सबसे अधिक आबादी वाला देश (चीन), सबसे अधिक आबादी वाला लोकतांत्रिक देश (भारत) और सबसे अधिक आबादी वाला मुस्लिम बहुल राज्य (इंडोनेशिया) शामिल है, जिसके कारण यह देश भू–राजनीतिक दृष्टि से भी काफी महत्वपूर्ण हो जाता है।

प्रश्न–17. भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी (पूर्व की ओर देखो नीति) से आप क्या समझते हैं? एक्ट ईस्ट पॉलिसी का क्या महत्व है? समझाइए।

अथवा

भारत की 'पूर्व की ओर देखो नीति' क्या है? इसके उद्देश्य तथा महत्व को समझाइए।

उत्तर– एक्ट ईस्ट पॉलिसी– भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी का उद्देश्य आर्थिक सहयोग, कनेक्टिविटी, व्यापार और सांस्कृतिक सम्बन्धों को प्रोत्साहित करना और हिन्द–प्रशांत क्षेत्र में राष्ट्रों के साथ एक सक्रिय और व्यावहारिक दृष्टिकोण के साथ एक रणनीतिक सम्बन्ध विकसित करना और इस प्रकार उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के आर्थिक विकास को बढ़ाना है, जिसे दक्षिण–पूर्व एशिया क्षेत्र का प्रवेश द्वार माना जाता है। भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी,

अरुणाचल प्रदेश और आसियान क्षेत्र सहित पूर्वोत्तर भारत के बीच एक कड़ी प्रदान करता है।

'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' का उद्देश्य– इस पॉलिसी का उद्देश्य द्विपक्षीय, क्षेत्रीय और बहुराष्ट्रीय स्तरों पर निरन्तर जुड़ाव के माध्यम से आर्थिक सहयोग तथा सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ावा देना और एशिया–प्रशांत क्षेत्र के देशों के साथ रणनीतिक सम्बन्ध विकसित करना है, जिससे उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के राज्यों को बेहतर कनेक्टिविटी प्रदान की जा सके। हमारे पड़ोस के अन्य देशों के साथ अरुणाचल प्रदेश भी शामिल है। भारत का उत्तर–पूर्व हमारी एक्ट ईस्ट पॉलिसी (AEP) में प्राथमिकता रही है। AEP अरुणाचल प्रदेश राज्य और आसियान क्षेत्र सहित उत्तर–पूर्व भारत के बीच एक इन्टरफेस प्रदान करता है। द्विपक्षीय और क्षेत्रीय स्तरों पर विभिन्न योजनाओं में व्यापार, संस्कृति, लोगों से लोगों के बीच सम्पर्क और भौतिक बुनियादी ढाँचे (इनमें सड़क, हवाई अड्डे, बिजली, दूरसंचार आदि के माध्यम से आसियान क्षेत्र के साथ पूर्वोत्तर की कनेक्टिविटी को विकसित और मजबूत करने के निरन्तर प्रयास शामिल हैं)। कुछ प्रमुख परियोजनाओं में कलादान मल्टी–मॉडल ट्रांजिस्ट ट्रांसपोर्ट प्रोजेक्ट, भारत–म्यांमार–थाईलैण्ड त्रिपक्षीय राजमार्ग परियोजना, री–टिडिम रोड परियोजना, बॉर्डर हाट आदि शामिल हैं।

भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी का महत्व– ये निम्नवत् है–

(1) दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र और हिन्द महासागर क्षेत्र में चीन का बढ़ता प्रभाव एक महत्वपूर्ण कारक है जो एक्ट ईस्ट नीति को मजबूत करने हेतु प्रेरित करता है।

(2) क्वाड के साथ भारत का जुड़ाव भी हिन्द–प्रशांत क्षेत्र में इस सुरक्षा को हासिल करने का विस्तार है।

(3) चूँकि सुरक्षा नीति का एक प्रमुख पहलू है, यह भारत–प्रशांत क्षेत्र में नौपरिवहन की स्वतंत्रता और कानून के शासन को सुरक्षित करने में मदद करेगा।

(4) भारत के लिए, एक्ट ईस्ट पॉलिसी अपने उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के लिए अपने दीर्घकालिक विकास लक्ष्यों को पूरा करने और दक्षिण एशिया में चीन की बढ़ती आक्रामकता का मुकाबला करने हेतु अपने आर्थिक विकास को गति देने के लिए एक अतिरिक्त मार्ग खोलने का प्रयास करती है।

(5) शीत युद्ध की समाप्ति और चीन के आगे बढ़ने से भारत–आसियान सम्बन्धों की प्रकृति में काफी परिवर्तन आया है, लेकिन आर्थिक सम्बन्धों और सुरक्षा सहयोग के माध्यम से सम्बन्धों के और सुदृढ़ होने की आशा की जा सकती है।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–(1) पेरिस समझौता: क्या है?

उत्तर– यदि कम शब्दों में कहा जाए तो पेरिस समझौता जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है। वर्ष 2015 में 30 नवम्बर से लेकर 11 दिसम्बर तक 195 देशों की सरकारों के प्रतिनिधियों ने पेरिस में जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु संभावित नए वैश्विक समझौते पर चर्चा की। ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य के साथ सम्पन्न 32 पृष्ठों एवं 29 लेखों वाले पेरिस समझौते को ग्लोबल वार्मिंग को रोकने हेतु एक ऐतिहासिक समझौते के रूप में मान्यता प्राप्त है।

प्रश्न–(2) भारत का एक्ट ईस्ट पॉलिसी के तहत पहल कार्यक्रम क्या है?

उत्तर– भारत का एक्ट ईस्ट पॉलिसी के तहत पहल कार्यक्रम निम्नवत् है–

(1) कनेक्टिविटी बढ़ाने हेतु एक्ट ईस्ट पॉलिसी के तहत पहल।

(2) भारत और बांग्लादेश के बीच अगरतला–अखौरा रेल लिंक।

(3) बांग्लादेश के माध्यम से इंटरमॉडल परिवहन लिंक और अन्तर्देशीय जलमार्ग।

(4) **कलादान मल्टीमॉडल ट्रांजिट ट्रांसपोर्ट प्रोजेक्ट–** म्यांमार के रखाइन राज्य में कलादान परिवहन परियोजना को पूर्वोत्तर राज्यों के साथ सम्पर्क विकसित करने में महत्वपूर्ण माना जाता है।

(5) **त्रिपक्षीय राजमार्ग परियोजना–** यह पूर्वोत्तर को म्यांमार और थाईलैण्ड से जोड़ती है।

(6) भारत–जापान एक्ट ईस्ट फोरम के तहत, सड़क और पुल और पनबिजली परियोजनाओं के उन्नयन जैसी पहल की गई है।

(7) **धुबरी फुलबारी पुल–** ब्रह्मपुत्र नदी पर 19 किलोमीटर लम्बे चार लेन वाले धुबरी फुलबारी पुल की आधारशिला। यह एक नदी पर भारत का सबसे लम्बा पुल का काम होगा, जो असम में धुबरी और मेघालय में फुलबारी को जोड़ता है, जिसे 5,000 करोड़ रुपये की लागत से बनाया गया है।

(8) **महाबाहु–ब्रह्मपुत्र अन्तर्देशीय जलमार्ग कार्यक्रम–** इस जलमार्ग का शुभारम्भ नेमाती–माजुली द्वीप, उत्तरी गुवाहटी–दक्षिण गुवाहाटी और धुबरी–हतिंगमारी के बीच काम करने वाले तीन रो–पैक्स जहाजों के उद्घाटन के रूप में चिन्हित किया जाएगा।

प्रश्न–(3) बिम्सटेक क्या है?

उत्तर– बंगाल की खाड़ी बहु–क्षेत्रीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग पहल (बिम्सटेक) एक क्षेत्रीय बहुपक्षीय संगठन है। इसके सदस्य बंगाल की खाड़ी के समुद्र तट और आस–पास के क्षेत्रों में स्थित हैं, जो एक निकटवर्ती क्षेत्रीय एकता का निर्माण करते हैं।

प्रश्न–(4) भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी का भविष्य क्या है?

उत्तर– एक्ट ईस्ट पॉलिसी का भविष्य निम्नवत् है–

(1) भारत की एक्ट ईस्ट नीति को 12 एशिया–प्रशांत देशों के साथ संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में परिकल्पित ट्रांस–पैसिफिक पार्टनरशिप (TPP) को संभालने की बाधा से निपटना होगा, जिसमें जापान, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड के साथ कुछ आसियान देश शामिल हैं।

(2) सुरक्षा क्षेत्र वह है जिससे एक्ट ईस्ट नीति के लिए नई चुनौतियाँ सामने आने की संभावना है।

(3) चीन हिन्द महासागर में अपनी समुद्री क्षमता को बढ़ाने की तैयारी कर रहा है।

(4) चीन के समुद्री रेशम मार्ग प्रस्ताव में उपमहाद्वीप में बंदरगाहों और अन्य बुनियादी ढाँचे की सम्पत्ति का निर्माण शामिल है।

(5) चीन के उभार ने एशिया में एक सैन्य निर्माण को जन्म दिया है और असुरक्षित स्थिति को प्रकट करते हुए हथियारों के हस्तान्तरण में कई गुना वृद्धि हुई है।

(6) इसका उद्देश्य चीन के शक्ति प्रक्षेपण में बाधा डालना और साथ ही साथ समुद्री डकैती, समुद्री आपदा प्रबंधन और व्यापार के लिए संचार के समुद्री मार्गों को खुला रखने जैसे हितों के सामान्य क्षेत्रों पर सहयोग स्थापित करना होगा।

(7) इसलिए, एक्ट ईस्ट नीति में संयुक्त राज्य अमेरिका, कोरिया, जापान, ऑस्ट्रेलिया और आसियान देशों के साथ सैन्य सहयोग का निर्माण करने वाले काउंटरवेलिंग उपायों को शामिल करना चाहिए।

(8) भारत को सभी एशियाई देशों को शामिल करने हेतु अपने महत्वपूर्ण सांस्कृतिक प्रभाव का भी लाभ उठाना चाहिए।

इकाई-3

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–1. वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के कार्यकाल में भारत–अमरीका सम्बन्धों की विवेचना कीजिये।

अथवा

हाल ही में भारत–अमरीकी सम्बन्धों में आये बदलाव को रेखांकित कीजिये।

अथवा

भारत–अमरीका सम्बन्धों के विकास का विस्तार से विवेचन कीजिये।

अथवा

भारत–अमरीका सम्बन्धों में मतभेद के बिन्दुओं का परीक्षण कीजिये।

अथवा

संयुक्त राष्ट् महासभा अमरीका में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के संबोधन की विवेचना कीजिये।

अथवा

अमेरिका–भारत सम्बन्धों की भावी प्रगति पर प्रकाश डालिए।

उत्तर– प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के कार्यकाल में भारत–अमरीकी सम्बन्धों में प्रगाढ़ता, गर्मजोशी और नई सक्रियता आयी। भारतीय विदेश मंत्री नटवरसिंह अप्रैल, 2005 में अमेरिका यात्रा पर गये। इस दौरान राष्ट्रपति बुश ने द्विपक्षीय सम्बन्धों में नई गर्मजोशी का संकेत देते हुये कहा कि अमेरिका भारत को एक वैश्विक शक्ति मानता है। भारत ने 14 अप्रैल, 2005 को अमरीका के साथ ऐतिहासिक हवाई सेवा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने पाँच दिन की ऐतिहासिक अमरीका यात्रा 26 से 30 दिसम्बर, 2014 को की। उनकी इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य संयुक्त राष्ट्र महासभा के 69वें सत्र को सम्बोधित करना था। महासभा में उनका यह सम्बोधन 27 सितम्बर को होना निर्धारित ता। इसके साथ ही अमरीकी राष्ट्रपति के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों पर उनकी बहुप्रतीक्षित वार्ता का कार्यक्रम भी 30 सितम्बर के लिए निर्धारित था। लगभग 100 घण्टे के अमरीका प्रवास के दौरान 36 महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में भागीदारी के प्रधानमंत्री मोदी के कार्यक्रम थे।

27 सितम्बर, 2014 को न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने सम्बोधन में प्रधानमंत्री मोदी ने संयुक्त राष्ट्र संघ की विगत वर्षों की उपलब्धियों पर संतोष व्यक्त किया तथा साथ ही आगे आने वाली चुनौतियों के सन्दर्भ में इस संगठन में सुधारों की भारत की माँग दोहराई। इस बात पर उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया कि यूएन जैसा अच्छा प्लेटफॉर्म उपलब्ध होने के बावजूद अनेक जी–समूह विगत वर्षों में बनते चले गए। कभी जी–4 तो कभी जी–7 या फिर जी–20 उन्होंने कहा कि आवश्यकता इस बात की है कि हम जी–1 से आगे बढ़कर 'जी–ऑल' की दिशा में कदम उठाएँ। उन्होंने कहा कि कोई एक देश या देशों के समूह विश्व की धारा को तय नहीं कर सकता है। वास्तविक अन्तर्राज्यीय होना समय की माँग है तथा यह अनिवार्य भी है। प्रधानमंत्री ने कहा कि हमारे प्रयासों का प्रारम्भ यहीं संयुक्त राष्ट्र से होना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ में सुधारों की माँग को दोहराते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने इस बात पर भी बल दिया कि संयुक्त राष्ट्र पीस कीपिंग मिशनों में सैन्य टुकड़ियों का योगदान देने वाले देशों को निर्णय प्रक्रिया में भी शामिल करना चाहिए। आतंकवाद के फैलाव के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि 20 वर्ष पूर्व जब वह इसके बारे

में चर्चा करते थे, तो किसी के गले यह बात नहीं उतरती थी तथा 'लॉ एण्ड ऑर्डर प्रॉब्लम' कहकर ही लोग इससे किनारा कर लेते थे उन्होंने बताया कि आज पूरा विश्व देख रहा है कि किस प्रकार के फैलाव को यह पाता जा रहा है इस सन्दर्भ में लम्बे सयम से लम्बित Comprehensive Convention on International Terrorism को पारित करने की आवश्यकता अपने इस सम्बोधन में बताई।

विश्व में विभिन्न अभावों का उल्लेख करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि आज बेसिक सेनीटेशन 2.5 अरब लोगों की पहुँच के बाहर है, 1.3 अरब लोगों को बिजली और 1.1 अरब लोगों को पीने का पानी उपलब्ध नहीं है। इस सन्दर्भ में अधिक व्यापक व संगठित अन्तर्राष्ट्रीय कार्यवाही की आवश्यकता उन्होंने बताई तथा साथ ही उन्होंने बताया कि भारत में उनके विकास एजेंडे के सबसे महत्वपूर्ण पहलू इन्हीं मुद्दों पर केन्द्रित हैं। 2015 के बाद के लिए विकास एजेंडे में इन्हीं बातों को ध्यान में रखने की आवश्यकता उन्होंने बताई। जीवन शैली के बदलाव लाने की आवश्यकता बताते हुए योग के महत्व का उल्लेख भी उन्होंने अपने इस सम्बोधन में किया तथा 'अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस' की दिशा में कार्य करने का आव्हान उन्होंने किया।

पड़ोसी देशों के साथ अच्छे सम्बन्धों की कामना करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने अपने सम्बोधन में कहा कि भारत अपनी प्रगति के लिए शांतिपूर्ण एवं स्थिर अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण की अपेक्षा करता है। उन्होंने कहा कि भारत का भविष्य उसके पड़ोस से जुड़ा हुआ है जिसके कारण ही उनकी सरकार ने पहले ही दिन से पड़ोसी देशों से मित्रता व सहयोग बढ़ाने को पूरी प्राथमिकता दी है। पाकिस्तान, जिसके प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने एक दिन पूर्व ही महासभा में अपने सम्बोधन में कश्मीर में जनमत संग्रह की माँग उठाई थी, के साथ भी मित्रता व सहयोग बढ़ाने की इच्छा व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि इसके लिए गम्भीरता से शांतिपूर्ण वातावरण में बिना आतंक के साये के साथ वह द्विपक्षीय बात करना चाहते हैं, लेकिन इसके लिए उपयुक्त वातावरण बनाने की अपेक्षा उन्होंने पाकिस्तान से की। संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपना यह सम्बोधन श्री मोदी ने हिन्दी में किया तथा महासभा में हिन्दी में सम्बोधन करने वाले वह अटल बिहारी वाजपेयी के बाद दूसरे भारतीय प्रधानमंत्री हैं।

प्रधानमंत्री मोदी की अमरीका यात्रा का सबसे प्रमुख कार्यक्रम मेहमान राष्ट्रपति बराक ओबामा के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों पर वार्ता का था। द्विपक्षीय सम्बन्धों को और अधिक विस्तृत एवं गहन बनाने पर सहमति इन वार्ताओं में दोनों पक्षों में हुई। आर्थिक मामलों, परमाणु ऊर्जा, पर्यावरण व अफगानिस्तान आदि मुद्दों पर आपसी तालमेल बढ़ाने पर सहमति दोनों पक्षों में हुई तथा द्विपक्षीय रक्षा सहयोग को 10 वर्ष के लिए और आगे बढ़ाने का फैसला इस वार्ता में किया गया। एक अन्य सहमति के अन्तर्गत इलाहाबाद, अजमेर व विशाखापट्टनम् को स्मार्ट सिटी बनाने में सहयोग अमरीका देगा। विश्व व्यापार संगठन के प्रस्तावित व्यापार सम्मेलन के मामले में भारत की खाद्य सुरक्षा सम्बन्धी चिन्ताओं को दूर करने का आश्वासन अमरीकी राष्ट्रपति ने दिया। आतंकवाद के क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग बढ़ाने के लिए सहमति भी वार्ता में हुई। अफगानिस्तान, सीरिया व इराक में हो रहे घटनाक्रम सहित विश्व संकट के विभिन्न विषयों पर आपस में अधिक विचार–विमर्श के लिए भी सहमति दोनों पक्षों में हुई। दोनों पक्षों के बीच 2015 में हुए असैन्य परमाणु समझौते को तेजी से लागू करने से जुड़े मुद्दों को सुलझाने के लिए अन्तर एजेंसी सम्पर्क समूह गठित करने का निर्णय वार्ता में किया गया। वार्ता के पश्चात् जारी संयुक्त घोषणा पत्र में उपर्युक्त

सहमतियों के उल्लेख करते हुए भारत अमरीकी सम्बन्धों को नई ऊँचाइयों तक ले जाने का वायदा किया गया है।

एक अन्य कार्यक्रम के तहत वाशिंगटन में शीर्ष उद्यमियों के साथ एक बैठक में प्रधानमंत्री मोदी ने उन्हें भारत में निवेश के लिए प्रोत्साहित करते हुए कहा कि भारतीय अर्थव्यवस्था में आ रहे बदलाव व तेज़ी से हो रहे विकास का लाभ वह उठाएं।

अमेरिका राष्ट्रपति बराक ओबामा की भारत यात्रा 2015

अमेरिका राष्ट्रपति बराक ओबामा ने 25 से 27 जनवरी, 2015 तक भारत की तीन दिवसीय यात्रा की। ओबामा भारत के 66वें गणतंत्र दिवस के मुख्य अतिथि थे। इस तीन दिवसीय यात्रा के पहले दिन बराक ओबामा और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के बीच नई दिल्ली में शिखर वार्ता हुई। वार्ता में न केवल छह साल से अटके असैन्य परमाणु करार के क्रियान्वयन पर सहमति बनी, बल्कि दोनों देशों ने रक्षा, द्विपक्षीय व्यापार, स्मार्ट सिटी, आतंकवाद और ऊर्जा क्षेत्र में भी कई अहम समझौते किये। इस दौरान अमेरिकी राष्ट्रपति ने भारत की संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता की माँग का समर्थन किया और परमाणु दायित्व कानून की चिंताओं को दूर करने के बदले भारत को दुनिया के चार विशेष परमाणु क्लबों में शामिल कराने का भरोसा भी दिया।

अमेरिका ने भारत में चार बड़े रक्षा उद्योग और जेट इंजन का निर्माण शुरू करने पर सहमति जताई। जलवायु परिवर्तन पर भी दोनों देशों ने पहले से जारी बातचीत को आगे बढ़ाने का फैसला किया। इसके अलावा ओबामा और मोदी के साथ-साथ दोनों देशों के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकारों के बीच हॉट लाइन शुरू करने पर भी सहमति बनी। दोनों देशों के बीच डिफेंस फ्रेमवर्क एग्रीमेंट का अगले दस साल के लिए नवीनीकरण भी किया गया। ओबामा ने मोदी के स्वच्छ, अक्षय और सौर ऊर्जा के विजन को भी मजबूती देने का वादा किया। इस दिशा में कई अहम दीर्घकालीन करार किए गए।

मोदी और ओबामा ने अपनी बातचीत में आतंकवाद को प्रमुखता से जगह दी। दोनों देशों में तकनीकी खुफिया जानकारी साझा करने पर अहम करार हुए। हालांकि, आतंकवाद की लड़ाई में दोनों देशों की जमीन के इस्तेमाल पर कोई ठोस सहमति नहीं बन पाई। मोदी ने कहा कि आतंकवादियों में फर्क किए बिना दोनों देश अपनी लड़ाई जारी रखेंगे।

हैदराबाद हाउस में सम्पन्न वार्ता के बाद जारी संयुक्त बयान में ओबामा ने जहाँ अमेरिका की कामयाबी के लिए भारत के साथ बेहतर रिश्ते को जरूरी बताया, वहीं मोदी ने अमेरिका को भारत का स्वाभाविक मित्र करार देते हुए कहा कि वैश्विक अवसरों का लाभ उठाने और दुनिया में शांति व स्थिरता लाने के लिए द्विपक्षीय संबंधों में मजबूती बेहद जरूरी है। संयुक्त बयान में दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों में और मजबूती लाने पर बल दिया गया।

प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिका यात्रायें, (2014, 2015, 2016 तथा 2017)– प्रधानमंत्री मोदी जी सत्तारूढ़ होने के बाद से सन् 2017 तक अलग-अलग अवसरों पर अनक बार अमेरिका की यात्रा कर चुके हैं। सितम्बर 2014 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठक में सम्मिलित होने मोदी गये जहाँ उनकी अमेरिकी राजनेताओं से वार्ता हुई। सितम्बर 2015 में प्रधानमंत्री ने अमेरिका की 'सिलिकॉन घाटी' की यात्रा की। मार्च 2016 में प्रधानमंत्री मोदी पुनः राष्ट्रीय सुरक्षा शिखर बैठक में भाग लेने अमेरिका गये। जून 2016 में वे अमेरिका की सरकारी यात्रा पर गये। इस यात्रा के दौरान उन्होंने कांग्रेस (अमेरिकी संसद) के संयुक्त अधिवेशन को भी सम्बोधित किया। सम्पोषित विकास और साफ ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से दोनों देशों ने 'समुन्नत साफ ऊर्जा' के क्षेत्र में

सहयोग करने का निर्णय लिया है। भारत-अमेरिका व्यापार नीतियों पर एक मसौदा (ड्राफ्ट) तैयार करने के लिए दोनों देशों द्वारा एक विशेषज्ञ समूह का भी गठन किया गया है।

जून 2017 में भी मोदी जी ने अमेरिका की सरकारी यात्रा की। इसमें मोदी जी ने अमेरिकी पक्ष को यह समझाने का प्रयास किया कि भारत दोनों देशों के बीच रिश्ते को ओबामा दौरा से आगे ले जाते हुए एक नया आयाम स्थापित करने का इच्छुक है। डोनाल्ड ट्रम्प प्रशासन भी भारत के साथ मिलकर काम करना चाहता है। इसका संकेत अमेरिकी प्रशासन ने मोदी जी के अमेरिका पहुँचने से पहले ही दे दिया था। मोदी जी की यात्रा से ठीक पहले अमेरिकी प्रशासन ने कश्मीरी आतंकवादी संगठन 'हिजबुल मुजाहिदीन' के नेता सैय्यद सलाहुद्दीन का नाम अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी की सूची में डाल दिया।

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प और भारत के प्रधानमंत्री मोदी के बीच वार्ता पर्याप्त सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुई। इसमें साझा उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए सामरिक साझेदारी को और अधिक मजबूत करने पर बल दिया गया। आतंकवादी गतिविधियों की रोकथाम, एशिया-प्रशांत क्षेत्र में स्थिरता, आपसी व्यापार एवं आर्थिक सम्बन्धों को बढ़ावा तथा ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग में वृद्धि आदि मुद्दे वार्ता में मुख्य रूप से शामिल थे।

आतंकवाद की कड़ी निंदा करते हुए अल-कायदा, आई.एस.आई.एस., जैश-ए-मोहम्मद, लश्कर-ए-तैयबा तथा इसी प्रकार के अन्य आतंकी संगठनों के विरूद्ध मिलकर संघर्ष करने की प्रतिबद्धता अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प ने व्यक्त की।

अमेरिका में हाऊडी मोदी शो– 22 सितम्बर, 2019 को पीएम मोदी ने ह्यूस्टन में मैगा शो किया जिसमें 50 हजार लोग शामिल हुए। यह कार्यक्रम एन.आर.जी. स्टेडियम (आउटडोर फुटबाल स्टेडियम) में सम्पन्न हुआ। अमेरिका राष्ट्रपति ट्रम्प भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित हुये।

अमेरिकी राष्ट्रपति की भारत यात्रा– अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प 24 फरवरी, 2020 को सपरिवार भारत यात्रा पर पधारे। इस यात्रा को **'नमस्ते ट्रम्प'** नाम दिया गया। ट्रम्प की इस दो दिवसीय भारत यात्रा से भारत-अमेरिका संबंधों को एक नई ऊर्जा मिली है। अमेरिकी राष्ट्रपति की इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच ऊर्जा, रक्षा और स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर किये गए हैं जिनमें रक्षा, ऊर्जा, तकनीकी के साथ कई वैश्विक एवं क्षेत्रीय मुद्दे शामिल हैं। इसके साथ ही दोनों देशों ने आतंकवाद, हिंद-प्रशांत क्षेत्र जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए इन क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने पर बल दिया। भारत और अमेरिकी राष्ट्रपति ने दोनों देशों के संबंधों को 21वीं सदी की सबसे महत्वपूर्ण साझेदारी बताया। इसके साथ ही दक्षिण एशिया क्षेत्र में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका का दोनों देशों के संबंधों को बेहतर बनाने में बड़ा योगदान रहा है। अमेरिकी राष्ट्रपति की यह भारत यात्रा दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों के साथ ही क्षेत्र की शांति की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है।

रक्षा क्षेत्र– अमेरिकी राष्ट्रपति की इस भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच लगभग 3 मिलियन अमेरिकी डॉलर की रक्षा खरीद पर सहमति बनी है।

(1) हालिया समझौते के अनुसार, भारत अमेरिका में 24 एम.एच. 60 रोमियो हेलिकॉप्टर और 6 अपाचे लड़ाकू हेलिकॉप्टर का आयात करेगा।

(2) इसके साथ ही इस समझौते के तहत अमेरिका से उन्नत रक्षा-प्रणाली, हथियार युक्त एवं गैर हथियार वाले ड्रोन विमानों का आयात किया जाएगा।

(3) अन्य सुरक्षा मुद्दों में दोनों देशों ने मानव तस्करी, हिंसक अतिवाद, साइबर, ड्रग तथा तस्करी जैसे अन्तर्राष्ट्रीय अपराधों से साथ मिलकर निपटने पर सहमति जाहिर की।

वर्तमान अमेरिकी राष्ट्रपति बाइडेन और प्रधानमंत्री मोदी

राष्ट्रपति बाइडेन और प्रधानमंत्री मोदी 21वीं सदी के लिए व्यापक और गहन द्विपक्षीय दवा नीति ढाँचे की दिशा में काम करने हेतु प्रतिबद्ध हैं। इस ढाँचे के अन्तर्गत, दोनों देश अवैध दवाओं के अवैध उत्पादन और अन्तर्राष्ट्रीय तस्करी को बाधित करने हेतु सहयोग और सहयोग का विस्तार करने की इच्छा रखते हैं, जिसमें फेंटेनल और एम्फैटेमिन स्टिमुलेंट्स जैसी सिंथेटिक दवाएँ और उनके प्रीकर्सर्स का अवैध उपयोग शामिल है। इस दिशा में, उन्होंने अवैध नशीली दवाओं के उपयोग को रोकने और इलाज करने, कार्यबल की और कौशल आवश्यकताओं को सम्बोधित करने और दुनिया के लिए एक मॉडल के रूप में एक सुरक्षित, लचीली, विश्वसनीय और बढ़ती दवा आपूर्ति श्रृंखला का प्रदर्शन करने हेतु एक समग्र सार्वजनिक स्वास्थ्य साझेदारी के लिए प्रतिबद्ध किया। प्रधानमंत्री मोदी ने संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा पुरावशेषों को भारत वापस लाने के लिए अपनी गहरी सराहना व्यक्त की। दोनों पक्षों ने सांस्कृतिक सम्पत्ति समझौते की दिशा में तेजी से काम करने में गहरी रूचि व्यक्त की, जिससे भारत से सांस्कृतिक सम्पत्ति की अवैध तस्करी को रोकने में मदद मिलेगी और सांस्कृतिक सम्पत्ति की सुरक्षा और वैध आदान-प्रदान पर सहयोग बढ़ेगा।

भारत-अमेरिका सम्बन्ध : एक मूल्यांकन- उपर्युक्त वर्णित भारत-अमेरिकी सम्बन्ध के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत-अमेरिका सम्बन्ध प्रायः अवरोधों से ग्रस्त रहे हैं। इसका कारण दोनों राष्ट्रों का भिन्न-भिन्न विदेशनीतिक दृष्टिकोण है। भारत द्वारा अमेरिका के नेतृत्व में गठित सुरक्षा संधियों में सम्मिलित न होना और गुटनिरपेक्षता की विचारधारा से जुड़ा रहना, अमेरिका को अच्छा नहीं लगा इसी प्रकार पाकिस्तान को समय-समय पर अमेरिका द्वारा हथियारों की आपूर्ति करना भारत को आपत्तिजनक लगा। हाल के वर्षों में दोनों देशों के मध्य सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों में घनिष्ठता तो बढ़ी है, परन्तु मूलभूत राजनीतिक मतभेद आज भी पूर्ववत् हैं। परमाणु निःशस्त्रीकरण इस श्रेणी का प्रमुख मुद्दा है। अमेरिका ने कश्मीर मुद्दे पर भारत का कभी भी समर्थन नहीं किया। आज भी अमेरिका की दक्षिण-एशियाई नीति में पाकिस्तान शीर्ष महत्व का देश है। यथार्थ में अमेरिकी विदेश नीति में भारत के प्रति गर्मजोशी एक ओर तो बड़े भारतीय बाजारों के कारण है तो दूसरी ओर इसका लक्ष्य चीन की उभरती हुई ताकत पर अंकुश लगाना है, लेकिन सच यह है कि भारत-अमेरिकी सम्बन्ध पहले की भाँति आज भी अनिश्चितापूर्ण हैं।

प्रश्न-2. सोवियत संघ के विखण्डन के बाद नये रूसी गणराज्यों से भारत के सम्बन्धों पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

अथवा

भारत-रूस सम्बन्धों में उभरती प्रवृत्तियों का विवेचन कीजिये।

अथवा

रूस के साथ भारत के सम्बन्धों की विवेचना कीजिये।

उत्तर- भारत के सोवियत संघ के साथ अपने स्वतन्त्र होने के बाद ही बड़े घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे हैं। 13 सितम्बर, 1991 को सोवियत संघ समाप्त हो गया तथा स्वतंत्र रूसी गणराज्यों का उदय हुआ। नये रूस के राष्ट्रपति येल्तसिन बने। रूस को भारत-रूस मैत्री संधि और भारत के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध विरासत में प्राप्त हुये हैं। लेकिन ये अब तक कहाँ तक निभाये जा रहे हैं? यह जानना हम राजनीति विज्ञान के अध्येताओं के लिये अत्यन्त

आवश्यक है। उल्लेखनीय है कि क्षेत्रफल की दृष्टि से आज भी अवशिष्ट रूसी गणराज्य दुनियाँ का सबसे बड़ा राज्य है तथा उसे संयुक्त-राष्ट्र संघ में वही स्थान मिला है जो सोवियत संघ को प्राप्त था। उसने भी पूर्व सोवियत संघ के सभी दायित्वों को निभाने का वचन दिया है। आज भी रूस एक महाशक्ति है। बस अन्तर केवल यह है कि सोवियत संघ एक यूरेशियाई राष्ट्र था और रूस एक विशुद्ध यूरोपीय राष्ट्र है।

नई रूसी विदेश नीति- नये सोवियत रूस की विदेश नीति नये रूसी गणराज्य के प्रथम निर्वाचित लोकप्रिय राष्ट्रपति येल्तसिन की विदेशनीति है। उन्होंने अपने आप को एक महाशक्ति के सशक्त राष्ट्राध्यक्ष के रूप में उभारा है। संसद के विरोध के समय उन्हें संयुक्त राज्य अमेरिका व ब्रिटेन का पूरा समर्थन मिला। 26 मार्च, 2000 तथा 2018 को निर्वाचन में कार्यवाहक राष्ट्रपति ब्लादिमीर पुतिन रूस के नये राष्ट्रपति निर्वाचित हुये। उनकी विदेश नीति भी येल्तसिन की विदेश नीति है। विगत् 8 वर्षों में रूस की विदेशनीति की निम्नलिखित प्रमुख विशेषतायें रही हैं-

(1) संयुक्त-राज्य अमेरिका के साथ सहयोगी सम्बन्ध।
(2) संयुक्त-राष्ट्र-संघ के साथ सहयोग।
(3) यूरोपीय राष्ट्रों विशेषकर जर्मनी के साथ घनिष्ठ आर्थिक सम्बन्ध।
(4) चीन और जापान के साथ भी विवादों का निबटारा।
(5) भारत के साथ घनिष्ठ सम्बन्धों को जारी रखना।

नये रूस के साथ भारत के सम्बन्ध- पूर्व सोवियत संघ से भारत के जो सम्बन्ध थे वर्तमान में रूस उन्हें जारी रखना चाहता है। 31 जनवरी, 1991 को न्यूयार्क में राष्ट्रपति येल्तसिन भारत के प्रधानमंत्री से मिले थे। जनवरी, 1992 में भारत के विदेश सचिव के नेतृत्व में अधिकारियों का एक दल रूस गया। इसने रूस के साथ परम्परागत मैत्री को नया रूप दिया। भारत ने नये रूस के पुनर्निर्माण के लिये 75 करोड़ रुपये की सहायता की पेशकश की। भारत-रूस व्यापार प्रोटोकोल जो 1992 तक था, को नया रूप दिया गया।

रूसी राष्ट्रपति येल्तसिन की भारत-यात्रा- जनवरी, 1993 में रूस के राष्ट्रपति येल्तसिन भारत आये। इसमें विभिन्न मुद्दों पर महत्वपूर्ण समझौते हुये। एक 14-सूत्री सन्धि भी हुई जिसमें रक्षा सम्बन्धी प्रावधान नहीं है। अपनी इस यात्रा में येल्तसिन ने सम्वाददाता सम्मेलन में यह घोषणा की कि वे कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग मानते हैं और इस सम्बन्ध में संयुक्त-राष्ट्र-संघ और बाहर निरन्तर भारत का समर्थन करेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि यदि संयुक्त-राष्ट्र संघ में भारत को सुरक्षा-परिषद् का स्थायी सदस्य बनने का प्रस्ताव आया तो वे इसका समर्थन करेंगे। इससे भारत-रूस के मैत्री और सद्भाव के नये युग का सूत्रपात हुआ।

भारत-रूस सुखोई विमान समझौता- यह समझौता भारत-रूस के बीच 30 नवम्बर, 1996 को सम्पन्न हुआ। इससे भारतीय वायुसेना की क्षमता बढ़ेगी।

प्रधानमंत्री एच.डी. देवेगौड़ा की रूस-यात्रा- मार्च, 1997 में संयुक्त-मोर्चा सरकार के प्रधानमंत्री देवेगौड़ा ने रूस की यात्रा की। इसमें 6 सहयोग समझौतों पर हस्ताक्षर हुये। इसमें प्रत्यार्पण सन्धि भी हुई। रूस ने अमेरिका के विरोध को नजर अन्दाज करते हुये भारत के दो परमाणु रियेक्टरों के निर्माण की योजना को सहयोग देना स्वीकार किया। उसने पाकिस्तान की हथियार-बिक्री पर पाबन्दी लगाई।

रूसी प्रधानमंत्री प्रीमाकोव की भारत-यात्रा दिसम्बर 1998- यह यात्रा 20 से 22 दिसम्बर तक हुई। इसमें सात द्विपक्षीय सम्बन्धों पर हस्ताक्षर हुये।

कारगिल मसले पर भारत का रूस द्वारा समर्थन– इस सन्दर्भ में रूस के नेताओं ने पाकिस्तान को चेतावनी दी। अक्टूबर, 2000 में रूसी राष्ट्रपति पुतिन की भारत यात्रा भी महत्वपूर्ण है। इस यात्रा से ऐसा लगता है कि अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिन्टन की भारत और भारत के पूर्वप्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी की अमेरिका यात्रा के बाद रूस के लिये यह आवश्यक था कि वह अपने एक पुराने मित्र को यह विश्वास दिलाये कि वह भारत का एक पुराना मित्र है। अतः वह नये बड़े मित्र की मित्रता में पुरानी दोस्ती भूल न जाये। पुतिन की चार–दिवसीय यात्रा ने यही संदेश दिया है कि यह प्रभावशाली सम्बन्धों का महत्व है।

भारत–रूस सम्बन्धों का नया अध्याय ब्रह्ममास– भारत–रूस सम्बन्धों की निरन्तरता आज भी बनी हुई है। इसका ताजा प्रमाण ब्रह्ममास अर्थात् भारत–रूस सहयोग से बना नया सुपरसोनिक क्रूज मिसाईल है जिसका जून, 2001 में भारत ने सफल परीक्षण कर भारत को एक बड़ी प्रक्षेपास्त्र शक्ति के रूप में स्थापित किया है। इसका नाम भी भारत की ब्रह्मपुत्र और रूस की मास्को नदियों के संयुक्त नाम पर रखा गया है। यह तमाम सारे हथियार लेकर 280 किलोमीटर की दूरी तक मार कर सकता है। यह पूर्व प्रक्षेपास्त्र पृथ्वी से बहुत शक्तिशाली है। इसे युद्धपोत और लड़ाकू विमान दोनों से ही दागा जा सकता है। इससे भारत की शक्ति और मनोबल बढ़ा है। इसे भारत और रूस के प्रतिरक्षा वैज्ञानिकों ने मिलकर बनाया है। इससे यह सिद्ध होता है कि समय की कसौटी पर खरी उतरी मैत्री नये अनुबन्धों और अधिक सहमतियों के माध्यम से और भी विकसित होगी। 19 फरवरी, 2001 को भारत–रूस के बीच थल–सेना को अत्याधुनिक टी–90 टैंकों से सुसज्जित करने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण समझौते हुये थे। रूसी राष्ट्रपति ब्लादीमिर पुतिन जनवरी, 2007 में भारत यात्रा पर आये। वे गणतंत्र दिवस समारोह में मुख्य अतिथि थे। इस अवसर पर दोनों देशों के मध्य परस्पर सहयोग के 9 समझौतों पर हस्ताक्षर हुये जिनमें नाभिकीय ऊर्जा क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने का एक सहमति–पत्र भी शामिल है। वर्ष 2008 में भारत के प्रमुख नेताओं ने रूस यात्रा की तथा द्विपक्षीय सम्बन्धों को मजबूत बनाया। भारत–रूस सम्बन्धों का भविष्य भी उज्ज्वल है।

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की रूस यात्रा (दिसम्बर 2009)– 7 दिसम्बर, 2009 को भारत के प्रधानमंत्री मास्को पहुँचे तथा मास्को में जिन समझौतों पर हस्ताक्षर किए हैं, उनमें सबसे महत्वपूर्ण परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग के लिए आपसी सहयोग का समझौता है। रूस ने वादा किया कि वह हमेशा भारत को परमाणु ईंधन देता रहेगा, यहाँ तक कि अगर दोतरफा समझौता खत्म हो जाता है तब भी। इसका मतलब है कि भारत को इसके परिशोधन और संवर्धन का अधिकार होगा। इस दृष्टि से यह समझौता हमारे लिए भारत–अमेरिका परमाणु करार से भी अधिक लाभदायक हो सकता है। रूस का लाभ इस बात में है कि भारत परमाणु ऊर्जा और सैन्य–उपकरणों का बड़ा खरीदार है जिसका बड़ा हिस्सा उसे मिल सकता है।

रूस के राष्ट्रपति ब्लादिमीर पुतिन की भारत यात्रा 2014

रूस के राष्ट्रपति ब्लादिमीर पुतिन ने 10–11 दिसम्बर, 2014 को भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के निमंत्रण पर दोनों देशों की 15वीं शिखर बैठक में भाग लेने हेतु भारत की सरकारी यात्रा की। वार्ता में दोनों देशों के बीच कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। इनमें परमाणु करार और दोनों देशों के सहयोग से आने वाले समय के लिए स्पेस क्राफ्ट का निर्माण करना शामिल है।

इस शिखर बैठक के दौरान दोनों नेता अगले दशक के दौरान भारत–रूस भागीदारी मजबूत करने के दृष्टिकोण पर सहमत हुए। दोनों देशों के बीच प्रतिष्ठित सामरिक भागीदारी का उल्लेख करते हुए दोनों नेताओं ने इस बात पर बल दिया कि इस मैत्री को गुणवत्ता के नए स्तर पर ले जाने के लिए इसे महत्वपूर्ण व्यापक द्विपक्षीय सहयोग पर आधारित बनाने का समय आ गया है।

भारत के विकास और सुरक्षा आवश्यकताओं में रूस के स्मरणीय योगदान की प्रशंसा की गई। दोनों नेताओं ने विश्वास व्यक्त किया कि द्विपक्षीय सामरिक भागीदी से दोनों देशों के राष्ट्रीय हितों को बढ़ावा मिलता है और यह अधिक स्थिर और सुरक्षित विश्व व्यवस्था में योगदान देती है। दोनों देशों ने अगले दशक के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में पहल के माध्यम से भागीदारी मजबूत बनाने और द्विपक्षीय संस्थागत विचार–विमर्श के ढाँचे को परिणामोन्मुख और भविष्य के लिए उपयोगी बनाने का संकल्प व्यक्त किया।

इस मौके पर हुए संयुक्त संबोधन के दौरान दोनों राष्ट्राध्यक्षों ने विकास में भागेदारी के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराई। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने दोनों देशों के बीच हुए समझौतों को जहाँ भारत और रूस की दोस्ती में नया अध्याय बताया, वहीं रूस के राष्ट्रपति पुतिन ने इसको विकास की ओर अग्रसर एक कदम कहा।

मोदी ने कहा कि रूस हमेशा ही भारत का सैन्य सहयोगी रहा है और आगे भी रहेगा। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि भारत में रूस के लिए भी अपार संभावनाएँ हैं। पुतिन ने अपने इस दौरे को सफल बताते हुए कहा कि आज हुए विभिन्न समझौतों से दोनों ही देश आगे की ओर अग्रसर होंगे।

मोदी ने भारत के विकास में रूस की अहमियत को सराहा और कहा कि रूस भारत के लिए एक मजबूत पिलर की तरह है। उन्होंने कहा कि बदलते समय में विश्व की राजनीति में भी बदलाव आया है लेकिन रूस को लेकर भारत की दोस्ताना नीति जो पहले थी, वही आज भी है। पुराने समय को याद करते हुए पीएम ने अपने संबोधन में कहा कि उन्होंने पहली बार 2001 में इस शिखर वार्ता में भाग लेते हुए रूस के साथ गुजरात के मुख्यमंत्री के तौर पर समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। उस उक्त देश के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी थे। रक्षा क्षेत्र का जिक्र करते हुए उन्होंने आईएनएस विक्रमादित्य का भी जिक्र किया। इस दौरान उन्होंने दोनों देशों की सेनाओं के तीनों अंगों की आपस में ट्रेनिंग का भी जिक्र किया। रक्षा समझौते पर आगे बढ़ते हुए उन्होंने रूस द्वारा भारत में एडवान्स हेलिकॉप्टर के निर्माण की भी बात कही। उन्होंने कहा कि इसका इस्तेमाल सिविलियन और मिलिट्री सेवा के लिए किया जा सकेगा।

दोनों नेताओं ने दोनों देशों की तेल कंपनियों के बीच तेल और गैस के खनन और उत्पादन और एलएनजी परियोजनाओं तथा संबंधित आपूर्ति के लिए व्यापक सहयोग के प्रावधान पर उपयोगी चर्चा की। उम्मीद है कि भारतीय कंपनियाँ रूस के क्षेत्र में नए तेल और गैस क्षेत्रों से संबंधित परियोजनाओं में भाग लेंगी। दोनों नेताओं ने भारत की पहल और यूरेशियन आर्थिक आयोग के लिए संयुक्त अध्ययन दल द्वारा वस्तुओं और सेवाओं में व्यापार, निवेश, सहयोग, मानकों की आपसी मान्यता के लिए व्यापक आर्थिक सहयोग समझौते की व्यवहार्यता का पता लगाने पर सहमति व्यक्त की।

मोदी और पुतिन ने 11 दिसम्बर, 2014 को वर्ल्ड डायमंड कॉन्फ्रेंस का संयुक्त रूप से उद्घाटन किया। इस सम्मेलन के मौके पर रूस की सबसे बड़ी रफ डायमंड आपूर्तिकर्ता कंपनी अलरोसा ने अपरिष्कृत हीरों की सीधी बिक्री के लिए 12 भारतीय कंपनियों के साथ

समझौतों पर हस्ताक्षर किए। इन समझौतों के तहत अगले तीन वर्षों के दौरान 2.1 अरब डॉलर मूल्य के अपरिष्कृत हीरों की आपूर्ति भारत को की जाएगी। सालाना 700 मिलियन डॉलर मूल्य के हीरों की आपूर्ति भारत को इस दौरान की जाएगी।

भारत–रूस शिखर वार्ता (2015)– भारत और रूस के बीच 16वीं शिखर वार्ता का आयोजन मास्को में दिसम्बर, 2015 में हुआ। भारतीय पक्ष का प्रतिनिधित्व प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी और रूसी पक्ष का प्रतिनिधित्व राष्ट्रपति ब्लादिमिर पुतिन द्वारा किया गया।

इस दौरान कई रक्षा और परमाणु समझौतों सहित कुल 16 समझौतों पर हस्ताक्षर किये गये। दोनों शासनाध्यक्षों में 226 सैन्य हेलिकॉप्टरों के संयुक्त निर्माण और भारतीय कम्पनी की मदद से 12 परमाणु संयंत्र निर्माण किए जाने पर सहमति बनी। इसके अलावा पहली बार पूर्ण रूप से स्वदेशी प्रक्षेपास्त्र और राडार प्रणाली का निर्माण भारत में होने का रास्ता साफ हो गया। इस कार्य को पहली बार देश की निजी कम्पनी करेगी।

अपनी दो–दिवसीय रूस–यात्रा के अन्तिम दिन प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने पुतिन से कहा कि भारत–रूस को अपना विश्वसनीय मित्र मानता है जिसने कठिन समय में हमेशा भारत का साथ दिया है। भारत और रूस अब अन्तर्राष्ट्रीय मंच और राजनीतिक क्षेत्रों में सहयोग एवं सक्रियता बढ़ा रहे हैं। वार्ता के शुरू में ही पुतिन ने कहा कि "मैं यह देखकर बहुत खुश हूँ कि भारत और रूस की रणनीतिक साझेदारी में निरन्तर इजाफा हो रहा है।"

रूस से अच्छे सम्बन्ध न केवल भारत के लिए लाभकारी हैं बल्कि स्वयं रूस की खराब अर्थव्यवस्था को एक सशक्त भागीदार मिल सकेगा। रूस अपने तेल एवं प्राकृतिक गैस जैसे बहुमूल्य संसाधनों को भारत एवं चीन को निर्यात कर उस कमी की क्षतिपूर्ति कर सकता है जो यूरोपीय देशों के प्रतिबंध के चलते सामने आई है।

भारत–रूस 17वीं शिखर बैठक (2016)– भारत एवं रूस के बीच 17वीं शिखर बैठक अक्टूबर 2016 में गोवा (भारत) में सम्पन्न हुई। इस बैठक में भारत की ओर से प्रधानमंत्री मोदी और रूस की ओर से राष्ट्रपति पुतिन ने सहभागिता की। दोनों देशों के बीच वार्षिक शिखर बैठक का यह सिलसिला सन् 2000 में प्रारंभ हुआ था। यह शिखर बैठक प्रति वर्ष बारी–बारी से एक–दूसरे देश में होती है।

इस शिखर बैठक के दौरान पारम्परिक सहयोग के 17 समझौते अथवा सहमति–पत्रों पर हस्ताक्षर किये गये। इनमें से तीन समझौते अथवा सहमति–पत्र रक्षा–क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। इनमें रूस से 5 अरब डॉलर (लगभग 3300 करोड़ रुपये) को S-400 Triumph (लम्बी दूरी की मारक क्षमता का वायु सुरक्षा उपकरण) की खरीद तथा एडमिरल ग्रिगोरोविच–क्लास के चार युद्ध पोतों की खरीद के अतिरिक्त भारत में कामोव 226 T हेलिकॉप्टरों के निर्माण की संयुक्त इकाई की स्थापना से सम्बन्धित समझौते तथा सहमति–पत्र शामिल हैं। तेल एवं गैस, शिक्षा, अन्तरिक्ष एवं रेलवे के क्षेत्रों में सहयोग के सहमति–पत्रों के अलावा एक निवेश कोष की स्थापना के लिए भी भारत और रूस के बीच सहमति–पत्र पर हस्ताक्षर किये गये।

भारत–रूस 18वीं शिखर बैठक (2017)– भारत और रूस की 18वीं वार्षिक शिखर बैठक मई, 2017 में सेण्ट पीटर्सबर्ग (रूस) में सम्पन्न हुई। आर्थिक, वाणिज्यिक, तकनीकी, सैन्य, रक्षा ऊर्जा एवं विदेश नीति आदि लगभग सभी क्षेत्रों में रूस भारत का घनिष्ठ सहयोगी रहा है। परन्तु हाल ही के कुछ वर्षों में वैश्विक परिस्थितियाँ जिस प्रकार से बदली हैं उनमें इन सम्बन्धों में थोड़ी शिथिलता आई है। दोनों देशों के बीच वार्षिक व्यापार विगत दो–तीन वर्षों में घटा है। सन् 2014 में यह व्यापार 10 अरब डॉलर का था, जबकि 2016 में यह घटकर 7.8 अरब डॉलर का रह गया। द्वि–पक्षीय व्यापार को 2025 तक दोनों देशों ने

30 अरब डॉलर तक करने का लक्ष्य रखा है। इस आशय का समझौता भी बैठक के पश्चात् किया गया। इसके अलावा बुनियादी ढाँचे के आधुनिकीकरण हेतु संयुक्त प्रयासों को आगे बढ़ाने, हीरा उद्योग में सहयोग की संभावनाओं को विकसित करने तथा अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी, दवा उद्योग तथा विज्ञान के क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने पर भी सहमति बनी।

रक्षा के क्षेत्र में सहयोग को आगे बढ़ाते हुए इसी वर्ष दोनों देशों के संयुक्त अभ्यास 'इन्द्र–2017' को सम्पन्न कराने पर भी सहमति बनी। आतंकवाद के सभी रूपों की निंदा करते हुए संयुक्त वक्तव्य में इसके विरूद्ध समन्वित प्रयास जारी रखने की बात भी कही गई।

वार्ता के पश्चात् जारी संयुक्त घोषणा–पत्र में दोनों देशों के बीच सम्बन्धों के मामले को 21वीं सदी के लिए 'एक दृष्टि' नाम दिया गया। पारस्परिक सहयोग के 5 अन्य समझौतों पर भी हस्ताक्षर किये गये।

रूसी राष्ट्रपति ब्लादिमीर पुतिन की भारत यात्रा, 4–5 अक्टूबर, 2018

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री श्री मोदी ने एक अनौपचारिक वार्ता के लिए 21 मई, 2018 को सोच्चि (रूस) की यात्रा की थी। 19वीं वार्षिक शिखर बैठक में दोनों देशों के बीच 8 विभिन्न समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। अमेरिकी प्रतिबन्धों के बाद भी रूस से वायु रक्षा प्रणाली एस–400 ट्रायम्फ मिसाइल की खरीद हेतु 5.2 अरब डॉलर के सौदे के लिए हस्ताक्षर किये गये। यहाँ एस–400 मिसाइल पाकिस्तान और चीन की सभी आधुनिक मिसाइलों को हवा में नष्ट करने की क्षमता रखती है। राष्ट्रपति पुतिन ने भारतीय राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद से भी भेंट की। भारतीय राष्ट्रपति ने कहा कि 'भारत व रूस की विशिष्ट एवं सम्मानित रणनीतिक भागीदारी' में भारत रूसी राष्ट्रपति पुतिन के योगदान की सराहना करता है। भारतीय राष्ट्रपति कोविंद ने 30 वर्षों के अन्तराल के पश्चात् रूस में भारत महोत्सव के आयोजन पर भी प्रसन्नता व्यक्त की। उल्लेखनीय है कि मास्को में 6 सितम्बर, 2018 को भारत महोत्सव का प्रारम्भ हुआ, जो मार्च 2019 में सम्पन्न हुआ।

निष्कर्ष– भारत और रूस एक–दूसरे को समझने लगे हैं। दोनों देशों के बीच सम्बन्धों में रक्षा का स्थान सबसे ऊपर है और व्यापार के मुद्दे दूसरे स्थान पर हैं। शीत युद्ध के जमाने में तत्कालीन सोवियत संघ हमारा सबसे विश्वस्त मित्र देश हुआ करता था, लेकिन शीत युद्ध खत्म होने और सोवियत संघ के टूटने के बाद रूस के साथ हमारे रिश्तों में ठण्डापन आता गया। बाद में जैसे–जैसे अमेरिका के साथ हमारी निकटता बढ़ती गई वैसे–वैसे रूस के व्यवहार में इस निकटता के प्रति नाराज़गी दिखने लगी। 2019 में प्रधानमंत्री की रूस यात्रा ने इस असंतुलन को दूर करने का प्रयास किया है। इसीलिए सैन्य सहयोग के अलावा व्यापार से लेकर संस्कृति तक जो समझौते किए गए हैं, उनमें पुराने रिश्तों को ताजा करने का प्रयास दिखाई देता है। यूक्रेन युद्ध शुरू होने के पश्चात् रूस ने भारत को सस्ती दर पर क्रूड ऑयल देने का समझौता किया है। इससे भारत व रूस के सम्बन्ध और भी सुदृढ़ हुए हैं।

प्रश्न–3. भारत–चीन सीमा विवाद का वर्णन कीजिये। इस सीमा की वर्तमान स्थिति क्या है?

अथवा

भारत–चीन सम्बन्धों में आये नये विवादों पर प्रकाश डालते हुये इसकी वर्तमान स्थिति बताइये। क्या भारत–चीन की पुनः मित्रता संभव है?

अथवा

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की चीन यात्रा की विवेचना कीजिये। भारत और चीन के बीच विवाद के मुद्दे क्या हैं?

अथवा

भारत– चीन सम्बन्धों पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

उत्तर– चीन से हमारा तात्पर्य चीन की मुख्य भूमि पर 1949 के बाद स्थापित साम्यवादी चीन राज्य से है। चीन भारत के हिमालय के उत्तर में एक विशाल राज्य है। यह क्षेत्रफल और जनसंख्या की दृष्टि से भारत से बड़ा राज्य है। चीन से भारत के सम्बन्ध बहुत प्राचीन काल से चले आ रहे हैं। इतिहास में हम ज्ञान पिपासु चीनी यात्रियों का वर्णन पढ़ते है। चीन में भारत मे जन्मे बौद्ध-धर्म का बहुत अधिक प्रचार-प्रसार हुआ था। 1949 में चीन मे क्रान्ति होकर साम्यवादी शासन की स्थापना हुई।

1950 से पूर्व भारत और चीन के बीच एक तिब्बत नामक मध्यस्थ राज्य था। 1950 में चीन ने इस तिब्बत नामक धर्मराज्य की स्वायत्ता समाप्त कर दी। इसका भारत की जनता और नेताओ ने विरोध किया। परन्तु भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने इसे चीन का आन्तरिक मामला मानकर इसी संदर्भ में पंचशील सिद्धान्त प्रतिपादित किया।

हिन्दी चीनी भाई–भाई युग– 1950 से 1955-56 तक भारत और चीन के सम्बन्ध बहुत अच्छे थे। इस युग को हिन्दी चीनी भाई–भाई युग कहते है। वास्तव में इस समय चीन की गरज थी, क्योंकि चीन जानता था कि अमेरिका सहित सभी पश्चिमी देश उसे मान्यता देने के लिये तैयार नहीं हैं। दूसरे एशियाई देश भी अमेरिका के दबाव में उसे मान्यता नहीं देंगे। इस सम्बन्ध में भारत ही उसका सहयोगी हो सकता है, इसके अलावा भारत तिब्बत को हड़पने के बाद भी चुप था और चीन का तुष्टिकरण कर रहा था।

नक्शों का प्रकाशन और सम्बन्धों में सन्देह का प्रारम्भ– इस बीच भारत को कुछ ऐसे मानचित्र देखने को मिले जिनमें भारत के क्षेत्रों को चीन ने अपना बताया था। भारत ने जब इसका विरोध किया तो चीन की सरकार ने आश्वासन दिया कि वह नक्शों में सुधार कर लेगा। परन्तु बाद मे उसका रुख बदल गया और कहने लगा कि नक्शों में जो क्षेत्र चीन में दिखाये गये हैं वे चीन के ही हैं, हम इस समस्या को शान्तिपूर्ण वार्ता से हल कर लेंगे।

वास्तव में चीन उस मेकमोहन रेखा को मानने के लिये तैयार नहीं है, जो 1904 में ब्रिटिश सेनापति मेकमोहन ने भारत, चीन और तिब्बत की सीमा बताते हुये खींच दी थी और तत्कालीन चीन के प्रतिनिधि भी इस सम्मेलन का बहिष्कार कर चले गये थे।

भारत पर चीन का आक्रमण– मामला धीरे-धीरे बढ़ता गया और पहले तो छुटपुट अतिक्रमण और आक्रमण हुये। परन्तु 20 अक्टूबर, 1962 को चीन ने भारत पर नग्न आक्रमण कर दिया। चीन द्वारा भारत की हजारों वर्ग-मील भूमि दबा ली गई। भारत इस युद्ध के लिये सैनिक-दृष्टि से बिल्कुल तैयार नहीं था, इसलिये भारत को गंभीर क्षति उठानी पड़ी।

चीन के आक्रमण का प्रभाव– चीन का आक्रमण भारत की विदेश नीति के लिये मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इससे हमें अपनी नीति-सम्बन्धी तथा सुरक्षा सम्बन्धी त्रुटियाँ पता लगीं। इसके बाद भारत ने अपनी विदेश नीति को रक्षा-नीति के साथ जोड़कर एक क्षेत्रीय दृष्टि से शक्तिशाली राष्ट्र बनना प्रारम्भ किया और अपनी भावुक नीति को विदा किया। चीन के आक्रमण से थोड़े समय के लिये भारत की प्रतिष्ठा अवश्य थोड़ी कम हुई, परन्तु शीघ्र ही भारत ने अपनी स्थिति पूर्ववत् बना ली। 1971 में बंगलादेश का निर्माण कर भारत एक क्षेत्रीय शक्ति बन गया।

आक्रमण के बाद भारत–चीन सम्बन्ध– 1962 के आक्रमण के बाद भारत और चीन के बीच विवाद को समाप्त करने के लिये कई कूटनीतिक प्रयास किये गये परन्तु भारत और चीन के सीमा-विवाद अब भी यथावत् हैं। 1963 में चीन ने पाकिस्तान के साथ गठबन्धन कर भारत के विरुद्ध पिण्डी-पीकिंग-जकार्ता धुरी बना ली। भारत-पाक युद्ध 1965 और 1971 में कई बार धमकियाँ और अल्टीमेटम देकर चीन ने अपने दोस्त पाकिस्तान की

कूटनीतिक सहायता की, परन्तु भारत इन धमकियों के सामने नहीं झुका। 1976 से भारत-चीन के बीच पुनः दोस्ताना सम्बन्ध स्थापित हो गये हैं। दोनों देश समय-समय पर अपने सीमा-विवाद हल करने की इच्छा व्यक्त करते हैं, परन्तु अभी तक सीमा-विवाद पूर्ववत् कायम है। पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी की चीन-यात्रा से सीमा-विवाद हल होने की आशा बंधी थी।

भारतीय राष्ट्रपति की चीन यात्रा– चीन के राष्ट्रपति हूजिंताओ के निमंत्रण पर भारतीय राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने मई, 2010 में चीन की पाँच दिवसीय यात्रा की तथा पारस्परिक सहयोग के तीन समझौतों पर हस्ताक्षर किये। चीन के प्रधानमंत्री वेन जियाबाओ दिसम्बर, 2010 में दूसरी बार भारत यात्रा पर आये और इस दौरान कई क्षेत्रों में 6 करार किये गये। मई, 2013 में चीन के प्रधानमंत्री ली भारत यात्रा पर आये और विभिन्न मुद्दों से जुड़े आठ समझौतों पर हस्ताक्षर किये साथ ही यह भी तय किया कि सीमा पर शांति बहाली के नये उपाय तलाश किये जावेंगे।

चीन के प्रधानमंत्री ली केकियांग की भारत यात्रा– चीन के नए प्रधानमंत्री ली केकियांग मई 2013 में भारत की दो-दिवसीय यात्रा पर पधारे। मार्च 2103 में प्रधानमंत्री बनने के बाद यह उनकी पहली विदेश यात्रा थी। चीनी प्रधानमंत्री ने अपने वक्तव्यों में यह संकेत दिया कि चीन भारत के साथ बेहतर आर्थिक सम्बन्ध बनाने के लिए प्रतिबद्ध है तथा किसी भी विवादित मुद्दे को इन सम्बन्धों के बीच नहीं आने देना चाहता। अपनी पत्रकार वार्ता में उन्होंने बताया कि उनके भारत आने के तीन उद्देश्य हैं- परस्पर विश्वास कायम करना, आपसी सहयोग बढ़ाना और भारत के साथ मिलकर भविष्य को सँवारना।

सीमा एवं जल-सम्बन्धी अनेक विवादों को स्वीकारते हुए दोनों पक्षों ने मित्रता को सुदृढ़ करने पर सहमति व्यक्त की। चीनी प्रधानमंत्री ने भारत के इस झुकाव को भी स्वीकार किया कि दोनों देशों की सीमा पर सुरक्षा तंत्र को और अधिक मजबूत बनाने की आवश्यकता है। ब्रह्मपुत्र नदी पर बाँध बनाने के सन्दर्भ में चीनी प्रधानमंत्री ने भारतीय पक्ष को जानकारी साझा करने का आश्वासन दिया।

भारतीय प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के साथ अपनी वार्ता में केकियांग ने यह आश्वासन भी चाहा कि भारत अपनी भूमि से चीनी धर्मगुरू दलाई लामा की चीन-विरोधी राजनीतिक गतिविधियों के संचालन का अवसर नहीं देगा। भारतीय प्रधानमंत्री ने चीन को आश्वस्त किया और कहा कि भारत तिब्बत को चीन का हिस्सा स्वीकार करता है।

चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग की भारत यात्रा (2014)– चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने सितम्बर 2014 में भारत की यात्रा की। राष्ट्रपति शी जिनपिंग की यात्रा से भारत को अधिक आशाएँ थीं क्योंकि चुनाव के बाद मोदी को सबसे पहले चीन के प्रधानमंत्री ली केकियांग ने ही बधाई दी थी।

राष्ट्रपति जिनपिंग और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के बीच राजनीतिक एवं सुरक्षा सम्बन्धी मुद्दों, आर्थिक सम्बन्धों तथा जन-धन सम्पर्क सहित सभी मुद्दों पर चर्चा हुई। दोनों नेताओं ने चीन के साथ भारत के व्यापारिक असन्तुलन की भी चर्चा की। दोनों पक्षों ने इसके लिए ठोस कदम उठाने पर भी सहमति जताई। चीन ने अगले पाँच वर्षों में भारत में 20 बिलियन डॉलर निवेश करने की इच्छा व्यक्त की। चीनी राष्ट्रपति ने मोदी को यह भी आश्वासन दिया कि वह भारतीय कम्पनियों की बाजार तक पहुँच को बेहतर बनाने के साथ-साथ निवेश के अवसरों को भी बेहतर बनायेंगे।

परन्तु दोनों देशों के बीच चल रही सकारात्मक वार्ता उस समय विरोधाभास बन गई जब 18, सितम्बर, 2014 को दोनों नेताओं के चर्चा के समय ही लगभग एक हजार चीनी सैनिकों की टुकड़ी लद्दाख क्षेत्र में वास्तविक नियंत्रण रेखा को पार कर भारतीय सीमा में घुस गई।

नरेन्द्र मोदी की चीन यात्रा (2015)– मई, 2015 में भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी चीन यात्रा पर गये। दोनों देशों ने इस वार्ता में 24 समझौतों पर हस्ताक्षर किये। ये समझौते रेलवे, खनन, पर्यटन, अन्तरिक्ष अनुसंधान तथा व्यावसायिक शिक्षा से सम्बन्धित हैं। इनमें से प्रमुख समझौते निम्नलिखित थे–

(1) जून माह में नाथुला दर्रे से मानसरोवर का नया रास्ता खोलने पर दोनों राष्ट्रों ने सहमति व्यक्त की।
(2) चीन ने भारत के चैन्नई में वाणिज्य दूतावास और भारत ने शेंग्दू (चीन) में वाणिज्य दूतावास खोलने पर सहमति व्यक्त की।
(3) भारत चीन में गाँधी स्टडीज़ सेन्टर और योग कॉलेज खोलेगा।
(4) दूरदर्शन और सीसीटीवी के बीच साझा प्रसारण को लेकर भी सहमति बनी।
(5) चीन के सहयोग से अहमदाबाद में 'महात्मा गाँधी कौशल विकास केन्द्र' की स्थापना की जायेगी।

डोकलाम विवाद– सन् 2017 में दोनों देशों के बीच एक अत्यन्त संवेदनशील प्रकरण 'डोकलाम विवाद' पैदा हो गया।

प्रकरण का मुख्य मुद्दा– 16 जून, 2017 को चीन का एक सड़क-निर्माण दल समुचित औजारों के साथ इसी टर्निंग पॉइन्ट पर आया और आस-पास का सर्वेक्षण करने लगा ताकि सड़क को जम्फेरी दर्रे तक बढ़ाया जा सके। यह देखकर डोकाला सैनिक चौकी के भारतीय जवान डोलाम पठार पर टर्निंग पॉइन्ट के निकट आ गये और चीनी सड़क-निर्माण दल को सड़क बनाने से रोकने लगे। यहीं से विवाद शुरू हुआ। भारत का कहना था कि चीन सन् 2012 के उस समझौते का उल्लंघन कर रहा है जिसमें यथास्थिति बनाये रखने की बात की गई थी और यदि चीन जम्फेरी दर्रे तक सड़क बना लेता है तो चीन से भारत के शीर्ष भाग (जिसे Chicken's neck कहते हैं) की दूरी 50 किमी कम हो जाएगी जिससे भारत के सैन्य-सुरक्षा हित प्रभावित होंगे।

18 जून साल 2017 की डोकलाम पर सीमा विवाद को लेकर एक बार फिर से दोनों देशों के बीच तनाव शुरू हुआ और यह लगभग 73 दिनों तक चला। भारत-भूटान और चीन को मिलाने वाले बिन्दु को भारत में डोकलाम, भूटान में 'डोक ला' और चीन में 'डोकलाक' कहा जाता है। डोकलाम का कुछ भाग सिक्किम में भारतीय सीमा से सटा हुआ है, जहाँ चीन सड़क बनाना चाहता है। भारतीय सेना ने सड़क बनाए जाने का विरोध किया। भारत की चिन्ता यह है कि अगर यह सड़क बनी तो हमारे देश के उत्तर-पूर्वी राज्यों को देश से जोड़ने वाली 20 किलोमीटर चौड़ी यानी 'मुर्गी की गरदन' जैसे इस इलाके पर चीन की पहुँच बढ़ जाएगी। वहीं चीन ने अपनी सम्प्रभुता की बात दोहराते हुए कहा कि उन्होंने सड़क अपने इलाके में बनाई है। इसके साथ ही उन्होंने भारतीय सेना पर 'अतिक्रमण' का आरोप भी लगाया।

डोकलाम पर भारत-चीन के बीच लगभग दो महीने तक काफी तनातनी होने के बाद अन्ततः यह विवाद समाप्त हुआ। जून 2020 में चीनी सैनिकों ने गलवान घाटी में अपने अनेक तम्बू लगाकर कब्जा करने का प्रयास किया। लेकिन हमारे वीर जवानों ने आक्रमण कर

उनका प्रयास विफल कर उन्हें खदेड़ दिया। इसमें हमारे 20 सैनिक शहीद हुए तथा चीन के भी लगभग 45 सैनिक मारे गये।

चीन की साम्राज्यवादी नीतियों के कारण सभी पड़ौसी देश आतंकित हैं। लेकिन अब तो अमरीका, आस्ट्रेलिया और जापान जैसे देशों से भी अब चीन के पाँव उखड़ने लगे हैं। इन देशों में उसका काफी धन उद्योगों में लगा हुआ है, परन्तु अब कोरोना (कोविड-19) महामारी ने उसकी आय के द्वार बन्द कर दिये हैं। अनेक देशों द्वारा चीन में स्थापित उद्योग अब वापस लौटने लगे हैं इससे चीन में बेरोजगारी बढ़ने लगी है। कोरोना के प्रसार को लेकर भी चीन को बहुत बड़ा झटका लगा है। अतः चीन अब विश्व-पटल पर हुई अपनी इस बदनामी से लोगों का ध्यान हटाने का मार्ग तलाश रहा है।

चीन भारत के साथ वार्ता करके समझौता भी करता है और तोड़ता भी है। जब से तिब्बत का मुद्दा उठा है और दलाई लामा को भारत ने शरण दी है, तब से चीन की आँखों में भारत खटक रहा है। उसके बाद कितने अवसर आए जब चीन ने भारत को आक्रामक रूप दिखाया जैसे अक्साई चीन का मुद्दा, अरुणाचल प्रदेश पर झपट्टा, पाकिस्तान की धरती पर कॉरिडोर, पीओके का मुद्दा और लद्दाख के बड़े हिस्से पर कब्जा इत्यादि।

तस्वीर का दूसरा पहलू यह भी है कि आज चीन का अर्थ-तंत्र हमारे से अधिक सशक्त है। परन्तु अब इस नाव में छेद हो रहे हैं। कोरोना के बाद उद्योग चीन से भाग रहे हैं। उधर, अमरीका ने चीन से व्यापार पर अनेक पाबन्दियाँ लगा दी हैं। चीन को अब भारत ही एकमात्र बड़ा बाजार नजर आता है। हमारे पास चीन से सख्ती के साथ बात रखने का यह श्रेष्ठ अवसर है। हालांकि प्रधानमंत्री मोदी के 'आत्मनिर्भर भारत' के नारे ने चीन के होश उड़ा दिए हैं। गलवान घाटी के आक्रमण में हमारे 20 वीर जवानों के शहीद होने के बाद तो हमारे देश में इसके विरोध में अनेक शहरों में चीनी उपकरणों की होली जलाई गई और लोगों ने चीन निर्मित उपकरण व सामानों का बायकाट कर उनका उपयोग न करने की प्रतिज्ञा ली।

चीन का वर्तमान आक्रामक रवैया भी उसकी गीदड़ भभकी ही है। उसे अपने देशवासियों का ध्यान भी बांटना है, भारतीय नीतियों और तैयारियों का आकलन भी करना है, देश में बड़े उद्योगों के पलायन को रोकना भी है। भारत का अमरीका के प्रति झुकाव व अमरीकी प्रधानमंत्री ट्रम्प से मोदी जी की गहरी मित्रता, भारत की जी-7 की सदस्यता भी चीन की आँखों में खटक रही है। अपने को चारों ओर से घिरता देखकर वह 'आक्रमण को ही अपना रक्षा कवच' मान बैठा है, जिससे उसका हित दूर-दूर तक भी नहीं है। इस तथ्य को चीन भी अच्छी तरह जानता है।

चीन पर हम हमेशा भरोसा कर लेते हैं और हर बार धोखा खाते हैं। इसलिए अब मोदी सरकार ने चीन की इस धोखेबाजी की नीति के प्रति अनेक कठोर निर्णय लिए हैं जिनमें अनेक चीनी सामानों के आयात-निर्यात हेतु किये गये व्यापारिक करारों पर प्रतिबंध, मोबाइल फोन पर 59 चीनी एप्स को भारत में प्रतिबंधित करना, देश में अनेक चीनी निर्माण कार्य के ठेकों को रद्द करना इत्यादि निर्णय शामिल हैं। 3 जुलाई, 2020 को अचानक प्रधानमंत्री मोदी का लेह पहुँचकर वीर जवानों की हौंसला अफजाई करना चीन के लिए स्पष्ट संदेश था कि यदि शांति नहीं तो युद्ध के लिए भी हम तैयार हैं।

भारत की चीन नीति कैसी हो?– चीन के सन्दर्भ में, आने वाले समय में, भारत के सामने दो नीतिगत विकल्प हैं–

(1) फिलहाल भारत सीमा-विवाद पर ध्यान न देकर अन्य क्षेत्रों में चीन के साथ सहयोग बढ़ाने का प्रयास करे। प्रयास यह होना चाहिए कि दोनों देशों के बीच

विश्वास कायम हो। परस्पर विश्वास का वातावरण पैदा होने पर सीमा विवाद पर विचार किया जा सकता है और फिर इसे हल किया जा सकता है।

(2) भारत-सीमा विवाद को सर्वोच्च प्राथमिकता दे, क्योंकि इसके चलते बाकी क्षेत्रों में स्थापित सहयोग भी समाप्त हो सकता है। भारत को काराकोरम दर्रे के खोलने के प्रश्न पर चीन से गंभीर वार्ता करनी चाहिए।

भारत के दीर्घकालिक राष्ट्रीय हित की दृष्टि से दूसरा विकल्प ठीक है। वर्तमान में अपनायी गई दृढ़ नीति भविष्य में भारत के लिए लाभकारी होगी।

प्रश्न–1. भारत और यूरोपीय संघ के मध्य सहयोग के बिन्दुओं को स्पष्ट कीजिए।

अथवा

भारत–यूरोपीय संघ सम्बन्धों पर एक विस्तृत लेख लिखिए।

उत्तर– यूरोपीय संघ– यूरोपीय संघ वास्तव में एक 28 देशों का ऐसा समूह है, जो यूरोपीय क्षेत्र के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए समर्पित है। यह संस्थान यूरोपीय देशों का एक ऐसा राजनीतिक संगठन है, जो आपस में सभी सदस्य देशों को मिलकर यूरोप के विकास की रणनीति बनाने और उसे लागू करने हेतु गठित किया गया है।

अपने गठन के बाद से ही इस संस्था ने यूरोप के क्षेत्र में शांतिपूर्ण तरीके से विभिन्न कार्यों का संचालन किया है। इसके अतिरिक्त यूरोपीय संघ ने लोकतंत्र और मानव अधिकारों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है, जिसके आधार पर उस क्षेत्र में लम्बे समय से शांति व्यवस्था स्थापित है और सभी देश आपस में समृद्धि की ओर आगे बढ़ रहे हैं। इन्हीं सब कारणों के चलते वर्ष 2012 में यूरोपीय संघ को नोबेल शांति पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था।

भारत–यूरोपीय संघ सम्बन्ध– वर्तमान समय में, भारत-यूरोपीय संघ व्यापार सम्बन्धों में कई वैल्यू चेन (मूल्य श्रृंखलाएँ) हैं जिनमें विज्ञान और तकनीक, रिन्यूएबल एनर्जी (नवीकरणीय ऊर्जा), सेवाओं, वस्तुओं और बुनियादी ढाँचे में निवेश शामिल हैं। ये निवेश विगत कुछ वर्षों में लगातार बढ़े हैं और आशा है कि यह बढ़ोतरी भविष्य में भी जारी रहेगी। उदाहरणार्थ भारत, यूरोपीय संघ का दसवाँ सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है और अमेरिका तथा चीन के बाद यूरोपीय संघ भारत का तीसरा सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है, जो इसके कुल व्यापार का लगभग 11 प्रतिशत भाग है। दोनों पक्षों के बीच कुल द्विपक्षीय व्यापार अब 95.5 विलियन यूरो के आंकड़े से अधिक हो चुका है और आने वाले वर्षों में इसके और भी बढ़ने की ही आशा है।

यूरोपीय संघ और भारत दोनों एक–दूसरे की सुरक्षा चिंताओं को भौगोलिक रूप से दूर के मुद्दे के रूप में नहीं बल्कि वर्तमान संकट के रूप में देखते हैं, जो द्विपक्षीय सम्बन्धों और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों दोनों को व्यापक रूप से प्रभावित करते हैं।

यूक्रेन के विरूद्ध रूस के हमले, जिसने यूरोपीय संघ–भारत सम्बन्धों पर असर डाला है, उस पर प्रतिक्रिया देने के तरीके पर शुरूआती मतभेदों के बावजूद ऐसा लगता है कि भारत धीरे–धीरे यूरोपीय संघ के नजदीक आ रहा है। क्योंकि यह युद्ध एक क्षेत्रीय संघर्ष नहीं है इसका वैश्विक प्रभाव है, जो विश्व भर में ऊर्जा और खाद्य संकट से लेकर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् सहित अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों की लाचारी तक फैला हुआ है।

विगत 60 वर्षों में यूरोपीय संघ और भारत ने हिन्द–प्रशांत क्षेत्र के अन्दर और बाहर सामाजिक–आर्थिक विकास और सुरक्षा सहयोग के सामान्य एजेंडे के आधार पर मजबूत और गहरे सम्बन्ध विकसित किए हैं। यह साझेदारी साझा मूल्यों और हितों के आधार पर विकसित की गई है जो कि अनेक ट्रेड लिंक और रक्षा सहयोग से प्रमाणित होता है।

भारत और यूरोपीय संघ के मध्य सहयोग के बिन्दु

(1) भारत और यूरोपीय संघ विभिन्न क्षेत्रों में आपसी सहयोग कर रहे हैं। वास्तव में 1962 में भारत और 'यूरोपीय कम्युनिटी' के बीच कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित हुए थे। उस समय यूरोपीय कम्युनिटी के साथ कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने वाला 'भारत' विश्व का पहला विकासशील देश था।

(2) वर्ष 2017 में आयोजित हुई भारत और यूरोपीय संघ की शिखर वार्ता के दौरान यह निर्णय लिया गया था कि दोनों देश मिलकर 'एजेंडा 2030' को लागू करने के लिए संयुक्त प्रयास करेंगे। वास्तव में यह एजेंडा 2030 सतत विकास लक्ष्यों के क्रियान्वयन से सम्बन्धित है। इसी अवसर पर दोनों पक्षों ने यह भी निर्णय लिया था कि वे भारत और यूरोपीय संघ के मध्य हस्ताक्षर हुए 'विकास डायलोग' को आगे भी जारी रखेंगे।

(3) लेकिन इसके बाद 1994 में भारत और यूरोपीय संघ के बीच एक सहयोग समझौता हस्ताक्षर हुआ। इस सहयोग समझौते के परिणामस्वरूप भारत और यूरोपीय संघ के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को कानूनी रूप दे दिया। भारत वर्ष 2004 के बाद से ही यूरोपीय संघ का एक प्रमुख रणनीतिक साझेदार भी है।

(4) यूरोपीय संघ भारत द्वारा किए जाने वाले सबसे बड़े निर्यात गंतव्यों में से एक है। भारत यूरोपीय संघ को वस्त्र, इंजीनियरिंग वस्तुओं, रसायन और उससे सम्बन्धित उत्पादों का भारी मात्रा में निर्यात करता है। जबकि यूरोपीय संघ की ओर से भारत में आयात की जाने वाली वस्तुओं में आभूषण, कीमती पत्थर, इंजीनियरिंग वस्तुएँ, रसायन और उससे सम्बन्धित उत्पाद प्रमुख हैं।

(5) विदेशी निवेश की दृष्टि से यूरोपीय संघ भारत के लिए दूसरा सबसे बड़ा निवेशक है। विगत एक दशक में यूरोपीय संघ से भारत की ओर आने वाले निवेश की मात्रा 8% से बढ़कर 18% हो गई है अर्थात् पिछले एक दशक में यूरोपीय संघ की ओर से भारत में किए जाने वाले निवेश की मात्रा दोगुनी से भी अधिक बढ़ गई है। यह स्थिति दोनों पक्षों के बढ़ते आपसी विश्वास और सहयोग को दर्शाती है।

(6) भारत और यूरोपीय संघ के विभिन्न देश आपस में 'अनुसंधान और विकास' के क्षेत्र में भी सहयोग को बढ़ावा दे रहे हैं। 'भारत' यूरोप में संचालित किए जा रहे 'अन्तर्राष्ट्रीय आई.टी.ई.आर. संलयन परियोजना' में एक मुख्य भागीदार है। इस प्रकार, भारत और यूरोपीय संघ 'विज्ञान और प्रौद्योगिकी' के क्षेत्र में भी एक–दूसरे का भरपूर सहयोग कर रहे हैं।

(7) भारत और यूरोपीय संघ तकनीक, स्वच्छ ऊर्जा और जलवायु भागीदारी जैसे मुद्दों पर भी एक–दूसरे का व्यापक स्तर पर सहयोग कर रहे हैं। इससे दोनों पक्षों के बीच व्यापारिक रिश्ते निरन्तर प्रगाढ़ हो रहे हैं।

(8) यूरोपीय संघ और भारत दोनों ही पक्षों के बीच एक समझौता हुआ है। इस समझौते का नाम 'कॉमन एजेंडा ऑन माइग्रेशन एंड मोबिलिटी' है। दोनों पक्ष इसी समझौते के माध्यम से प्रवसन और मोबिलिटी से सम्बन्धित अपने लगभग सभी मुद्दों का समाधान करते हैं।

(9) भारत और यूरोपीय संघ 'पानी और पर्यावरण' के क्षेत्र में भी एक–दूसरे का व्यापक सहयोग कर रहे हैं। भारत सरकार द्वारा संचालित 'स्वच्छ गंगा मिशन'

में यूरोपीय संघ की सक्रिय भागीदारी है। इसके अलावा, यूरोपीय संघ और भारत दोनों ही पक्ष, जल से सम्बन्धित अन्य समस्याओं को सुलझाने में भी एक-दूसरे का बड़े स्तर पर सहयोग कर रहे हैं।

(10) यूरोपीय संघ भारत के स्मार्ट सिटी कार्यक्रम में भी सहयोग कर रहा है। इसके अन्तर्गत यूरोपीय संघ भारत के कुछ शहरों को यूरोप के कुछ शहरों की तर्ज पर विकसित करने के सम्बन्ध में सहायता प्रदान कर रहा है।

11) भारत और यूरोपीय संघ दोनों ही पक्ष 'सूचना और संचार प्रौद्योगिकी' के क्षेत्र में भी एक-दूसरे का निरन्तर सहयोग कर रहे हैं। इस दिशा में भारत और यूरोपीय संघ ने 'इंडिया ई.यू. साइबर सिक्योरिटी डायलॉग' भी हस्ताक्षर कर रखा है। इसके माध्यम से दोनों पक्ष साइबर सुरक्षा से सम्बन्धित अपने अनेक मामलों को हल करने का प्रयास करते हैं और इस क्षेत्र में निरन्तर आपसी सहयोग को बढ़ावा देते हैं।

निष्कर्ष– भारत और यूरोपीय संघ के बीच विभिन्न बिन्दुओं पर बेहतरीन सहयोग किया जा रहा है, लेकिन कुछ बिन्दु ऐसे भी हैं, जिन पर दोनों पक्षों के बीच विवाद की स्थिति बनी हुई है। ऐसे में, दोनों पक्षों को आपस में बुद्धिमानी का परिचय देकर इन विवादित मसलों को आपसी बातचीत के माध्यम से सुलझाने की ओर बढ़ना चाहिए।

प्रश्न–5. यूरोपीय संघ एवं भारत सम्बन्धों की वर्तमान (2023) स्थिति को समझाइए।

उत्तर– यूरोपीय संघ–भारत सम्बन्ध (2023 में)– विगत वर्ष 2022 में यूरोपीय संघ और भारत ने अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों की 60वीं वर्षगांठ मनाई और इसी के साथ यूरोपीय संघ (EU) और एक एशियाई देश के बीच सबसे लम्बे समय तक चलने वाले सम्बन्धों में से एक बनकर उभरा। बतौर विश्व के दो सबसे बड़े लोकतंत्र, यूरोपीय संघ और भारत को साझा मूल्यों, राजनीतिक आदान-प्रदान और समान हितों का एक लम्बा इतिहास रहा है। ईयू-भारत सम्बन्ध वैसे भी बहुआयामी एजेंडे पर निर्धारित हैं जिसका विस्तार सामाजिक-आर्थिक मुद्दे, प्रभावी बहुपक्षवाद और नियम-आधारित सुरक्षा सहयोग तक है। ईयू-भारत सम्बन्धों के कोर एलिमेंट (मूल तत्वों) की खोज है, जिसमें व्यापार, सुरक्षा सहयोग और हिन्द-प्रशांत में साझेदारी की भूमिका शामिल होने के साथ इस बात पर विशेष जोर दिया गया कि कैसे इस गतिशीलता ने भविष्य में साझेदारी की संभावनाओं को आकार दिया है।

यूरोपीय संघ-भारत सम्बन्धों के मूल सिद्धान्तों के बारे में जानना महत्वपूर्ण है जो वास्तव में दो देशों के बीच 2004 के रणनीतिक साझेदारी समझौते के बाद से उभरा (भारत चीन, जापान और दक्षिण कोरिया को मिलाकर एशिया में केवल चार यूरोपीय संघ रणनीतिक भागीदार देशों में से एक है।) 2004 के यूरोपीय संघ-भारत समझौते ने न केवल इन सम्बन्धों की रणनीतिक रूपरेखा निर्धारित की बल्कि इसके अन्य क्षेत्रों में सहयोग के लिए एक आधार भी तैयार किया, जिसमें व्यापार, ऊर्जा दक्षता, खाद्य सुरक्षा, रोजगार अधिकार और सार्वजनिक स्वास्थ्य सहित व्यापक मुद्दों को सम्बोधित करने की आवश्यकता बताई गई। ऐसी साझेदारी को न केवल इसमें शामिल दो इकाइयों के लिए बल्कि वैश्विक हितों के लिए भी लाभप्रद बताया गया, क्योंकि इसने यूरोपीय आधारित तकनीक की क्षमताओं को उजागर किया, जिससे भारतीय कम्पनियाँ अधिक प्रतिस्पर्धी बन गईं और अपने बाजार में विविधता लाने पर मजबूर हुईं।

<u>लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-</u>

प्रश्न–(1) साम्यवादी चीन की विदेशनीति के दो प्रेरणा स्त्रोत बिन्दु लिखिये।

उत्तर– चीनी विदेश नीति के प्रेरणा–स्रोत–

चीन का विश्व की महाशक्ति बन जाना– चीनियों का यह दृढ़ विश्वास है कि उनका देश विश्व की महाशक्ति है। उन्हें अपनी जनशक्ति पर भी नाज है। वे मानते हैं कि किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का स्थायी समाधान तभी हो सकता है जबकि चीन उसमें भाग ले।

संकुचित राष्ट्रवाद– चीन का अपना ही एक संकुचित राष्ट्रवाद है, पिछले दो हजार वर्षों में चीन ने एशिया में दूर-दूर तक अपने साम्राज्य स्थापित किये थे। साम्राज्यवाद का विरोधी होते हुये भी चीन की नीतियों में अपने पुराने साम्राज्यवाद की गंध आती है। चीनी लोगों को अपनी राष्ट्रीयता पर इतना भरोसा है कि वे खुलेआम कहते हैं कि अब हमारा राष्ट्र कभी भी अपमानित नहीं होगा।

प्रश्न–(2) भारत चीन सम्बन्धों के भविष्य पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये।

उत्तर– भारत–चीन सम्बन्धों का भविष्य– 1976 से भारत-चीन के बीच सम्बन्धों के सामान्यीकरण की जो प्रक्रिया प्रारम्भ हुई वह चीन द्वारा वियतनाम पर आक्रमण तथा थियान चौक हत्याकाण्ड के अपवादों को छोड़कर भारत-चीन पुनः मैत्री स्थापना की दिशा में लगातार प्रयासरत है। यद्यपि चीन के स्वाभावगत व्यवहार के कारण भारत चौंकन्ना है क्योंकि चीन की चालाकीपूर्ण कूटनीति के कारण इस पर विश्वास करना सरल नहीं है, वह कब किसे धोखा दे दे कहा नहीं जा सकता। उसकी कथनी और करनी में भी सदैव अन्तर रहा है। इसलिये भारत की नीति सदैव 'दूध का जला छाछ फूंक-फूंक कर पीने' की रही है परन्तु विगत 20 वर्षों के सम्बन्धों का दिशा प्रवाह इस बात की ओर संकेत करता है कि अब दोनों के लिये नई परिस्थितियों में यह आवश्यक हो गया है कि एशिया के उपरोक्त दोनों देश (भारत और चीन) पुरानी बातों को भूलकर नये सिरे से पुनः मैत्री और सहयोग स्थापित करें। शंकाओं और आशंकाओं के बीच भारत की स्थिति की नाजुकता और परिस्थितियों (परिवर्तित) के अनुरूप चीन के साथ सम्बन्ध सुधार के लिये प्रयत्नशील हैं, क्योंकि वह जानता है कि उसका पूर्व मित्र सोवियत संघ विघटित हो चुका है पाकिस्तान से उसके सम्बन्ध अत्यन्त खराब हैं। यदि चीन-पाक गठबन्धन तोड़ा जा सके और भारत, चीन को पाकिस्तान का सहयोग करने से रोक सके या चीन तटस्थ ही रह सके तब भी उसका उद्देश्य हल हो सकता है।

इकाई-4

<u>दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-</u>

प्रश्न–1. संयुक्त राष्ट्र संघ के क्या उद्देश्य हैं? इनको सफल बनाने में भारत के योगदान की विवेचना कीजिये।

अथवा

संयुक्त–राष्ट्र संघ (U.N.O.) क्या है? इसमें विभिन्न अंग कौन–कौन से हैं? इनमें भारत की भूमिका पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

संयुक्त–राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् में भारत की स्थायी सदस्यता के पक्ष–विपक्ष में तर्क दीजिये।

अथवा

'भारत और संयुक्त–राष्ट्र संघ' पर एक निबन्ध लिखिये।

अथवा

संयुक्त राष्ट्र संघ के शान्ति प्रयासों में भारत के योगदान की विवेचना कीजिये।

अथवा

संयुक्त राष्ट्र संघ से आप क्या समझते हैं? संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत की भूमिका बताइये।

उत्तर– संयुक्त राष्ट्र क्या है?– संयुक्त राष्ट्र दुनियाँ का एक महान अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है जो विश्व शान्ति के लिये प्रयत्नशील है। दुनियाँ 80–90 वर्षों में दो महान् विनाशकारी विश्व–युद्धों की विभीषिका को देख चुकी है। तीसरे विश्व युद्ध के बादल भी समय समय पर अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर मंडराते हुये दिखाई देते रहे हैं। दुनियाँ तीसरे विश्व युद्ध की आग में जलकर भस्म हो जायेगी। हथियारों का जो जखीरा आज की दुनियाँ के राष्ट्रों के पास इकट्ठा हो रहा है उससे तो यही लग रहा है। एक ऐसे कठिन समय में एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की आवश्यकता थी, जो कि दुनियाँ में अपने सद्प्रयासों से शान्ति बनाये रख सके। 1914 के प्रथम विश्व–युद्ध के बाद सन् 1945 में राष्ट्र संघ (लीग ऑफ नेशन्स) की स्थापना की गई। राष्ट्र संघ की स्थापना के 20 वर्ष बाद ही दुनियाँ को द्वितीय विश्व युद्ध की कठोर विभीषिका झेलनी पड़ी। अब उन कटु अनुभवों को ध्यान में रखकर ही द्वितीय विश्व–युद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र की स्थापना की गई है।

स्थापना– इसकी स्थापना 24 अक्टूबर, 1945 को विभिन्न सम्मेलनों में विचार–विमर्श के बाद की गई है। इसका मुख्य कार्यालय संयुक्त राज्य अमेरिका के शहर न्यूयार्क में 42, मेनहटन रोड पर स्थित है। वहाँ स्थापित इसकी गगनचुम्बी इमारत दुनियाँ को विश्व शान्ति का महान् सन्देश दे रही है। इसका संविधान सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन में स्वीकृत किया गया था।

इसके 6 अंग हैं– (1) महासभा (2) महासचिवालय (3) सुरक्षा परिषद् (4) न्यास परिषद् (5) अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय (6) आर्थिक सामाजिक परिषद्।

सदस्य– वर्तमान में इसके 192 राष्ट्र सदस्य हैं।

(1) भारत का संयुक्त–राष्ट्र संघ से सम्बन्ध– भारत संयुक्त–राष्ट्र संघ का प्रारम्भिक (संस्थापक) सदस्य है। इसने इसकी स्थापना के समय इसके चार्टर पर हस्ताक्षर किये हैं। भारत की संयुक्त–राष्ट्र संघ में गहन आस्था है। हमारे संविधान के नीति–निर्देशक तत्वों में भी इस आस्था का वर्णन है। यह (संयुक्त–राष्ट्र संघ में आस्था) हमारी विदेश नीति का एक मूल आधारभूत सिद्धान्त भी है। इसका प्रमाण यह है कि भारत कई बार इसके मुख्य अंग और सबसे महत्वपूर्ण संस्था सुरक्षा परिषद् का सदस्य चुना गया। वह कई बार आर्थिक सामाजिक परिषद् का भी सदस्य रहा है।

संयुक्त राष्ट्र के प्रथम अधिवेशन में ही भारत ने यह स्पष्ट कर दिया था कि भारत की उसमें (संयुक्त राष्ट्र में) गहन आस्था थी। साथ ही भारत ने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि वह इस विश्व संस्था में एक नई ताकत और नये दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करेगा।

15 अगस्त, 1947 के बाद भारत की संयुक्त राष्ट्र में आस्था व भूमिका– भारत 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ और एक संविधान बनाकर शीघ्र ही एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य बन गया। भारत ने संयुक्त राष्ट्र की प्रारम्भिक सदस्यता को न केवल बनाये रखा अपितु इस विश्व संगठन को एक नई दिशा और दृष्टि देने का संकल्प व्यक्त किया। भारत ने प्रत्येक क्षेत्र में स्वतंत्रता के तत्काल बाद अपना प्रत्येक प्रकार का योगदान इस संस्था को देना प्रारम्भ कर दिया था। संयुक्त राष्ट्र संघ के सभी महत्वपूर्ण कार्यों में उसने प्रारम्भ से ही योगदान दिया।

भारतीय संविधान में संयुक्त राष्ट्र में आस्था– 1949 में जब भारत का संविधान बनकर तैयार हुआ जो 26 जनवरी, 1950 से लागू हुआ। इसमें स्पष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया गया है कि, "भारत राज्यों के मध्य सद्भाव बढ़ाने तथा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा की

स्थापना के लिये भरसक प्रयत्नशील रहेगा। सभी राज्यों के साथ सम्मानपूर्ण, न्यायोचित और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखेगा तथा अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुये अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान के लिये पूर्ण सहयोग देने के लिये सदैव तत्पर रहेगा।"

संविधान के नीति–निर्देशक तत्वों में स्थान– संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रति अपनी आस्थाओं को भारत के संविधान निर्माताओं ने "भारतीय संविधान के नीति–निर्देशक तत्व या सिद्धान्त नामक अध्याय (चतुर्थ खण्ड) में महत्वपूर्ण स्थान दिया है।"

भारत के संविधान के नीति–निर्देशक तत्वों में लिखा है, "अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सहयोग हो, शान्तिपूर्ण ढंग से अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का निबटारा हो, राष्ट्रों के बीच मधुर व सम्मानपूर्ण सम्बन्ध हों, अन्तर्राष्ट्रीय विधि का सम्मान किया जाये तथा अन्तर्राष्ट्रीय संधि के दायित्वों का पालन हो।"

इस प्रकार भारत के संविधान के नीति–निर्देशक तत्वों में संयुक्त राष्ट्र संघ में अप्रत्यक्ष रूप से आस्था प्रकट की गई है।

संयुक्त–राष्ट्र संघ की महत्वपूर्ण एजेन्सियां एवं उनमें भारत की भूमिका– संयुक्त–राष्ट्र संघ की कुछ महत्वपूर्ण एजेन्सियां (अभिकरण) ये हैं– यूनेस्को, विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन, विश्व बैंक एवं मुद्रा–कोष। भारत में इन सभी की शाखायें या क्षेत्रीय कार्यालय हैं और वह इन सभी का सक्रिय सदस्य है। अक्टाड का सम्मेलन भी 1968 में भारत में हो चुका है।

संयुक्त–राष्ट्र के शान्ति–स्थापक कार्यों में भारत की भूमिका– भारत की प्रारम्भ से ही अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक क्षितिज पर और संयुक्त–राष्ट्र संघ में भारत की इतनी गहन आस्था है कि भारत अपनी पहली उत्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय काश्मीर समस्या को संयुक्त–राष्ट्र संघ के समक्ष ले गया था। यद्यपि बाद में वह उसकी भूल सिद्ध हुई, क्योंकि वहां जाकर यह समस्या उलझ गई है और भारत अभियोगी से अभियुक्त बन गया है।

(2) कोरिया समस्या के हल में भारत का योगदान– विश्व राजनीति में संयुक्त राष्ट्र संघ में कोरिया की समस्या के समाधान में भारत का सर्वप्रथम ऐसा सक्रिय योगदान है, जिसने भारत को नये युद्ध से बचाने के साथ–साथ भारत की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा भी बढ़ाई थी। कोरिया युद्ध में भारत की निष्पक्ष किन्तु रचनात्मक भूमिका रही। इस युद्ध में संयुक्त राष्ट्र संघ एक पक्ष बन गया था, परन्तु उत्तरी कोरिया ने आक्रमणकारी घोषित होने के बाद भी नौसैनिक कार्यवाही में भाग नहीं लिया। भारत ने इस युद्ध में तटस्थता की नीति का अनुसरण करते हुये शान्ति स्थापित करवाने हेतु मध्यस्थता का प्रयास किया।

कोरिया में शान्ति स्थापित करने के लिये भारत ने दोनों पक्षों को अपने अथक प्रयासों से सहमत किया। जब युद्ध विराम संधि के मार्ग में युद्ध बंदियों की अदला–बदली की गई तो बाधा उपस्थित हुई, तब इस प्रश्न को हल करने में भारत ने बड़ा योगदान दिया। इसी के फलस्वरूप 23 जुलाई, 1953 को उत्तरी व दक्षिणी कोरिया में युद्ध–विराम संधि पर हस्ताक्षर हुये। युद्ध बन्दियों की समस्या के हल के लिये 5 सदस्य राष्ट्रों का एक आयोग बना। इसका अध्यक्ष भारत को बनाया गया।

(3) हिन्द–चीन की समस्या और भारत का योगदान– द्वितीय विश्व–युद्ध में हिन्द चीन पर जापान का कब्जा हो गया था। जब जापान द्वारा आत्मसमर्पण किया गया, तो इसके उत्तरी भाग पर राष्ट्रवादी चीन का तथा दक्षिणी चीन पर ब्रिटेन का अधिकार हो गया, जिसने इसे

फ्रांस को सौंप दिया तथा उत्तरी भाग को प्राप्त करने के लिये राष्ट्रवादी चीन से फ्रांस ने संधि की।

संयुक्त–राष्ट्र की महत्वपूर्ण नीतियों का समर्थन– भारत ने संयुक्त राष्ट्र की निम्नलिखित महत्वपूर्ण नीतियों का हमेशा समर्थन किया–

(1) उपनिवेशवाद व साम्राज्यवाद का विरोध (2) रंगभेद–नीति का विरोध (3) निःशस्त्रीकरण (4) शीत युद्ध का अन्त और विश्व–शान्ति की स्थापना (5) महासागरों में शस्त्र–स्पर्धा का अन्त।

भारत का संयुक्त–राष्ट्र को आर्थिक सहयोग– भारत संयुक्त–राष्ट्र संघ के मुख्य व्यय का 2.3 प्रतिशत अंशदान के रूप में देता है। भारत इसके माध्यम से बहुत पिछड़े हुये देश में भी आर्थिक व तकनीकी सहायता भी करता है।

भारत और संयुक्त–राष्ट्र संघ को सैनिक सहयोग– संयुक्त–राष्ट्र संघ में इस समय चल रहे 15 शान्ति अभियानों में सबसे अधिक शान्ति–सैनिक भेजने वालों में भारत एक है। अब तक संयुक्त राष्ट्र शांति अभियानों में शहीद हुये सर्वाधिक 106 सैनिक भारतीय हैं। इनमें पहला भारतीय सैनिक सिपाही रामचन्द्र नसीम था।

भारत जर्मनी और जापान को संयुक्त–राष्ट्र संघ की सुरक्षा–परिषद् का विस्तार कर इसके स्थायी सदस्यों की संख्या बढ़ाने हेतु इसमें स्थायी सदस्य बनाने का अभियान जोरों से चल रहा है। इसमें भारत की स्थायी सदस्यता पर तमाम देशों की सहमति हो चुकी है।

निष्कर्ष– उपरोक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भारत की आस्था विश्व शान्ति की स्थापना बनाये रखने में रही है इसलिये जब भी दुनियाँ में शान्ति भंग होने का खतरा उत्पन्न हुआ, भारत ने सदैव संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में उसके द्वारा विश्व शान्ति की दिशा में उठाये गये कदमों का समर्थन किया तथा तन–मन–धन से इस बात का प्रयास किया कि शान्ति भंग होकर तृतीय विश्व–युद्ध की स्थिति उत्पन्न न हो। यदि कहीं युद्ध छिड़ ही गया तो भारत ने सदैव शान्ति का पक्ष लिया और इस बात का प्रयास किया कि युद्ध विराम हो तथा स्थायी शान्ति भंग होकर तृतीय विश्व–युद्ध की नौबत न आये।

इस सम्बन्ध में भारत की भूमिका को दुनियाँ के सभी तटस्थ राष्ट्रों के बुद्धिमान व्यक्तियों सराहा है तथा भारत का साथ दिया है। भारत ने सच्चे हृदय से इस बात को सिद्ध किया है वह विश्व शान्ति बनाये रखने के उद्देश्य से संगठित इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का समर्थक है इसकी सफलता के लिये प्रतिबद्ध है।

प्रश्न–2. संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में किन सुधारों को प्रस्तावित किया गया?

अथवा

'संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार' पर एक लेख लिखिए।

अथवा

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार की आवश्यकता क्यों है?

उत्तर– संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार– फ्रांस ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता हेतु भारत के दावे का समर्थन किया है। फ्रांस ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की संरचना में परिवर्तन की शिफारिश भी की है। उसने सुरक्षा परिषद में बड़े बदलाव की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि वर्तमान समय में भारत, ब्राजील, जर्मनी और जापान जैसे राष्ट्र स्थायी सदस्य बनने के अधिकारी हैं।

संयुक्त राष्ट्र जैसी महत्वपूर्ण संस्था में इन प्रमुख सदस्यों को शामिल करने के साथ सुरक्षा परिषद का विस्तार करना फ्रांस की 'रणनीतिक' प्राथमिकताओं में शामिल है।

प्रस्तावित सुधार– संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में निम्नलिखित पाँच प्रमुख मुद्दों पर सुधार किया जाना प्रस्तावित है–

(1) सदस्यता की श्रेणी
(2) पाँच स्थायी सदस्यों द्वारा प्राप्त वीटो पॉवर का प्रश्न
(3) क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व
(4) सुरक्षा परिषद के आकार का विस्तार
(5) प्रक्रियात्मक सुधार तथा संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद व संयुक्त राष्ट्र महासभा के बीच सम्बन्ध।

इसके साथ ही परिषद् में अधिक स्थायी सदस्यों को शामिल करने का भी प्रस्ताव है।

21वीं सदी के तीसरे दशक में विश्व अनेक प्रकार के संकटों का सामना कर रहा है। स्वास्थ्य, जलवायु परिवर्तन, खाद्य, ईंधन और उर्वरक सुरक्षा से जुड़े अनेक संकट बहुपक्षीयवाद के प्रभाव को कम कर रहे हैं। भू–आर्थिक और भू–राजनीतिक चुनौतियों की श्रृंखला समस्या को विकराल बना रही है। ऐसे में 'संशोधित बहुपक्षीयवाद' की अनिवार्यता और तात्कालिक हो जाती है और इसे व्यापक तौर पर स्वीकार्यता भी मिल रही है। इसके बावजूद जी–20, औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं के साथ–साथ अन्य बड़ी ताकतों के दबाव का सामना कर रहा है। इस विडम्बना के चलते इस समूह के नेता अब भी 'पुनर्जीवित बहुपक्षीयवाद' से आगे नहीं सोच पा रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि अनेक संस्थान 1945 के बाद से कार्यरत हैं। दूसरी ओर प्रमुख संस्थानों में 'संशोधित बहुपक्षीयवाद' के विचार के साथ भारी–भरकम सुधार की माँग जुड़ी हुई है, ताकि वो अधिक प्रतिनिधित्वकारी हों, अधिक लोकतांत्रिक हों और मौजूदा चुनौतियों से निपटने में मानव समाज की मदद करने को लेकर बेहतर तरीके से तैयार किए गए हों। भारत के विदेश मंत्रालय ने दिसम्बर 2022 में इस शब्दावली का प्रयोग किया था। 'बहुपक्षीय प्रणाली के लिए नए दिशानिर्देश' प्रस्तावित किए थे। इस संदर्भ में इस पॉलिसी ब्रीफ में संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के सुधार पर ध्यान देने का प्रयास किया गया है।

चूंकि अब तक अपनाया गया बॉटम–अप (नीचे से ऊपर की ओर प्रवाह वाला) रुख असफल रहा है, विशेष से वर्तमान युग में जब विश्व गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है। इसलिए अब बॉटम–अप रुख का पूर्णतः छोड़े बिना टॉप–डाउन (ऊपर से नीचे की ओर) रणनीति अपनाने का समय आ गया है। दोनों रणनीतियों का बुद्धिमानी पूर्वक मिश्रण अधिक संतोषजनक परिणाम सकता है।

इस प्रस्ताव में निम्न दो खण्ड जुड़े हुए हैं–

(1) पहला खण्ड (और ये इस प्रस्ताव की आत्मा है) प्रस्ताव करता है कि जी–20 का सर्वोच्च सियासी नेतृत्व 'पुनर्जीवित बहुपक्षीयवाद' के तंग और सीमित विचार के स्थान पर भविष्य की ओर रुख दिखाने वाले 'संशोधित बहुपक्षीयवाद' की परिकल्पना का चुनाव करे। लक्ष्य सरल है : मौजूदा बहुपक्षीय व्यवस्था को निश्चित रूप से अपने–आप में सुधार लाना चाहिए। इसमें यह प्रस्ताव करना होगा कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का विस्तार (स्थायी और गैर–स्थायी दोनों श्रेणियों में) किया जाए, उसे अधिक प्रतिनिधित्वकारी और पहले से अधिक लोकतांत्रिक बनाया जाए।

(2) दूसरे खण्ड में निम्नलिखित दो प्रस्ताव शामिल हैं–

पहली सिफारिश– भारत द्वारा जी–20 की बैठक की अध्यक्षता ने आशाओं की एक नई रोशनी दिखाई है। ऐसे में माना जा रहा है कि समूह में वर्तमान ध्रुवीकरण के बावजूद बहुपक्षीय संस्थानों (विशेषतौर से सुरक्षा परिषद) में सुधार के लिए कुछ प्रगति हासिल की जा सकती है। इसलिए जी 20 के पास विशेष जिम्मेवारी है।

'ये जी–20 के सदस्यों पर निर्भर करता है कि वो इस मंच को एक सलाहकारी मंच के रूप में चलाएँ या फिर विश्व का नेतृत्व करने वाले मंच के रूप में, वो अपनी करनी के जरिये उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं। मुझे आशा है कि भारतीय नेतृत्व हमें किसी प्रकार के समाधान के करीब ले जाने में सहायता करेगा क्योंकि केवल कार्रवाइयों, मात्र निवेशों और केवल ऐसी सहयोग ही हमें तमाम मसलों में बदतर हालात में घिरने से बचा सकते हैं।'

दूसरी सिफारिश– अतीत को ध्यान में रखते हुए इस मसले पर गहरी पेचीदगियों और लगातार जारी विभिन्नताओं को देखते हुए प्रस्तावित पैराग्राफ पर वार्ता करने के लिए एक विशेष तंत्र की आवश्यकता होगी। सुधार के विरोधियों द्वारा तैयार किए गए गतिरोध को तोड़ने के लिए संयुक्त राष्ट्र की प्रक्रिया अपने–आप में पर्याप्त नहीं है। इसलिए जी–20 की अध्यक्षता कर रहे देश के नाते भारत को शीघ्रता से एक विशेष बैठक बुलानी चाहिए। इसमें सभी जी–20 देशों के शेरपा, विदेश सचिव और संयुक्त राष्ट्र में तैनात होने वाली परिचर्चाओं के द्वारा प्रतिभागियों को एक सार्थक सूत्र बनाने की जिम्मेदारी सौंपी जा सकती है। एक ऐसा सूत्र जो अधिकांशतः (भले ही सबको न सही) प्रतिभागियों को स्वीकार्य हो। जी–20 के सदस्य राष्ट्रों में से बहुसंख्यक भाग द्वारा समर्थित पैराग्राफ सियासी रूप से ठोस होगा। इस दिशा में यदि किसी प्रकार के मतभेद होंगे तो उनका दिल्ली शिखर सम्मेलन में शीर्ष नेताओं के व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा समाधान किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद को अधिक प्रतिनिधित्वकारी और आज की वास्तविकताओं का दर्पण दिखाने वाला होना चाहिए। इस हेतु गंभीरतापूर्वक टेक्स्ट–आधारित और समय की पाबंदियों वाली वार्ताओं को आगे बढ़ाने का स्पष्ट आव्हान संयुक्त राष्ट्र के लिए अत्यन्त लाभदायक होगा। ये जी–20 के दिल्ली शिखर सम्मेलन के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार की आवश्यकता क्यों?

वर्तमान समय में भी संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद द्वितीय विश्वयुद्ध के समय की भू–राजनीतिक संरचना को दर्शाती है। परिषद के पाँच स्थायी सदस्यों अमेरिका, ब्रिटेन, रूस, फ्रांस और चीन को सात दशक पूर्व केवल एक युद्ध जीतने के आधार पर किसी भी परिषद के प्रस्ताव या निर्णय पर वीटो का विशेषाधिकार प्राप्त है। सुरक्षा परिषद का विस्तार वर्ष 1963 में 4 गैर–स्थायी सदस्यों को इसमें शामिल करने हेतु किया गया था। उस समय 113 देश संयुक्त राष्ट्र के सदस्य थे, लेकिन वर्तमान में इनकी संख्या 193 हो गई है, फिर भी आज तक इसका विस्तार नहीं किया गया है। परिषद की वर्तमान संरचना कम–से–कम 50 वर्ष पहले की शक्ति संतुलन की व्यवस्था पर बल देती है। उदाहरणार्थ यूरोप (जहाँ विश्व की कुल जनसंख्या की मात्र 5% जनसंख्या ही निवास करती है) का परिषद में स्थायी सदस्य के तौर पर सर्वाधिक प्रतिनिधित्व है। अफ्रीका का कोई भी देश सुरक्षा परिषद का स्थायी सदस्य नहीं है, जबकि संयुक्त राष्ट्र का 50% से अधिक कार्य अकेले अफ्रीकी देशों से सम्बन्धित है। शांति बनाये रखने के अभियानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के बावजूद वर्तमान सदस्यों द्वारा उन देशों के पक्ष को नजरंदाज कर दिया जाता है। भारत इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

निष्कर्ष– अनेक संकटों वाले इस युग में बहुपक्षीय संस्थाओं की विश्वसनीयता कमजोर पड़ रही है। ऐसे में जी–20 को 'पुनर्जीवित बहुपक्षीयवाद' के बजाय 'संशोधित बहुपक्षीयवाद' का चुनाव करने की आवश्यकता है। अगले कदम के तौर पर इसे स्पष्ट रूप से एक विस्तारित, पहले से अधिक लोकतांत्रिक, अधिक प्रतिनिधित्वकारी और पहले से अधिक जवाबदेह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के पक्ष में सामने आना चाहिए।

प्रश्न–3. अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतंत्रीकरण हेतु भारत की मांग क्या है? वर्णन कीजिए।

अथवा

भारत की अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतंत्रीकरण हेतु क्या मांगें हैं? समझाइए।

उत्तर– अन्तर्राष्ट्रीय संगठन में लोकतंत्रीकरण– अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का लोकतंत्रीकरण इन वैश्विक संस्थानों को अधिक समावेशी, पारदर्शी, जवाबदेह और उनके सदस्य राज्यों के विविध हितों और आवाजों का प्रतिनिधि बनाने के उद्देश्य से किए गए प्रयासों को संदर्भित करता है। यह अवधारणा इस विश्वास से प्रेरित है कि अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के भीतर निर्णय लेने में लोकतांत्रिक सिद्धान्तों को प्रतिबिम्बित करना चाहिए और निष्पक्षता, समानता और वैधता को बढ़ावा देना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को लोकतांत्रिक बनाने के प्रयास सामान्यतः वैश्विक शासन की एक अधिक न्यायसंगत और प्रभावी प्रणाली बनाने की इच्छा से प्रेरित होते हैं, जहाँ सभी सदस्य देशों के हितों और चिंताओं को ध्यान में रखा जाता है। हालांकि लोकतंत्रीकरण प्राप्त करना एक जटिल और विवादास्पद प्रक्रिया हो सकती है, क्योंकि इसके लिए विभिन्न स्तरों के प्रभाव और अलग–अलग हितों वाले विभिन्न दलों के बीच बातचीत की आवश्यकता हो सकती है।

भारत की अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतंत्रीकरण की मांग– कई अन्य देशों की भाँति भारत ने भी ऐतिहासिक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतंत्रीकरण का आव्हान किया है। यह मांग वैश्विक शासन में समानता, निष्पक्षता और प्रतिनिधित्व के सिद्धान्तों में निहित है। इस मुद्दे पर भारत के दृष्टिकोण को निम्नलिखित बिन्दुओं में संक्षेप में व्यक्त किया जा सकता है–

(1) **न्यायसंगत प्रतिनिधित्व–** भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों, विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र (यूएन) और इसकी सुरक्षा परिषद जैसे निकायों में सभी सदस्य देशों के न्यायसंगत प्रतिनिधित्व की आवश्यकता पर जोर दिया है। भारत का तर्क है कि इन संगठनों को समकालीन वैश्विक शक्ति संरचना को बेहतर ढग से प्रतिबिम्बित करना चाहिए और विकासशील देशों से अधिक प्रतिनिधित्व शामिल करना चाहिए।

(2) **संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का विस्तार–** भारत संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के विस्तार का प्रबल समर्थक रहा है, जिसे अधिकांशतः जी–4 समूह कहा जाता है, जिसमें भारत, जर्मनी, ब्राजील और जापान शामिल हैं। ये देश अपने महत्वपूर्ण आर्थिक और राजनीतिक प्रभाव को दर्शाने हेतु सुरक्षा परिषद में स्थायी सीटें चाहते हैं।

(3) **अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों में सुधार–** भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) और विश्व बैंक जैसे अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों में सुधारों पर भी जोर दिया है। अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के साथ भारत का मानना है कि इन संस्थानों को विकासशील देशों को अधिक आवाज और प्रतिनिधित्व प्रदान करना चाहिए।

(4) **लोकतांत्रिक निर्णय–निर्माण–** भारत अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के भीतर लोकतांत्रिक निर्णय–प्रक्रिया के महत्व पर जोर देता है। यह कुछ शक्तिशाली देशों को निर्णय

लेने की प्रक्रिया पर हावी होने की अनुमति देने के बजाय प्रमुख निर्णयों में पारदर्शिता, जवाबदेही और सभी सदस्य देशों की भागीदारी पर जोर देता है।

(5) **वैश्विक चुनौतियों को सम्बोधित करना–** भारत का मानना है कि जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद और महामारी जैसी वैश्विक चुनौतियों से प्रभावी ढंग से निपटने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का लोकतंत्रीकरण जरूरी है। इन मुद्दों के लिए सहयोगात्मक और समावेशी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

(6) **सम्प्रभुता का सम्मान करना–** लोकतंत्रीकरण की शिफारिश करते हुए, भारत व्यक्तिगत राष्ट्रों की सम्प्रभुता का सम्मान करने के महत्व पर भी जोर देता है। भारत का मानना है कि अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को सदस्य देशों की सम्प्रभुता का उल्लंघन नहीं करना चाहिए।

(7) **बहुपक्षवाद को बढ़ावा दिया जाना–** भारत सामान्यतः वैश्विक समस्या के समाधान के लिए बहुपक्षीय दृष्टिकोण का समर्थन करता है और मानता है कि अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का लोकतंत्रीकरण बहुपक्षवाद की प्रभावशीलता को सुदृढ़ कर सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतंत्रीकरण पर भारत का रुख अधिक समावेशी, न्यायपूर्ण और प्रतिनिधि वैश्विक व्यवस्था की उसकी आकांक्षा को दर्शाता है। हालांकि ऐसे सुधारों को हासिल करना एक जटिल और विवादास्पद प्रक्रिया हो सकती है, क्योंकि इसमें अधिकांशतः अलग-अलग हितों और दृष्टिकोण वाले देशों के विभिन्न समूह के बीच बातचीत सम्मिलित होती है।

प्रश्न–4. N.P.T. पर टिप्पणी लिखिये।

उत्तर– N.P.T. का अर्थ नाभिकीय-शस्त्र निषेध सन्धि है। इसका पूर्ण शब्द है– Nuclear Non Profitarian Treaty। निःशस्त्रीकरण की समस्या वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण निरन्तर बढ़ती चली जा रही है। आणविक शस्त्रों के आविष्कार के बाद अब अन्तरिक्ष के क्षेत्र में निरन्तर प्रगति हो रही है। अब तक प्रश्न केवल आकाश और धरती का था, या समुद्रों का था परन्तु आज मनुष्य अन्तरिक्ष पर विजय पा चुका है। इसलिये निःशस्त्रीकरण की समस्या और भी गम्भीर हो गयी है। अतः आज की मुख्य समस्या नाभिकीय अस्त्र-शस्त्रों के नियंत्रण की भी है।

इन नाभिकीय शस्त्रों के प्रसार को रोकने के लिये अनेक सन्धियाँ की गई हैं। ऐसी प्रथम सन्धि एन्टार्कटिका सन्धि थी। यह 1 दिसम्बर, 1959 को सम्पन्न हुई। इस पर 22 देशों ने हस्ताक्षर किये। इसमें एन्टार्कटिका के सैनिक कार्यों विशेष रूप से उसके नाभिकीय परीक्षणों के लिय उसके प्रयोग का घोर विरोध किया गया है।

दूसरी सन्धि बाह्य अन्तरिक्ष सन्धि (Outer Surface Treaty) थी, जिस पर 27 जनवरी, 1967 को 26 देशों ने हस्ताक्षर किये। इसके द्वारा पृथ्वी की कक्षा में नाभिकीय शस्त्रों को भेजने और वहां उनका भण्डार बनाने का निषेध किया गया। 14 फरवरी, 1967 को लैटिन अमेरिका के देशों ने लैटिन अमेरिका नाभिकीय मुक्त क्षेत्र सन्धि की परन्तु क्यूबा, अर्जेन्टाईना, चिली और ब्राजील ने इसकी पुष्टि नहीं की। चौथी और सर्वाधिक महत्वपूर्ण सन्धि 1 जुलाई, 1968 की परमाणु शस्त्र प्रसार नियंत्रण सन्धि (Nuclear Non Profitation Treaty) है। यह नाभिकीय शस्त्रों से विहीन राष्ट्रों को नाभिकीय तकनीकी के स्थानान्तरण पर रोक लगाती है। ऐसे अनेक राज्य जो नाभिकीय शस्त्रों का विकास करने की क्षमता रखते हैं, उसके विरोधी हैं। भारत एक ऐसा ही देश है। पाँचवीं सन्धि समुद्र तल सन्धि है, जिस पर फरवरी 11, 1971 को 60 राज्यों ने हस्ताक्षर किये। यह सन्धि समुद्री तट

से 12 मील दूर के समुद्र तल में नाभिकीय शस्त्रों के विकास का निषेध करती है। सितम्बर, 1971 में रूस और अमेरिका ने दुर्घटनात्मक उपयोग रोकने के लिये दुर्घटना उपाय समझौता किया। 22 जून, 1973 को दोनों महाशक्तियों में नाभिकीय युद्ध निरोध समझौता हुआ जिसमें नाभिकीय युद्ध की आपदा होने पर दोनों महाशक्तियों में बातचीत की व्यवस्था (हाट लाईन) की गई।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि निःशस्त्रीकरण को बहुत थोड़ी सफलता मिली है। इसमें सबसे अधिक असफल और विवादास्पद सन्धि 1968 की नाभिकीय शस्त्र-प्रसार निषेध सन्धि है। यद्यपि इस सन्धि पर 157 देशों ने हस्ताक्षर कर दिये हैं, फिर भी तीसरे विश्व के अनेक देश विशेषकर भारत, नाईजीरिया, मिस्र, ईरान, मलेशिया, इजराइल, पाकिस्तान, दक्षिणी अफ्रीका आदि ऐसी शक्तियाँ हैं जिन्होंने नाभिकीय तकनीकी में कुछ कुशलता प्राप्त कर ली है। ये इस सन्धि को भेदभावकारी व अन्यायपूर्ण मानते हैं। इसके द्वारा नाभिकीय शक्तियों ने गैर-नाभिकीय शक्तियों पर उनके नाभिकीय शक्ति बनने पर प्रतिबन्ध लगाया। उन्हें यह सन्धि अपनी नाभिकीय शक्ति के विकास के अधिकार को त्यागने की बात कहती है, और पूर्व महाशक्तियों के लिये नाभिकीय परीक्षण और विकास करने का अधिकार सुरक्षित रखती है।

भारत चाहता है, कि सभी नाभिकीय शस्त्र नष्ट कर दिये जायें अर्थात् नाभिकीय शक्तियां भी अपने शस्त्रों को नष्ट करें। जब तक ऐसा नहीं हो जाता तब तक नाभिकीय प्रसार सन्धि (N.P.T.) को ऐसा भेदभावकारी संविदा माना जायेगा जो अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों के वर्तमान पदसोपान को कानूनी रूप देती है तथा गैर-नाभिकीय शक्तियों की द्वितीय श्रेणी की स्थिति को स्थायित्व प्रदान करता है। इसलिये भारत और पाकिस्तान सहित अनेक मध्यम श्रेणी की शक्तियों ने इस सन्धि को स्वीकार करने से इंकार कर दिया है।

निःशस्त्रीकरण के प्रयत्नों को 1973 में एक भारी धक्का तब लगा जब उत्तरी कोरिया जिसने 1985 में नाभिकीय शस्त्र-प्रसार निषेध सन्धि पर हस्ताक्षर कर दिये थे, ने 12 मार्च, 1973 को नाभिकीय शस्त्र निषेध सन्धि (N.P.T.) से अलग हो जाने की घोषणा की।

प्रश्न–5. सी. टी.बी. टी. संधि की विवेचना कीजिये।

अथवा

सी.टी.बी.टी. संधि क्या है? भारत इसे क्यों पक्षपातपूर्ण संधि मानता है? विवेचना कीजिये।

अथवा

सी.टी.वी.टी. संधि क्या है? इसके प्रति भारतीय दृष्टिकोण की व्याख्या कीजिये।

उत्तर– परमाणु शास्त्रों पर रोक लगाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से प्रयास लम्बे समय से किये जा रहे हैं। युद्ध से मानव जाति का सम्पूर्ण का सम्पूर्ण विनाश हो सकता है, इसलिये अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति निःशस्त्रीकरण एवं शस्त्र नियन्त्रण को एक आदर्श एवं कारगर उपाय स्वीकार करती है। परमाणु शस्त्रों का परिसीमन वर्तमान सदी की सबसे बड़ी आवश्यकता है। परमाणु शक्ति का सबसे पहले प्रयोग द्वितीय विश्व युद्ध के समय अमेरिका के द्वारा किया गया था। संयुक्त राष्ट्र संघ में इस कार्य के लिये 1952 में एक निःशस्त्रीकरण आयोग बनाया गया। 1963 में निःशस्त्रीकरण के लिये सोवियत संघ, ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त-राज्य अमेरिका ने मास्को में आंशिक परीक्षण निषेध सन्धि पर हस्ताक्षर किये थे किन्तु चीन और फ्रांस ने इस सन्धि को नहीं माना था। 1968 में अमेरिका व सोवियत संघ के मध्य परमाणु अप्रसार सन्धि सम्पन्न हुयी। भारत, चीन, फ्रांस, अर्जेन्टाइना, ब्राजील व पाकिस्तान ने इस सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं किये। पाकिस्तान ने इसलिये हस्ताक्षर नहीं किये थे, क्योंकि भारत ने इस सन्धि का विरोध किया था। भारत इस संधि को पक्षपातपूर्ण मानता था। यह सन्धि

फ्रांस व चीन के परमाणु शक्ति विकास कार्यक्रमों को रोकने में असफल रही। इस सन्धि के बाद में भी परमाणु शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र परमाणु शस्त्रों की प्रतिस्पर्धा में लगे रहे। पाकिस्तान भी चीन की सहायता से परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बन गया। इस सन्धि ने पाँच परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्रों को एक विशिष्ट सुविधा प्रदान कर दी।

व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध सन्धि (सी.टी.बी.टी.) के प्रमुख प्रावधान-- सी.टी.बी.टी. सन्धि के प्रारूप पर लम्बे समय तक वार्तायें चलीं। यह सन्धि विश्व भर में किये जाने वाले परमाणु परीक्षणों पर रोक लगाने के उद्देश्य से किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय समझौता था। भारत अमेरिका के साथ इस समझौते का सह-प्रस्तावक था। 1996 तक इस सन्धि के विवादास्पद प्रावधानों पर बहस चलती रही। भारत जो पहले सन्धि का सह-प्रस्तावक बना था, बाद में अलग हो गया। इस सम्बन्ध में भारत का कहना था कि यह सन्धि सार्वभौमिक परमाणु निःशस्त्रीकरण के समयबद्ध कार्यक्रम से नहीं जुड़ी है। इसलिये इसे स्वीकार करने से भारत के राष्ट्रीय हितों को बहुत हानि होगी। सी.टी.बी.टी. के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं-

(1) यह सन्धि सभी प्रकार की आणविक शस्त्र सम्बन्धी विस्फोटक परीक्षण को प्रतिबन्धित करती है।

(2) एक अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रक व्यवस्था की स्थापना होगी जो सन्धि के प्रावधानों के भंग होने की जाँच करेगी।

(3) बीस नियंत्रक केन्द्र स्थापित होंगे जो दुनिया के किसी भी कोने में होने वाले एक हजार टन के पारम्परिक विस्फोट से अधिक शक्तिशाली विस्फोट को पकड़ सकेंगे।

(4) नियन्त्रण केन्द्रों से प्राप्त सूचनाओं एवं व्यक्तिगत राष्ट्रों के पर्यवेक्षण से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर कोई भी राष्ट्र परमाणु हथियारों के निरीक्षण का अनुरोध कर सकता है। ऐसे अनुरोध के लिये इक्यावन सदस्यीय कार्यकारी परिषद् में से 30 वोट आवश्यक होंगे।

(5) सी.टी.बी.टी. का मुख्यालय वियना (आस्ट्रिया) में होगा। इसमें इक्यावन सदस्यों वाली कार्यकारी परिषद् होगी, जिसके प्रतिनिधियों का चुनाव क्षेत्रीय आधार पर होगा। सारे निर्णय कार्यकारी परिषद् द्वारा लिये जायेंगे।

व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध सन्धि के प्रति भारतीय दृष्टिकोण– भारत अमेरिका के द्वारा प्रस्तावित व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध सन्धि को भेदभावमूलक सन्धि मानता है। इस सन्धि के सम्बन्ध में भारत का कहना है कि इसमें उन पाँच परमाणु शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रों के द्वारा अपने परमाणु शस्त्र नष्ट करने की कोई समय-सीमा निश्चित नहीं की गयी है। इस प्रकार इन राष्ट्रों के पास हमेशा परमाणु शक्ति बनी रहेगी। वे परमाणु शक्ति के माध्यम से परमाणु हथियारों का विकास करते रहेंगे। भारत का इस सन्धि के सम्बन्ध में यह मानना भी है कि यह सन्धि बहुत संकीर्ण है। इसके द्वारा नये विस्फोट रोकने की बात कही गयी है, पर परमाणु अस्त्र-शस्त्र के विकास के विषय में यह सन्धि चुप है। इस सन्धि पर 24 सितम्बर, 1996 से हस्ताक्षर प्रारम्भ हुये थे तथा अब तक इस पर 154 राष्ट्रों ने हस्ताक्षर कर दिये हैं। परमाणु शक्ति-सम्पन्न पाँच बड़े राष्ट्रों ने जिनमें प्रमुख संयुक्त-राज्य अमेरिका, रूस, ग्रेट ब्रिटेन और फ्राँस ने इस पर हस्ताक्षर कर दिये हैं। मई 1998 के बाद भारत एक परमाणु शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र बन गया है। भारत के बाद पाकिस्तान भी परमाणु शक्ति-सम्पन्न राष्ट्रों की बिरादरी में शामिल हो गया। भारत और पाकिस्तान पर दबाव डालने के लिये संयुक्त-राज्य अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन ने इन राष्ट्रों पर आर्थिक प्रतिबन्ध लगाये थे, तब भारत ने

घोषित किया था कि वह किसी प्रकार के दबाव में आकर व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। भारत को अपनी सुरक्षा के लिये अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये परमाणु शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र बनना आवश्यक है। भारत का जनमत पूरी तरह भारत सरकार के दृष्टिकोण का समर्थन करता है। व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध सन्धि का भारत के द्वारा जो विरोध किया जा रहा है, वह सही है, क्योंकि इस सन्धि के द्वारा परमाणु शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र अपने लाभों को बनाये रख रहे हैं और परमाणु शस्त्र-विहीन राष्ट्रों को इस सन्धि के माध्यम से परमाणु क्षमता का विकास करने से रोकने का प्रयास कर रहे हैं। इस दिशा में अमेरिका की भूमिका महत्वपूर्ण है। अमेरिका का यह प्रयास रहा है कि दक्षिण एशिया परमाणु शस्त्र-विहीन क्षेत्र बन जाये। भारत और पाकिस्तान जैसी क्षेत्रीय शक्तियाँ परमाणु शक्ति का विकास नहीं करें। वास्तव में देखा जाये तो यह सन्धि विश्व में शक्ति-सम्पन्न और शक्ति-विहीन राष्ट्रों के भेद को शाश्वत बनाने का कार्य कर रही हैं। सारे प्रतिबन्ध शक्ति हीनों पर लगाये जा रहे हैं। जब महाशक्तियों ने परमाणु शक्ति का विकास कर लिया तब वे निःशस्त्रीकरण का बहाना लेकर सन्धि की बात करते हैं। सन्धियों में भी इस तथ्य का कोई उल्लेख नहीं है कि एक निश्चित समयावधि में वे अपने परमाणु आयुधों को नष्ट कर देंगे। इसलिये इस सन्धि का उद्देश्य परमाणु शस्त्र नियन्त्रण न होकर परमाणु शक्तियों की श्रेष्ठता एवं उच्चता को स्थायी बनाना है। समय-समय पर कुछ राष्ट्रों ने परमाणु आयुधों से सम्बन्धित अन्य सन्धियों का उल्लंघन किया था। उनके विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी विश्व संस्था ने कोई कार्यवाही नहीं की, तब इस सन्धि का भी उल्लंघन हो सकता है। यह सन्धि एक अधूरी सन्धि है। यह एकपक्षीय तथा अन्यायपूर्ण है। ऐसी भेदभावमूलक सन्धि को भारत के लिये मानना अपने राष्ट्रीय हित के विरूद्ध होगा। इसलिये भारत व्यापक परमाणु प्रसार निषेध सन्धि पर हस्ताक्षर करने का विरोध कर रहा है जोकि पूर्णतः उचित है।

प्रश्न–6. पर्यावरण संरक्षण में भारत की भूमिका का वर्णन कीजिये।

अथवा

विश्व पर्यावरण के सम्बन्ध में भारत की नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

भारत की हरित (पर्यावरण) राजनीति पर विस्तृत लेख लिखिये।

उत्तर– पर्यावरणवाद (Envioronmentatism) एक विचारात्मक आन्दोलन है। डॉ. ओमप्रकाश गावा के शब्दों में यह आन्दोलन पश्चिमी राजनीति में 1970 में शुरू होने वाले दशक में उभरकर सामने आया और धीरे-धीरे पूरे विश्व में फैल गया। इसका मुख्य ध्येय पर्यावरण प्रदूषण (Atmospheric Polution) को रोकना और पर्यावरण के प्राकृतिक संसाधनों (National resources) की क्षति को पूरा करना है। वातावरण में विज्ञान से गहरे सरोकार के कारण पर्यावरणवादियों को पारिस्थितिकी विज्ञानवादी (Ecologist) भी कहा जाता है। फिर चूंकि इस आन्दोलन के अन्तर्गत वातावरण में हरियाली कायम रखने पर बल दिया जाता है इसलिये इससे प्रेरित राजनीति को हरित राजनीति की संज्ञा दी जाती है। कुछ देशों में जैसे न्यूजीलैण्ड पश्चिमी जर्मनी और ब्रिटेन के हरित राजनीति के लक्ष्यों की सिद्धि के लिये राजनीतिक दल बनाये गये हैं और चुनाव भी लड़े गये हांलाकि उन्हें कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली।

भारत के लिये पर्यावरण की समस्या एक गंभीर चुनौतीपूर्ण समस्या है क्योंकि हमारे देश में पुराने साम्राज्यवादियों ने प्राकृतिक संसाधनों का निर्भयतापूर्वक शोषण किया। वर्तमान में भी पूँजीवादी तथा सरमायेदार और विकसित देश या पर्यावरण को बिगाड़ रहे हैं, नदियां दूषित हो चुकी हैं उनमें गन्दगी जमा हो रही है। शहर धूल और धुंये से प्रदूषित हैं। भारत इस

समस्या के प्रति तो जागरूक है और इस समस्या को लेकर जो भी पृथ्वी सम्मेलन हुये हों चाहे वह रियोडजेनीरो सम्मेलन हो या जोहान्सबर्ग का सम्मेलन भारत ने भाग लेकर लेकर अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज कराई। जब-जब यह समस्या संयुक्त राष्ट्र संघ के मंच पर उपस्थित हुई भारत ने इसमें सशक्त भूमिका निभाई है परन्तु पूँजीवादी और विकसित देशों की पर्यावरण नीति की चिन्ता न कर अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति की है। भारत जब और जहाँ कहीं पृथ्वी सम्मेलन होते हैं वहाँ-वहाँ अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराकर विरोध तो दर्ज कराता है परन्तु हम पूँजीवादी और विकसित राष्ट्रों का सशक्त और सफल विरोध नहीं कर पा रहे हैं। यह हमारे देश की आन्तरिक समस्या भी है। हमें दूसरों से कहने का अधिकार जब है जबकि हम अपने पर्यावरण की सुरक्षा करके दूसरों के सामने आदर्श प्रस्तुत करें।

भारत में पर्यावरण की राजनीति को लेकर मेघा पाटकर और सुन्दरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में दबाव-समूहों का विकास हुआ। सरकार की नीति इन दबाव-समूहों के दमन की है। हाँ सरकारी स्तर पर हरित राजनीति के कुछ नाटक जरूर देखने को मिलते हैं परन्तु भारत की तत्सम्बन्धी नीति अधिक दिखावा बनकर ही रह गई है। इसीलिये पर्यावरणीय आन्दोलन में भी भारत की आवाज को कोई महत्व नहीं दिया जाता।

रियोडिजेनेरो और जोहान्सबर्ग सम्मेलन में भारत ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यद्यपि भारत भी विश्व पर्यावरण को प्रदूषित करने में 3 प्रतिशत जिम्मेदार है। परन्तु संयुक्त-राज्य अमेरिका इसके 25 प्रतिशत प्रदूषण के लिये जिम्मेदार है। भारत और उसके साथी विकासशील देश तो अपने प्रदूषण पर रोक लगाने के लिये भरसक प्रयत्न करने को तैयार हैं, परन्तु इस कार्य में सबसे बड़ी बाधा संयुक्त-राज्य अमेरिका और उसके साथी विकसित देश हैं। इन सम्मेलनों में सबसे बड़ी परेशानी यही है कि विकसित देश अपने कर्तव्यों का पालन करने से कतराते हैं, वे केवल मौखिक चिन्ता व्यक्त करना चाहते हैं। जार्ज बुश ने इस संधि पर उस समय हस्ताक्षर नहीं किये।

संयुक्त राष्ट्र पृथ्वी शिखर सम्मेलन (न्यूयार्क) : जून 1997- 1992 में रियो डि जेनेरो में सम्पन्न हुए पृथ्वी शिखर सम्मेलन में लिए गए निर्णयों की प्रगति का मूल्यांकन करने हेतु एक पाँच दिवसीय संयुक्त राष्ट्र पृथ्वी शिखर सम्मेलन 23-27 जून, 1997 को न्यूयार्क में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में 170 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। विश्व में निरन्तर कम हो रहे वनों, नष्ट हो रही प्रजातियों तथा घटते हुए मत्स्य संग्रह के प्रति अधिकांश देशों ने इस सम्मेलन में चिन्ता प्रकट की।

ग्लोबल वार्मिंग पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन : क्योटो-दिसम्बर 1997- पृथ्वी को बढ़ते तापमान से बचाने के लिए दिसम्बर 1997 में जापान के क्योटो नगर में ग्लोबल वार्मिंग सम्मेलन सम्पन्न हुआ। "विश्व पर्यावरण सम्मेलन तथा ग्रीन हाउस सम्मेलन" नाम से चर्चित इस सम्मेलन में वातावरण को गर्म करने वाली गैसों के उत्सर्जन को नियन्त्रित करने पर यद्यपि सभी राष्ट्र सहमत थे, लेकिन इसकी सीमा का निर्धारण विवाद का ही मुद्दा बना रहा।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु समझौता सम्मेलन (मॉण्ट्रियल) दिसम्बर 2005- धरती के बढ़ते तापमान को कम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र जलवायु समझौता सम्मलेन कनाडा के मॉण्ट्रियल शहर में 13 दिन तक चली लम्बी बहस के साथ 10 दिसम्बर, 2005 को सम्पन्न हुआ। यह एक विशाल सम्मेलन था जिसमें 189 राष्ट्रों के लगभग दस हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन के अन्तिम दिन 150 से अधिक राष्ट्रों ने ग्रीन हाउस गैसों को क्योटो ताप संधि के निर्धारित लक्ष्य पर औपचारिक वार्ताओं में सम्मिलित होने पर सहमति व्यक्त की।

इस संधि में औद्योगिक राष्ट्रों के लिए वर्ष 2008 से 2012 के मध्य ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी का लक्ष्य है।

जलवायु परिवर्तन पर (कोपनहेगन) सम्मेलन (दिसम्बर 2009)- जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र का सम्मलेन 'कॉप-15" डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन में 7-18 दिसम्बर, 2009 को सम्पन्न हुआ। 192 देशों के प्रतिनिधियों ने 12 दिन चले इस सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा कर प्रदूषणकारी गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश के लिए एक सर्वसम्मत समझौते पर पहुँचने का प्रयास किया, लेकिन सर्वसम्मत समझौते पर नहीं पहुँचा जा सका।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन अभिसमय की रूपरेखा पक्षकारों के 17वें सम्मेलन तथा क्योटो प्रोटोकोल के पक्षकारों की 7वीं बैठक 28 नवम्बर से 9 दिसम्बर 2011 तक डरबन में आयोजित की गई। इसमें कई महत्वपूर्ण निर्णय लिए गये। विशेषतः, विकसित देश के लिए क्योटो प्रोटोकोल की दूसरी प्रतिबद्धता अवधि पर सहमति व्यक्त की गई। इसके अतिरिक्त, इस सम्मेलन में 2010 में कानकुन में सहमत संरचनाओं के प्रचालन से संबंधित निर्णयों को अपनाया गया। इस सम्मेलन में 192 देशों की उपस्थिति में गहन विचार-विमर्श के पश्चात् यह सहमति बनी कि सन् 2015 तक एक समझौते पर सहमति बना ली जावेगी।

इस सम्बन्ध में सबसे बड़ी बाधा यही है कि इन विकसित देशों की केवल आलोचना ही की जा सकती है। इनकी दादागीरी के कारण इन पर शक्तिशाली दबाव डालना सम्भव नहीं है। फिर भी भारत इस सम्बन्ध में सम्मेलन में अपनी बात को खुलकर कहता है।

प्रश्न-7. सीमापार आतंकवाद क्या है? भारत की आतंकवाद विरोधी नीति पर प्रकाश डालिये।

अथवा

आतंकवाद की समस्या के प्रति भारतीय दृष्टिकोण की व्याख्या कीजिये।

अथवा

सीमापार आतंकवाद पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

उत्तर- आतंकवाद दो प्रकार का होता है। एक अन्तर्देशीय (Inland) कहलाता है इसमें देश के अन्दर ही आतंकवादियों द्वारा अपनी सरकार के विरुद्ध आतंकवादी कार्यवाही करते हैं। इसके उदाहरण श्रीलंका के तमिल आतंकवादी लिट्टे का आतंकवाद तथा भारत में खालिस्तान की माँग के लिये पूर्व में चलाया गया आतंकवाद एवं मिजो तथा नागा विद्रोहियों का आतंकवाद आता है। इसके विपरीत दूसरे प्रकार का आतंकवाद सीमा पार कहलाता है क्योंकि यह दूसरे देश से प्रायोजित होता है। इसमें विरोधी विदेशी सरकार का हाथ होता है। कश्मीर में आतंकवाद सीमा पार चलाया जाने वाला आतंकवाद ही है। यह पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित है। इसे चलाने के लिये प्रशिक्षण शिविर पाकिस्तान की भूमि से चलाये जा रहे हैं। यह एक प्रकार का अप्रत्यक्ष युद्ध है या अप्रत्यक्ष आक्रमण है।

भारत में जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद सीमा-पार से प्रायोजित आतंकवाद ही है। अप्रैल, 2002 में भारत के गृह राज्यमंत्री सी.एच. विद्यासागर राव ने राज्यसभा में एक प्रश्न के उत्तर में बताया था कि भारत में लश्कर-ऐ-तोयबा, जैश-ए-मोहम्मद, लिट्टे, हरकत उल मुजाहिद्दीन आदि प्रमुख आतंकवादी संगठन हैं। इनमें से कुछ ने पाकिस्तान अथवा पाक-अधिकृत कश्मीर और अफगानिस्तान में अपने अड्डे बना रखे हैं। लिट्टे जैसे कुछ आतंकवादी संगठन श्रीलंका में अपनी गतिविधियां संचालित करते हैं। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों के विद्रोहियों ने भी पड़ौसी देशों में अपने कैम्प बना रखे हैं। उल्फा और नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रन्ट ऑफ बोडोलैण्ड ने भूटान और बंगलादेश में, नेशनल लिबरेशन फ्रन्ट ऑफ त्रिपुरा

एन.एल.एफ.टी. तथा आल त्रिपुरा टाईगर्स फोर्स ने बंगलादेश में एवं नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड ने म्यांमार और बंगलादेश में अपने कैम्प स्थापित किये हैं। इन्हें सीमा-पार से आतंकवाद की संज्ञा दी जा सकती है।

हमारा जम्मू और कश्मीर राज्य देश के विभाजन के बाद से ही पाकिस्तान की कूटनीतिक चालबाजियों का केन्द्र रहा है। उसकी नीति प्रारंभ से ही कश्मीर हथियाने की रही है। 1999 में कारगिल में आक्रमण जैसी ही स्थिति थी। यहां पाकिस्तान की नीति आतंकवादियों को अपने यहाँ प्रशिक्षण देकर घुसपैठियों के रूप में भारत में घुसाकर उनके द्वारा आतंकवाद यहाँ फैलाकर यह कहने और सिद्ध करने की है कि ये लोग कश्मीर के ही स्वतंत्रता संग्राम सेनानी या जेहादी हैं जो भारत के नियंत्रण में कश्मीर को मुक्त कराना चाहते हैं। यह अप्रत्यक्ष लड़ाई इतनी गंभीर है कि यह किसी भी दिन प्रत्यक्ष युद्ध में बदल सकती है। पाकिस्तान की गुप्तचर संस्था आई. एस. आई. के द्वारा प्रोत्साहन एवं प्रशिक्षण पाकर आतंकवादियों ने 13 दिसम्बर, 2001 को भारत की संसद पर हमला कर दिया। पाकिस्तान इन्हें हथियार भी देता है, क्योंकि इन आतंकवादियों के पास बरामद हथियार पाकिस्तानी ही हैं। जम्मू-कश्मीर में सक्रिय आतंकवादी अधिकतर पाकिस्तानी हैं। इससे पूर्व लालकिले पर आतंकवादी आक्रमण हो चुका था। जम्मू के रघुनाथ मंदिर तथा अक्षरधाम मंदिर गुजरात में हमलों के अलावा आये दिन समाचार-पत्र इस प्रकार की आतंकवादी गतिविधियों से भरे रहते हैं। यह ठीक है कि इसमें पाकिस्तान से उत्प्रेरित कुछ भारतीय क्षेत्र के कश्मीरी भटके हुये या भटकाये हुये नौजवान भी हैं परन्तु इस आतंकवाद का प्रोजेक्शन (प्रक्षेपण) पाकिस्तान से ही हो रहा है।

पाकिस्तान ने भारत में 1500 से 2000 तक भाड़े के सैनिक आतंकवाद फैलाने के लिये छोड़ रखे हैं। इनके अधिकांश हमलों में आत्मघाती दस्तों का प्रयोग किया जाता है। जम्मू-कश्मीर में बहुत से आतंकवादी गुट सक्रिय हैं, जिनमें मुख्य हैं, हिजबुल मुजाहिद्दीन, लश्कर-ए-तोयबा, हरकत उल मुजाहिद्दीन, तहरीक उल मुजाहिद्दीन। हिजबुल मुजाहिद्दीन को छोड़कर अन्य अधिकतर गुट में भाड़े के पाकिस्तानी सैनिक हैं।

ताजा आँकड़े इस बात की ओर स्पष्ट इशारा करते हैं कि सीमा पार से मिले प्रोत्साहन के कारण वर्ष 2000 की तुलना में 2002 में विशेष रूप से जम्मू-कश्मीर में आतंकवादी घटनाओं में वृद्धि हुई है, क्योंकि पाकिस्तान 2002 में चुनावों के कारण भी आतंक की गति [illegible] चाहता था। अक्षरधाम नरसंहार की घटना ठीक निर्वाचनों के समय हुई। इसी प्रकार [illegible]ध्या में रामजन्म भूमि (राम लला के मन्दिर) पर आतंकवादियों ने हमला करने की [illegible]शश की, जिसे नाकाम कर दिया गया।

जम्मू-कश्मीर राज्य में सामान्य हालात बहाल करने के लिये अपने प्रयासों में भारत सरकार ने पिछले वर्ष तक यह राजनीति अपनाई थी-

(1) पाक द्वारा प्रायोजित आतंकवादी गुटों द्वारा सीमा-पार से चलाये जा रहे आतंकवाद से सुरक्षा बलों की सहायता से प्रतिकारक रूप में निबटना।

(2) आर्थिक विकास की गति तेज करना और क्षेत्र के आम लोगों की शिकायत दूर करना।

(3) जम्मू-कश्मीर के ऐसे सभी लोगों के साथ बातचीत करने को तैयार होना, जो बातचीत के इच्छुक हों और हिंसा का रास्ता छोड़ने की मंशा प्रकट करें।

जम्मूकश्मीर के पूर्व मुख्यमंत्री गुलाम नवी आजाद ने भी इस नीति को जारी रखा। परन्तु इससे आतंकवाद की घटनाओं में किसी प्रकार की कमी नहीं आयी है। आतंकवादियों ने जून,

2006 में अमरनाथ तीर्थ यात्रियों पर हमला कर तथा वैष्णोदेवी मंदिर पर हमले का प्रयास कर अपने मंसूबे जाहिर कर दिये। 11 जुलाई, 2006 को मुम्बई में लोकल ट्रेन में सीरियल बम विस्फोट तथा सितम्बर, 2006 में मालेगाँव में बम विस्फोट करके भी आतंकवादियों ने अपनी इसी सोच का परिचय दिया। 17 जुलाई, 2007 को बालटाल में अमरनाथ यात्रियों पर ग्रेनेड से हमला किया गया जिसमें 14 यात्री घायल हो गये। जुलाई, 2008 से सितम्बर, 2008 तक सूरत, बेंगलुरू, नयी दिल्ली, जयपुर में होने वाले बम विस्फोट सीमा पार आतंकवाद के ही परिणाम हैं। सीमा-पार आतंकवाद ने अब पाकिस्तान को भी अपनी चपेट में ले लिया है। अक्टूबर, 2007 में होने वाली इस्लामाबाद की खूनी घटनायें मुम्बई के ताजमहल होटल में आतंकवादियों द्वारा किया गया खूनखराबा इसका प्रमाण हैं।

हम कब तक सब्र करेंगे और हजारों निर्दोष लोगों की हत्या कराते रहेंगे ? अब आम राय बनने लगी है, कि पूर्व अटलबिहारी सरकार तथा अब वर्तमान यू.पी.ए. सरकार भी संयुक्त राज्य अमेरिका के दबाव में आकर पाकिस्तान के साथ सख्ती से निबटने में संकोच करती रही है। अब भारत को पाकिस्तान के सीमा-पार केन्द्रों को नष्ट करना ही पड़ेगा, भले ही इसके लिये सीमित युद्ध क्यों न करना पड़े। भारत ने इस हेतु 2017 में सफल सर्जीकल स्ट्राइक करके पाक सीमा में घुसकर लगभग 20-25 आतंकी अड्डे तथा लगभग 50 आतंकवादियों को मार गिराया। 14 फरवरी 2019 को कश्मीर के पुलवामा में आतंकवादियों ने एक सैनिकों से भरी बस को विस्फोटों से उड़ा दिया जिसमें 40 भारतीय सैनिक मारे गये। इस वीभत्स घटना के पश्चात् भारतीय वायुसेना ने 26 जनवरी 2019 को रात्रि में अपने मिराज विमानों द्वारा पाकिस्तान के बालाकोट में स्थित आतंकवादी ठिकानों पर बम गिराये जिसमें पाकिस्तान के 200 से अधिक आतंकी मारे गये।

सीमा-पार आतंकवाद से निबटने का यही एकमात्र तरीका बचा है। हम यदि संयुक्त राज्य अमेरिका के भरोसे बैठे रहें तो यह हमारी भूल है। संयुक्त राज्य अमेरिका जिसकी प्रारंभ से ही पाकिस्तान के प्रति तुष्टिकरण की नीति रही है। वह अपनी नीति बदल देगा, यह सोचना ही गलत है। संयुक्त राज्य अमेरिका तो हथियारों का सौदागर और एक कूटनीतिक राष्ट्र है। उसके आतंकवाद के संबंध में भी दोहरे मापदण्ड हैं। उसके लिये संयुक्त राज्य अमेरिका में आतंकवादी हमला, तो आतंकवादी हमला माना जाता है परन्तु भारत में आतंकवादी हमलों को हल्के रूप में लिया जाता है। भारत को एकदम संयुक्त राज्य अमेरिका पर पूर्ण निर्भर न होकर अपनी समस्या को स्वयं ही सुलझाने के लिये सक्षम होना पड़ेगा, परन्तु इसके लिये हमें कश्मीर में शान्ति तो स्थापित करना ही पड़ेगी तथा भारत के मुस्लिम समुदाय के प्रति कट्टर हिन्दूवादी दृष्टिकोण बदलना होगा।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न-(1) 'संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद' पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद संयुक्त राष्ट्र के पाँच प्रमुख अंगों में से एक है, जो अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के साथ-साथ संयुक्त राष्ट्र में नए सदस्यों को स्वीकार करने और संयुक्त राष्ट्र चार्टर में किसी भी परिवर्तन को स्वीकृति देने का कार्य करता है।

यह संयुक्त राष्ट्र के छह प्राथमिक अंगों में से एक है। महासभा (UNGA), आर्थिक और सामाजिक परिषद, ट्रस्टीशिप काउंसिल, इंटरनेशनल कोर्ट ऑफ जस्टिस और सचिवालय संयुक्त राष्ट्र के अन्य पाँच अंग हैं। इसकी प्राथमिक कार्य अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखना है।

सुरक्षा परिषद, संयुक्त राष्ट्र की सबसे महत्वपूर्ण इकाई है, जिसका द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान वर्ष 1945 में गठन हुआ था। सुरक्षा परिषद के पाँच स्थायी सदस्य हैं- अमेरिका, ब्रिटेन, रूस, फ्रांस और चीन। सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्यों के पास वीटो का अधिकार होता है। इन देशों की सदस्यता दूसरे विश्व युद्ध के बाद के शक्ति संतुलन को प्रदर्शित करती है। इन स्थायी सदस्य देशों के अलावा 10 अन्य देशों को दो वर्ष के लिए अस्थायी सदस्य के रूप में सुरक्षा परिषद में शामिल किया जाता है। स्थायी और अस्थायी सदस्य बार-बारी से एक-एक महीने के लिए परिषद के अध्यक्ष बनाए जाते हैं। अस्थायी सदस्य देशों को चुनने का उददेश्य मुख्य परिषद में क्षेत्रीय सन्तुलन कायम करना है। अस्थायी सदस्यता के लिए सदस्य देशो द्वारा चुनाव किया जाता है। इसमें पाँच सदस्य एशियाई या अफ्रीकी देशों से, दो दक्षिण अमेरिकी देशों से, एक पूर्वी यूरोप से और दो पश्चिमी यूरोप या अन्य क्षेत्रों से चुने जाते हैं।

प्रश्न-(2) निःशस्त्रीकरण से क्या तात्पर्य है? समझाइये।

अथवा

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में निषेध का क्या अर्थ है?

उत्तर- निःशस्त्रीकरण- विश्व-शांति की आवश्यकता सभी महसूस करते हैं। विश्वशांति अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की एक गंभीर समस्या है। इस शताब्दी से पूर्व यह समस्या इतनी गंभीर नहीं थी क्योंकि युद्धों का स्तर क्षेत्रीय अथवा बहुत से बहुत महाद्वीपीय होता था परन्तु हमारी वर्तमान शताब्दी को दो विश्व-युद्धों की विभीषिका झेलनी पड़ी, इससे विश्वशांति की समस्या और भी गंभीर हो गई है। निःशस्त्रीकरण विश्वशांति का सबसे बड़ा साधन है। निःशस्त्रीकरण का अर्थ है 'शस्त्र विहीन विश्व की स्थापना।' मनुष्य स्वभाव से हिंसक प्राणी है। अपनी इस प्रवृत्ति की पूर्ति के लिये उसने आदिम-युग से लेकर आज तक पत्थर के हथियारों से लेकर कोबाल्ट व न्यूट्रॉन बम तक की लंबी यात्रा तय कर दुनियाँ को आज बारूद के ढेर पर बिठा दिया है। हिरोशिमा और नागासाकी की दुर्दशा का वर्णन सुनकर या पढ़कर हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं परंतु जब हम इस तथ्य से अवगत होते हैं कि इन दो जापानी शहरों को नष्ट कर और आज तक पंगु बनाने वाले एटम बमों से लाख गुने संहारक क्षमता वाले अस्त्र-शस्त्र आज दुनियाँ के जंगबाजों के शस्त्रागार की शोभा बढ़ा रहे हैं तो हमारा मन भावी कुशंका से काँप उठता है। तृतीय विश्व-युद्ध के काले डरावने बादल हमें प्रायः आसमान पर दिखाई दे जाते हैं। एक सुप्रसिद्ध इतिहासकार अर्नाल टॉयनबी ने लिखा है कि, 'चतुर्थ विश्व-युद्ध पत्थरों स लड़ा जायेगा।' इसका अर्थ है कि तृतीय विश्व-युद्ध में समस्त मानव सभ्यता नष्ट ही हो जायेगी। इस सभ्यता को बचाने का एक मात्र तरीका निःशस्त्रीकरण है।

द्वितीय विश्व-युद्ध का प्रथम विश्व-युद्ध से भी अधिक भयंकर होने का प्रमुख कारण अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण में अपूर्व विनाशकारी प्रतियोगिता का होना था। वास्तव में इस युद्ध में ऐसे शस्त्रों का प्रयोग हुआ जो समस्त भूमण्डल को एक विराट शमशान में परिवर्तित करने की क्षमता रखते हैं। लार्ड ग्रे के अनुसार, 'यदि मानव सभ्यता अस्त्र-शस्त्रों का नाश नहीं कर सकती है, तो अस्त्र-शस्त्र सभ्यता का नाश कर देंगे।'

यदि वास्तविक रूप में देखें तो अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण से मानव जाति के विनाश का खतरा उत्पन्न हो ही गया है लेकिन साथ ही इनके निर्माण पर जो धन-राशि व्यय की जा रही है उससे राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था पर भी भार पड़ता है। अतः कहा जा सकता है कि अस्त्र-शस्त्र के निर्माण के परिणाम विनाशकारी ही हैं। इसलिये निःशस्त्रीकरण की आवश्यकता को अनुभव किया जाने लगा है।

प्रश्न-(3) संयुक्त-राष्ट्र संघ और बाह्य निःशस्त्रीकरण की दिशा में किये गये प्रयासों का मूल्यांकन कीजिये।

उत्तर- संयुक्त-राष्ट्र संघ में निःशस्त्रीकरण के प्रयास- संयुक्त-राष्ट्र संघ, राष्ट्र संघ की राख से उत्पन्न हुआ है। अतः राष्ट्र संघ ने निःशस्त्रीकरण समस्या को जहाँ छोड़ा था, संयुक्त-राष्ट्र संघ ने उसे वहीं से उठा लिया है। अपने चार्टर की धारा 26 में उसने शांति व सुरक्षा के लिये शस्त्रों पर नियंत्रण लगाना आवश्यक समझा है। यह धारा इस प्रकार है-

'अंतर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा की स्थापना के लिये विश्व के शस्त्रास्त्रों में तथा मानव एवं आर्थिक साधनों में थोड़ा-सा परिवर्तन कर देने के लिये सुरक्षा परिषद् योजना बनाने के लिये उत्तरदायी है तथा इन योजनाओं को संयुक्त-राष्ट्र संघ के सदस्यों के सामने रखेगी, जिससे शस्त्रास्त्रों के ऊपर नियंत्रण लगाने की पद्धति का निर्माण हो सके।'

इसी तारतम्य में संयुक्त-राष्ट्र संघ की महासभा ने एक आणविक-शक्ति आयोग की उपसमिति का निर्माण किया। सुरक्षा परिषद् ने शस्त्रों के समझौते के लिये आयोग की स्थापना की। यह आयोग असफल हुआ, क्योंकि राष्ट्रों के अंतर्राष्ट्रीय नियंत्रण के प्रश्नों पर मतभेद था। 1948 में इस आयोग ने अपनी असफलता घोषित कर दी। सामूहिक शस्त्रों का आयोग भी असफल हुआ। 1952 में दोनों आयोगों को मिलाकर एक कर दिया गया और इसका नाम 'निःशस्त्रीकरण आयोग' रखा गया। रूस बराबर अणु-शक्ति पर रोक लगाने पर जोर देता रहा। इस आयोग की दो समितियाँ बनाई गईं। इनको उचित सहयोग नहीं मिला। इसके बाद निःशस्त्रीकरण के असफल प्रयास संयुक्त-राष्ट्र संघ के अंदर-बाहर बराबर चलते रहे और इस संबंध में जिनेवा सम्मेलन, 1955 उल्लेखनीय रहा जो पाँच महाशक्तियों का शिखर-सम्मेलन था। फरवरी, 1957 में सोवियत प्रधानमंत्री बुलगारिन ने एक उपयोगी प्रस्ताव रखा परंतु सोवियत संघ व अमेरिकी गुट की परस्पर-शंकाओं के कारण इस दिशा में कोई खास प्रगति नहीं हो सकी।

अगस्त, 1963 का आंशिक अणु-परीक्षण समझौता- इस संबंध में एक ठोस प्रगति का प्रमाण अगस्त, 1963 में मिला जबकि महाशक्तियाँ एक आंशिक अणु-परीक्षण समझौते पर सहमत हो गईं। इसमें यह निर्णय हुआ कि यदि परीक्षण किये जायें तो भूमिगत किये जायें, वायुमण्डल और जल में आणविक परीक्षण न किये जायें। यह संधि निःशस्त्रीकरण की दिशा में मील का एक पत्थर थी।

इकाई-5

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न-1. भारत और अफगानिस्तान के मध्य सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों की विवेचना कीजिए।

अथवा

भारत-अफगानिस्तान सम्बन्धों की चर्चा कीजिए।

उत्तर- भारत-अफगानिस्तान सम्बन्ध एवं विकास- भारत-अफगानिस्तान सम्बन्ध प्राचीनकाल (6वीं शताब्दी ई.) से माने जाते हैं। तब अफगानिस्तान का नाम गंधार था और 10वीं शताब्दी तक यह भारत का अभिन्न अंग था। मध्यकाल में मुस्लिम इतिहासकारों ने गंधार को अफगानिस्तान का नाम दिया। अंग्रेजों के शासनकाल में यह स्वतंत्र राष्ट्र था। अंग्रेजों के भारत छोड़ने के समय तक डूरण्ड रेखा भारत और अफगानिस्तान के मध्य सीमा-रेखा थी परन्तु अंग्रेजों के भारत छोड़ने के पश्चात् और पाकिस्तान के रूप में नए राष्ट्र बनने के बाद डूरन्ड रेखा अफगानिस्तान तथा पाकिस्तान के मध्य सीमा रेखा बन गई। परन्तु अफगानिस्तान और पाकिस्तान के मध्य शुरू से ही डूरण्ड रेखा को लेकर विवाद है। अफगानिस्तान के अनुसार, 'पाकिस्तान एक नया राज्य है, ब्रिटिश साम्राज्य का उत्तराधिकारी

नहीं', इसलिए अफगानिस्तान और पाकिस्तान के मध्य नये सिरे से सीमा का निर्धारण होना चाहिए।

सन् 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ तो जहीर शाह अफगानिस्तान के शासक थे। सन् 1949 में भारत और पाकिस्तान के एक मैत्री संधि पर हस्ताक्षर किये गये जिससे दोनों राष्ट्रों के बीच कूटनीतिक सम्बन्धों का आरंभ हुआ। सन् 1953 से 1963 तक दाऊद खाँ अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री रहे। इसी अवधि में भारत के प्रधानमंत्री नेहरू और राष्ट्रपति राधाकृष्णन ने अफगानिस्तान की और जहीर शाह ने भारत की यात्रा की। अक्टूबर 1963 में दोनों देशो के मध्य सांस्कृतिक, शैक्षणिक और वैज्ञानिक सहयोग बढ़ाने के लिए एक समझौता हुआ। जून 1969 में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने अफगानिस्तान की यात्रा की। सन् 1970 में भारत ने अफगानिस्तान सरकार को कंधार से जहीदान के निकट ईरान की सीमा तक सड़क बनाने और इसे ईरान की जहीदीन-बदर-अब्बास सड़क से जोड़ने के लिए मदद की। इसी प्रकार परमाणु ऊर्जा विभाग ने काबुल विश्वविद्यालय के विज्ञान संकाय को एक रेडियो आइसोटोप यूनिट उपहार में दिया। सन् 1970 में भारत ने काबुल से 100 बिस्तरों का बच्चों का अस्पताल बनाने में अफगानिस्तान की मदद की। सन् 1974 में दोनों देशों के बीच आर्थिक सहयोग तथा व्यापार बढ़ाने के लिए एक संयुक्त आयोग का गठन किया गया।

21वीं सदी में भारत-अफगानिस्तान- अफगानिस्तान में तालिबानी शासन खत्म होने के पश्चात् भारत ने पुनः अफगानिस्तान के साथ प्रगाढ़ सहयोगात्मक सम्बन्धों की स्थापना की। भारत के सहयोग से सार्क के 14वें सम्मेलन में अफगानिस्तान को इसका सदस्य भी बना लिया गया है। 21 वीं सदी में भारत और अफगानिस्तान के सम्बन्धों को निम्नांकित प्रकार से समझा जा सकता है-

(1) आधारभूत संरचना का विकास-

(i) भारत ने अफगानिस्तान को 100 मिलियन डॉलर की सहायता प्रदान की।

(ii) एक मिलियन टन गेहूँ भी भारत द्वारा अफगानिस्तान को प्रदान किया गया।

(iii) भारत में जेरांग-देलराम सड़क परियोजना के लिए सन् 2009 में 70 मिलियन डॉलर की सहायता प्रदान की।

(iv) भारत ने सन् 2011 में सलमा बाँध ऊर्जा परियोजना के लिए 80 मिलियन डॉलर की सहायता प्रदान की।

(v) अफगानिस्तान में अधिक से अधिक निवेश को आकर्षित करने के लिए सन् 2012 में नयी दिल्ली में एक निवेश बैठक का भी आयोजन किया।

(vi) सन् 2014 में नाटो सैनिकों की वापसी तथा आतंकवाद से हो रही जनहानि के कारण अफगानिस्तान के लिए निवेश बैठक का आयोजन करना अपने आप में अभूतपूर्व कदम है।

(vii) भारत द्वारा अफगानिस्तान में 6 स्टील प्लाण्ट, 800 मेगावाट की ऊर्जा संयंत्र, जल-विद्युत परियोजनाओं, संचार साधन तथा अनेक सड़कों का निर्माण किया गया है।

(2) क्षमता निर्माण-

(i) भारत द्वारा अफगानिस्तान में इंदिरा गाँधी शिशु स्वास्थ्य केन्द्र का काबुल में हबीबी स्कूल की स्थापना की गई है।

(ii) भारत ने कृषि, खान, बैंकिंग तथा कम्प्यूटर के क्षेत्र में भी अफगानिस्तान की सहायता की है।

(iii) स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी भारत ने अफगानिस्तान का सहयोग किया है।

(iv) बुनियादी स्तर पर लघु विकास परियोजनाओं के विकास में भी भारत ने प्रशंसनीय योगदान किया है।

(3) प्रतिरक्षा सहयोग-

(i) भारत वह पहला देश है जिसके साथ अफगानिस्तान ने सन् 2011 में द्वि-पक्षीय सामरिक सहयोग समझौता किया है।

(ii) भारत की अधिक रूचि अफगानिस्तान के विकास-कार्यों में सक्रिय योगदान की रही है।

(iii) सन् 2017 में भारत ने अफगानिस्तान के साथ भारत-अफगानिस्तान विकास सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं।

(iv) सितम्बर 2017 में अफगानिस्तान के विदेश यात्रा के समय भारत ने अफगानिस्तान की 160 परियोजनाओं में सहायता का वचन दिया है।

अफगान राष्ट्रपति की भारत-यात्रा (2015)- सन् 2014 में डॉ. अशरफ गनी अफगानिस्तान के राष्ट्रपति बने। सितम्बर 2014 में उन्होंने अफगानिस्तान की 'पाँच वृत्तीय विदेश नीति' की घोषणा की। इसमें पाकिस्तान और चीन को पड़ोसी राष्ट्रों में प्राथमिकता देते हुए भारत को चौथे स्थान पर रखा गया है। उल्लेखनीय है कि अपनी विदेश नीति के चौथे वृत्त में भारत को रखकर अफगानिस्तान ने भारत के साथ सम्बन्धों के प्रति अपनी संवेदनशीलता का परिचय दिया है। गनी ने कहा कि भारत-अफगानिस्तान का मित्र तो है ही, साथ ही वे भारत को 'इस्लामी विश्व' का हिस्सा मानते हैं क्योंकि भारत में विश्व के दूसरे स्थान पर सर्वाधिक मुस्लिम जनसंख्या निवास करती है। अप्रैल 2015 में गनी की भारत यात्रा के दौरान लिए गए प्रमुख निर्णय निम्नलिखित हैं-

(1) भारत ने अफगानिस्तान को 3 स्वदेश-निर्मित "चीतल" हेलिकॉप्टर देने की घोषणा की।

(2) दोनों देशों ने 'क्रिकेट राजनय' की शुरूआत की जिसके तहत् भारत ने अफगानिस्तान की क्रिकेट टीम के प्रशिक्षण के लिए अपना एक मैदान उपलब्ध कराने का वायदा किया।

(3) भारत ने विकास-कार्यों के लिए अफगानिस्तान को 2 बिलियन अमेरीकी डॉलर की सहायता देने का निर्णय लिया।

(4) दोनों देशों ने अफगानिस्तान-पाकिस्तान के व्यापार और पारगमन समझौते पर भी विचार किया और यह निर्णय हुआ इसमें भारत को भी भागीदार बनाया जाय।

(5) भारत ने छबावर बन्दरगाह को भी अफगानिस्तान के प्रयोग के लिए उपलब्ध कराने का प्रस्ताव रखा भारत इस बन्दरगाह को ईरान के साथ विकसित कर रहा है।

(6) भारत ने अफगानिस्तान के साथ एक द्वि-पक्षीय 'मोटर वाहन समझौते' का भी प्रस्ताव रखा।

(7) भारत ने अपने आर्थिक सहयोग से बनाये जा रहे अफगान संसद के भवन के उद्घाटन पर अपनी सहमति व्यक्त की।

नरेन्द्र मोदी की अफगानिस्तान यात्रा (2015 एवं 2016)- भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने दिसम्बर 2015 और जून 2016 में अफगानिस्तान की यात्रा की। सन् 2015 की यात्रा के दौरान उन्होंने भारत के आर्थिक सहयोग से निर्मित अफगान संसद भवन का लोकार्पण किया। उन्होंने संसद में मेसरानो जिरगा और वोलेसी जिरगा के सदस्यों

को सम्बोधित किया। इस संसद के भवन में एक खण्ड पूर्व भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी को समर्पित किया गया है। श्री मोदी ने अफगानिस्तान को 1,70,000 टन गेहूँ की आपूर्ति की भी घोषणा की। यात्रा के दौरान अफगानिस्तान के लिए 1000 बसों की आपूर्ति की भी घोषणा की गई। सामरिक सहयोग को यथार्थ रूप देते हुए भारत के प्रधानमंत्री द्वारा अफगानिस्तान को चार MIG-25 हेलिकॉप्टर दिये जाने की भी घोषणा की।

जून 2016 में भारतीय प्रधानमंत्री मोदी जी ने पुनः अफगानिस्तान की यात्रा की। उन्हें वहाँ अमानुल्ला खाँ पुरस्कार प्रदान किया गया। यह किसी भी व्यक्ति को दिया जाने वाला सर्वोच्च नागरिक सम्मान है। प्रधानमंत्री ने भारत के सहयोग से निर्मित 'सलमा बाँध' का भी उद्घाटन किया। अफगानिस्तान ने इसका नाम 'अफगान-भारत सहयोग बाँध' रखने का निर्णय किया। इससे चिश्ते, ओब, कोशान पश्तून, जारघुन, गोजूरा, इन्जिल, जिन्दीजन तथा गोरायन क्षेत्र के 640 गाँवों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो सकेगी। इससे 42 मेगावाट विद्युत् भी पैदा होगी।

अफगानिस्तान के राष्ट्रपति की भारत यात्रा (2017)– अफगानिस्तान के राष्ट्रपति मोहम्मद अशरफ गनी ने 24 अक्टूबर 2017 की भारत यात्रा के दौरान द्वि-पक्षीय सामरिक साझेदारी, विशेष रूप से विकसित होती हुई नई विकास भागीदारी, अफगानिस्तान में समृद्धि लाने के तरीकों तथा आतंकवाद के मामले में दोनों देशों की एकजुटता पर चर्चा हुई।

इस यात्रा के चार दिन बाद ही भारत ने अफगानिस्तान की मदद के लिए गेहूँ की एक खेप समुद्री मार्ग से रवाना की जहाँ से ट्रकों द्वारा इसे अफगानिस्तान भेजा गया। इस प्रकार भारत एवं अफगानिस्तान के बीच माल की आवाजाही तथा व्यापार का मार्ग शुरू हो गया है और पाकिस्तान को अलग-थलग कर दिया गया है।

प्रश्न–2. भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद के प्रमुख मुद्दों की विवेचना कीजिये। वार्तालाप में भारत–पाक सम्बन्धों की क्या स्थिति है?

अथवा

'भारत–पाक संघर्षों का मुख्य कारण कश्मीर है।' विवेचना कीजिये।

अथवा

'भारत–पाक सम्बन्धों में आतंकवाद सबसे बड़ी बाधा है।' स्पष्ट कीजिये।

अथवा

भारत और पाकिस्तान सम्बन्धों की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिये।

उत्तर– पाकिस्तान की स्थापना 14 अगस्त, 1947 को ब्रिटिश भारत के विभाजन द्वारा हुई थी। इसका निर्माण द्विराष्ट्र सिद्धान्त की मुस्लिम लीग की मांग के कारण हुआ था। यह भारत का सबसे निकट का पड़ौसी है। यह कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारत और पाकिस्तान जुड़वां भाई राष्ट्र हैं। प्रारम्भ में तो भारत पाकिस्तान को पृथक राष्ट्र मानता ही नहीं था परन्तु अंग्रेजों ने विभाजन कर इसे एक मुद्दा बना दिया था। इन दोनों राष्ट्रों के बीच राजनीतिक सम्बन्ध पाकिस्तान के जन्म के साथ ही बड़े कटु रहे हैं। क्योंकि पाकिस्तान का जन्म ही भारत के प्रति इसके नेताओं की घृणा के आधार पर हुआ है और सम्बन्धों का विकास विभाजन-जन्य कटु वैमनस्यपूर्ण समस्याओं को लेकर हुआ है।

स्वतंत्रता के बाद भारत और पाकिस्तान के बीच उत्पन्न मुख्य विवाद

स्वतंत्रता के बाद भारत और पाकिस्तान के बीच निम्नलिखित मुख्य विवाद उत्पन्न हुये (1) शरणार्थियों की समस्या (2) हैदराबाद विवाद (3) जूनागढ़ विवाद (4) ऋण अदायगी का प्रश्न (5) नहरी पानी विवाद (6) कश्मीर समस्या। इनमें से 5 विवाद तो भारत और पाकिस्तान ने शान्तिपूर्ण तरीके से बातचीत द्वारा हल कर लिये। बाद में 1965 में उत्पन्न

कच्छ विवाद भी अंतरराष्ट्रीय पंच-निर्णय द्वारा हल कर लिया गया और भारत ने इन सभी विवादों के हल में सहिष्णुता का परिचय दिया। परन्तु कश्मीर समस्या आज तक हल नहीं हो पाई है और यह भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों के लिये नासूर बन कर रह गयी है इस सम्बन्ध में तीन बार युद्ध भी हो चुके हैं। गत वर्ष 1999 में कारगिल में अघोषित युद्ध हुआ है।

कश्मीर समस्या– कश्मीर का पूरा नाम जम्मू कश्मीर है। यह अविभाजित भारत की उत्तर-पश्चिम में स्थित एक देशी रियासत थी। इसके तत्कालीन महाराजा हरीसिंह थे। अंग्रेजों ने 1947 में भारत को स्वतंत्र करते समय देशी रियासतों को तीन विकल्प सुझाये थे– (1) भारत में शामिल हो जायें अथवा (2) पाकिस्तान में शामिल हो जायें अथवा (3) अपने आपको स्वतंत्र बनाये रखें।

जम्मू-कश्मीर रियासत ने उस समय अपने आपको स्वतंत्र रखने और दोनों पड़ौसियों से यथा- स्थिति समझौते का निर्णय लिया। भारत ने इस समझौते को स्वीकार कर लिया। परन्तु पाकिस्तान ने इसे हृदय से स्वीकार नहीं किया और कबाईलियों के नाम पर उनसे छद्मवेष में कश्मीर पर आक्रमण करा दिया। इस आक्रमण से रक्षा के लिये कश्मीर सरकार ने भारत से सहायता मांगी परन्तु भारत ने इस शर्त पर सहायता देना स्वीकार किया कि कश्मीर का भारत में विलय हो। इस पर कश्मीर की तत्कालीन सरकार (राजा हरीसिंह और प्रधानमंत्री शेख अब्दुल्ला ने इसका भारत में विलय-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये।) तब भारत की सेनायें कश्मीर में उतार दी गयीं और जम्मू-कश्मीर के अधिकांश भाग से कबाईलियों के नाम पर आक्रामक पाकिस्तानी सेना को खदेड़ दिया गया।

भारत-पाक युद्ध (1948) शुरू हो जाने पर संयुक्त-राष्ट्र संघ की सुरक्षा-परिषद् ने युद्ध विराम का प्रस्ताव पारित किया और कश्मीर के पूरी तरह पाकिस्तान के चंगुल से मुक्त होने के पूर्व ही युद्ध विराम करा दिया। इस प्रकार जम्मू-कश्मीर के पाक अधिकृत क्षेत्र को, जिसे हम पाक अधिकृत कश्मीर कहते हैं पाकिस्तान के आधिपत्य में रह गया। जम्मू-कश्मीर का 1954 में भारत राष्ट्र में विलय स्वीकार हो गया क्योंकि इस बीच भारत पाकिस्तान के बीच कई बार वार्तायें हुईं और संयुक्त-राष्ट्र संघ के इस प्रस्ताव के अनुसार कि दोनों भागों में जनमत-संग्रह हो कई बार इस दिशा में प्रयास हुये परन्तु पाकिस्तान ने कभी आजाद कश्मीर में जनमत-संग्रह के लिये उचित वातावरण नहीं बनने दिया। अन्त में 1954 में कश्मीर की चुनी हुई विधानसभा ने भारत में विलय पर अंतिम मुहर लगा दी।

अब विवाद यह है कि भारत कहता है एवं वैधानिक स्थिति भी यही है कि कश्मीर का भारत में विलय हो चुका है और अब समस्या केवल पाक-अधिकृत कश्मीर को मुक्त कराने की है जबकि पाकिस्तान अब भी निरन्तर कश्मीर में जनमत-संग्रह की रट लगाये हुये है। वह भारत में घुसपैठिये भी भेजता रहता है।

1965 का भारत–पाक युद्ध– 1962 में भारत की चीन के हाथों पराजय तथा कच्छ के रन में (अप्रैल, 1965 में) युद्ध विराम हो जाने के बाद पाकिस्तानी तत्कालीन सैनिक शासकों के मन में यह भ्रम उत्पन्न हो गया था कि भारत एक शक्तिहीन राष्ट्र है और उससे कश्मीर युद्ध करके छीना जा सकता है। इसीलिये तत्कालीन सैनिक तानाशाह अयूब खाँ ने 1 सितम्बर, 1965 को कश्मीर में भारत पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण के समय भारत ने डटकर मुकाबला किया, और भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने दृढ़तापूर्ण कदम उठाकर पाकिस्तान को परास्त जैसा ही कर दिया क्योंकि भारत की सेनायें लाहौर तक पहुंच गई थीं। परन्तु 18 सितम्बर, 1965 को संयुक्त-राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के प्रस्तावानुसार युद्ध विराम हो गया।

ताशकन्द समझौता– इस युद्ध विराम को स्थायी विराम में बदलने के लिये सोवियत–संघ के नेता कोसोजिन के प्रयासों से उनकी ही मध्यस्थता में भारत और पाकिस्तान के बीच उजबेकिस्तान की राजधानी ताशकन्द में एक वार्ता 4 जनवरी, 1966 से शुरू हुई और इसमें 10 जनवरी 1966 को एक समझौता हुआ जिसे ताशकन्द समझौता कहते हैं। इस समझौते मे यह तय हुआ कि भारत और पाकिस्तान इस युद्ध में अपनी–अपनी जीती हुई भूमि एक दूसरे को वापिस कर देंगे और भविष्य में आपसी मामले आपसी बातचीत से तय करेंगे। भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की हृदय गति रुक जाने से 11 जनवरी, 1966 को ताशकन्द में ही मृत्यु हो गई।

भारत ने इसके बाद 1970 तक ताशकन्द भावना का आदर किया परन्तु पाकिस्तान ने इसकी कई बार धज्जियां उड़ाईं। पाकिस्तान के अयूब खाँ की सैनिक तानाशाही बदल कर सत्ता सेनापति याहियां खां के हाथों में आ गई थी। इस काल में एक भारतीय विमान का अपहरण काण्ड हुआ, जिसके अपराधियों को पाकिस्तान में शरण दी गई और विमान को लाहौर में जला दिया गया। इसके बाद भारत ने पाकिस्तान की भारत पर से गुजरने वाली उड़ानें बन्द कर दीं।

बंगलादेश में विद्रोह और भारत–पाक युद्ध 1971– 1969 से ही पूर्वी पाकिस्तान में विद्रोह प्रारम्भ हो गया था क्योंकि पश्चिमी पाकिस्तान से हजारों मील दूर स्थित भाग पूर्वी पाकिस्तान की घोर उपेक्षा हो रही थी एवं 1970 के निर्वाचन में अवामी लीग को स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ था। परन्तु सैनिक शासकों ने अवामी लीग को सत्ता नहीं सौंपी और पूर्वी पाकिस्तान में विद्रोह प्रारम्भ कर दिया इसके फलस्वरूप पूर्वी पाकिस्तान से लाखों शरणार्थी (लगभग 1 करोड़) भारत में आ गया था। यह भारत पर अप्रत्यक्ष आक्रमण था। इससे भारतीय अर्थ–व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा था। इन्दिरागांधी ने जो भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री थीं, समस्त विश्व से पूर्वी पाकिस्तान में पाक अत्याचारों को रोकने की अपील की, परन्तु कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अगस्त, 1971 में श्रीमती इंदिरागांधी ने रूस से समझौता किया और कहा जाता है कि भारत ने बंगलादेश की पुलिस एवं सेना को अपेक्षित सहयोग देना शुरू कर दिया। 3 दिसम्बर, 1971 को पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। जिसका भारत ने मुंह–तोड़ उत्तर दिया अबकी बार पाकिस्तान की करारी हार हुई और पूर्वी मोर्चे पर उसकी लगभग 1 लाख सेना ने 193 सेना अधिकारियों सहित आत्म–समर्पण कर दिया।

शिमला समझौता– 1971 के युद्ध के बाद भारत–पाकिस्तान के बीच **'शिमला समझौता'** हुआ जिसके द्वारा युद्ध के बाद की समस्यायें हल हुईं। 1973 में मरी समझौता तथा 974 में **दिल्ली समझौता** हुआ। 1974 में जब भारत ने पोखरण में आणविक विस्फोट किया, तो पाकिस्तान में इसकी तीखी प्रतिक्रिया हुई। 1975 में शेख अब्दुल्ला के साथ कश्मीर समझौते की भी वहाँ तीखी प्रतिक्रिया हुई। 1977 में भारत में जनता पार्टी की सरकार बनी। पाकिस्तान ने इस नई सरकार का स्वागत किया। जनता पार्टी के शासनकाल में पाकिस्तान के साथ **सलाल समझौता** हुआ। 1978 में अफगानिस्तान में क्रांति होने के कारण अमेरिका ने पाकिस्तान को पुनः हथियारों से लाद देने की नीति अपनाई। भारत द्वारा इसका विरोध करना स्वाभाविक था क्योंकि पाकिस्तान के हथियार हमेशा भारत के विरुद्ध ही प्रयुक्त हुये हैं। पाकिस्तान ने एटम बम भी बना लिया है। सियाचिन के मामले पर भारत–पाकिस्तान के बीच रोज गोलाबारी की खबरें पढ़ने को मिलती हैं। कश्मीर में भी यही हाल है। इस सम्बन्ध में शिमला समझौते के अनुरूप वार्तायें भी चलती रही हैं। पाकिस्तान भारत में

खालिस्तान चाहने वाले आतंकवादियों को भी प्रत्येक प्रकार की सहायता दे रहा था। वह पंजाब में खालिस्तान बनाकर भारत से बंगलादेश का बदला लेना चाहता था।

लाहौर घोषणा और कारगिल युद्ध

भारत द्वारा 11 मई एवं 13 जून, 1998 को पोखरण में समुन्नत क्षमता के 5 परमाणु परीक्षण किये गये। पाकिस्तान ने इसे चुनौती के रूप में स्वीकार किया और मई, 1998 के अन्त में उसने 6 परमाणु परीक्षण किये। इस प्रकार दोनों ही राष्ट्र परमाणु क्षमता सम्पन्न राष्ट्र बन गये।

फरवरी, 1999 में भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी की पहल पर दिल्ली–लाहौर बस सेवा का शुभारंभ किया गया। 20 फरवरी को बस सेवा के उद्घाटन के दिन प्रधानमंत्री ने स्वयं बस से लाहौर तक की यात्रा की। इस अवसर पर भारत के प्रधानमंत्री तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ द्वारा एक घोषणा–पत्र पर हस्ताक्षर किये गये जिसे 'लाहौर घोषणा–पत्र' कहा जाता है।

लाहौर घोषणा–पत्र में दोनों राष्ट्रों ने शिमला समझौते के प्रति प्रतिबद्धता व्यक्त की, उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में उल्लेखित सिद्धान्तों तथा उद्देश्यों के प्रति भी अपनी वनचबद्धता दोहराई, सर्वभौमिक परमाणु निःशरस्त्रीकरण तथा अप्रसार के उद्देश्यों के प्रति भी प्रतिबद्धता व्यक्त की। दोनों प्रधानमंत्रियों ने आतंकवाद, उसके प्रत्येक रूप तथा उसकी सभी अभिव्यक्तियों की निन्दा तथा भर्त्सना की। इन वनचबद्धताओं की पृष्ठभूमि में दोनों प्रधानमंत्रियों ने यह सहमति व्यक्त की कि वे जम्मू–कश्मीर सहित सभी समस्याओं के समाधान के लिए अपने प्रयासों को गति प्रदान करेंगे तथा यह भी वचन दिया कि वे एक–दूसरे के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

लाहौर घोषणा–पत्र के तत्काल बाद ही पाकिस्तान ने कश्मीर के कारगिल क्षेत्र की द्रास और बटालिक क्षेत्र की पहाड़ियों पर कब्जा कर लिया। पाकिस्तान ने सशस्त्र एवं प्रशिक्षित उग्रवादियों को तो नियंत्रण रेखा के इस पार भेजा ही साथ ही उसके छद्म वेश में सेना के अधिकारी और जवान भी नियंत्रण रेखा के इस पार प्रवेश कर गये।

भारत ने संयम से काम लेते हुए लगभग 2 माह के सीमित संघर्ष में पाकिस्तानी घुसपैठियों को अपनी सीमा से बाहर खदेड़ दिया। 'ऑपरेशन विजय' नामक इस अभियान में 413 भारतीय सैनिक तथा अधिकारी शहीद हुये।

जनरल मुशर्रफ की भारत यात्रा

भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 24 मार्च, 2001 को पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ को वार्ता हेतु दिल्ली आमंत्रित किया। 15 जुलाई, 2001 को यह शिखर वार्ता आगरा में आयोजित हुई। इस वार्ता का कोई खास परिणाम नहीं निकल सका, क्योंकि मुशर्रफ पहले से ही अपना दिमाग बनाकर आये थे। उनकी दृष्टि में 'पहला कदम' यह होना चाहिए कि वार्ता की प्रक्रिया शुरू की जाय। दूसरा कदम भारत द्वारा यह स्वीकारोक्ति होनी चाहिए कि ''दोनों राष्ट्रों के मध्य सबसे बड़ा मुद्दा कश्मीर का मुद्दा है।'' मुशर्रफ ने यह भी कहा कि मतभेदों को सुलझाने के लिए यह संरचना बनायी जानी चाहिए जिसके द्वारा त्वरित कार्य किया जाना चाहिए। इसका आशय यह हुआ कि मुशर्रफ कश्मीर प्रकरण का समयबद्ध हल चाहते थे।

दोनों पक्षों के दृष्टिकोण में इतना अधिक अन्तर था कि अन्तिम समय तक साझा घोषणा–पत्र का ड्राफ्ट अन्तिम रूप से तैयार न हो सका। वार्ता की समाप्ति पर जारी होने वाले घोषणा–पत्र को अन्तिम रूप देने की प्रक्रिया में पाँच बार संशोधन किया गया। इसके

बावजूद मुशर्रफ नाखुश दिखे। उन्होंने इस पर अन्ततः हस्ताक्षर नहीं किये और पाकिस्तानी प्रतिनिधिमण्डल ने भारतीय पक्ष को सूचित किया कि प्रधानमंत्री वाजपेयी से भेंट कर मुशर्रफ वापस जाना चाहते है।

इस प्रकार आगरा शिखर वार्ता बिना किसी परिणाम तक पहुँचे ही स्थगित हो गई। शिखर वार्ता के बाद संयुक्त घोषणा-पत्र तो दूर, संयुक्त वक्तव्य भी नहीं जारी किया गया।

खराब होते सम्बन्ध

सन् 2001 के अन्तिम महीनों से भारत-पाक सम्बन्धों और गिरावट आने लगी। इसके मूल में 13 दिसम्बर, 2001 को भारतीय संसद पर आतंकियों द्वारा हमले की घटना थी। इस घटना के लिये भारत ने पाक-समर्थित लश्कर-ए-तैइबा तथा जैश-ए-मोहम्मद को जिम्मेदार ठहराया। भारत ने पाकिस्तान से इनके विरूद्ध कार्रवाई करने का आग्रह किया। पाकिस्तान ने सबूत की माँग की। इसी के साथ दोनों राष्ट्रों ने युद्धकारी नजरिया अपनाते हुए अपनी सेनाओं को सीमा की ओर बढ़ने का आदेश दे दिये। भारत ने जम्मू, पंजाब तथा राजस्थान क्षेत्रों में अपनी सेना को आगे बढ़ाना शुरू कर दिया। भारतीय वायुसेना ने भी आक्रामक मुद्रा धारण कर ली। 21 दिसम्बर को भारत ने पाकिस्तान से अपने उच्चायुक्त विजय नाम्बियार को वापस बुला लिया। सन् 1965 के बाद भारत द्वारा यह कदम पहली बार उठाया गया था। भारत की सोच यह थी कि पाकिस्तान पर अधिकाधिक दबाव बनाकर उसे आतंकवादियों के विरूद्ध कार्रवाई करने के लिए प्रेरित किया जाये।

इसी के साथ भारत ने दोनो देशों के बीच चलने वाली 'समझौता एक्सप्रेस' का आवागमन 1 जनवरी, 2002 से बन्द कर दिया। इसी प्रकार सन् 1999 में प्रारंभ में नई दिल्ली-लाहौर बस सेवा को भी 1 जनवरी, 2001 से बन्द कर दिया गया।

31 दिसम्बर, 2001 को भारत ने औपचारिक रूप से 20 सर्वाधिक खूंखार आतंकवादियों की सूची पाकिस्तान को सौंपी और इनके भारत को सौंपने की मांग की। इस सूची में जैश-ए-मोहम्मद और लश्कर-ए-तैयबा से जुड़े तमाम आतंकवादियों के अतिरिक्त मुम्बई बम काण्ड से जुड़े दाऊद इब्राहिम, टाइगर मेनन और छोटा शकील के भी नाम थे।

अब पाकिस्तान ने यह तर्क कि निश्चित सबूत के बिना वह किसी के विरूद्ध कोई कार्रवाही नहीं कर सकता। भारत का मानना था कि उपर्युक्त 20 नामों में से 14 के विरूद्ध ''इण्टरपोल'' ने 'रेड कॉर्नर' नोटिस जारी कर रखा है जो उनके खतरनाक कारनामों का परिचायक है। भारत ने यह भी कहा कि समय-समय पर वैसे भी भारत पाकिस्तान को प्रमाण दत रहा है।

विश्व समुदाय, विशेषकर अमरीका के दबाव के कारण जनरल मुशर्रफ ने फरवरी, 02 के मध्य में आतंकवादी समूहों के विरूद्ध कठोर कार्रवाही का आदेश दिया। लश्कर-ए-तैइबा और जैश-ए-मोहम्मद समेत अनेक आतंकवादी संगठनों के कार्यालय 'सीज' कर दिय गये। भारत ने जनरल मुशर्रफ के इस कदम का स्वागत किया लेकिन साथ ही यह भी कहा कि इस दिशा में अभी काफी कुछ किया जाना शेष है।

29 फरवरी, 2002 को पाकिस्तान ने भारत के समक्ष सैन्य बलों की चरणबद्ध वापसी का प्रस्ताव रखा था। भारत ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और यह कहा कि स्थिति में सुधार तभी हो सकता है जब सीमा पार से आतंकवादी गतिविधियाँ रुक जायें।

वाजपेयी-मुशर्रफ वार्ता

भारत के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने भारत-पाकिस्तान के रिश्तों को पटरी पर लाने के लिए लाहौर बस यात्रा और आगरा शिखर वार्ता के बाद एक बार फिर से अनूठी

पहल की। दक्षेस शिखर सम्मेलन में भागीदारी के लिए इस्लामाबाद गये प्रधानमंत्री वाजपेयी की 4 जनवरी, 2004 को पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ से लगभग एक घंटे वार्ता हुई। वार्ता के दौरान दोनों देशों में इस बात पर आम सहमति थी कि कश्मीर समेत समस्त द्वि-पक्षीय मुद्दों पर दोनों देश फरवरी से वार्ता करेंगे।

पाकिस्तान के राष्ट्रपति की भारत यात्रा

अप्रैल, 2005 में पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ ने भारत की तीन-दिवसीय यात्रा की। औपचारिक दृष्टि से राष्ट्रपति मुशर्रफ भारत-पाक एक-दिवसीय क्रिकेट मैच का अवलोकन करने भारत के निमंत्रण पर यहाँ आये थे।

अपनी यात्रा के दौरान सभी पदाधिकारियों से द्विपक्षीय सम्बन्धों पर मुशर्रफ की चर्चा हुई। भारतीय प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के साथ मुशर्रफ की विस्तृत वार्ता के पश्चात् जारी संयुक्त वक्तव्य में यह कहा गया कि दोनों राष्ट्रों के मध्य शान्ति-प्रक्रिया अब फिर से पलटी नहीं खायेगी तथा इसमें आतंकवाद को अवरोधक नहीं बनने दिया जायेगा।

भारत-पाकिस्तान के बीच थार एक्सप्रेस

अटारी-लाहौर समझौता एक्सप्रेस के पश्चात् भारत और पाकिस्तान के बीच दूसरी रेलगाड़ी थार एक्सप्रेस 18 फरवरी, 2006 से प्रारंभ हो गयी। राजस्थान के बाड़मेर जिले में मुनाबाओ और सिंध के खोखरापार के बीच इस रेल-सेवा के परिचालन हेतु छः माह तक रेल पाकिस्तान द्वारा उपलब्ध कराई गई है। इसके पश्चात् भारतीय रेल सीमा के आर-पार दौड़ेगी। 41 वर्षों के अन्तराल पर इस रेल सेवा का परिचालन शुरु किया गया।

प्रधानमंत्री मोदी की अचानक पकिस्तान यात्रा- 25 दिसम्बर, 2015 को भारत के प्रधानमंत्री पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के व्यक्तिगत निमंत्रण पर पाकिस्तान पहुँच गये। यह सद्भावना यात्रा मात्र ढाई घंटे की रही। पाकिस्तान की अचानक यात्रा करके मोदी जी ने सबको चौंका दिया। नरेन्द्र मोदी की लाहौर यात्रा प्रत्येक दृष्टि से अप्रत्याशित थी। इसके बारे में कहीं कोई सोच भी नहीं सकता था कि अफगानिस्तान का दौरा समाप्त करके वे पाकिस्तान भी जा सकते हैं।

मोदी जी की इस यात्रा से समस्त विश्व को यह संदेश गया कि भारत पाकिस्तान से अपने संबंध सुधारने की दिशा में गंभीर है। निसंदेह इस यात्रा से एक सकारात्मक वार्ता का सृजन हुआ। एक और मुख्य बात यह है कि सीमा पर शान्ति बनी रही। यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि अब तक का अनुभव यह बताता है कि जब-जब दोनों राष्ट्रों के बीच सम्बन्ध-सुधार की प्रक्रिया विगत वर्षों में शुरू हुई तब-तब सीमा पर कुछ न कुछ गड़बड़ी होती रही। इसलिए इस पर भरोसा कठिन है कि भारत से सम्बन्ध सुधार के मामले में पाकिस्तानी सेना अपनी सरकार के साथ है। भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों का हाल का इतिहास इस आशंका को बल देता है। पूर्वकाल में अटल बिहारी वाजपेयी की यात्रा के बाद ही पाकिस्तान ने कारगिल पर हमला (1999) कर दिया था जिससे भारत-पाक शान्ति पहल अभी तक बाधित है। 14 फरवरी 2019 को कश्मीर के पुलवामा में आतंकवादियों ने एक सैनिकों से भरी बस को विस्फोटों से उड़ा दिया जिसमें 40 भारतीय सैनिक मारे गये। इस वीभत्स घटना के पश्चात् भारतीय वायुसेना ने 26 जनवरी 2019 को रात्रि में अपने मिराज विमानों द्वारा पाकिस्तान के बालाकोट में स्थित आतंकवादी ठिकानों पर बम गिराये जिसमें पाकिस्तान के 200 से अधिक आतंकी मारे गये।

मोदी सरकार ने 3 अगस्त, 2019 को एक साहसिक निर्णय लेकर जम्मू-कश्मीर से धारा 370 को समाप्त कर दिया। कश्मीर घाटी में शांति-व्यवस्था बनी रहे, इस हेतु सरकार

ने घाटी में लगभग एक लाख सैनिक सीमा पर तैनात कर दिये तथा कश्मीरी अलगाववादियों तथा कश्मीर समर्थक नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। इससे पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान तथा उनकी सरकार के अनेक मंत्री बुरी तरह बौखला गये हैं और भारत को परमाणु युद्ध की धमकी दे रहे हैं। लेकिन मोदी सरकार अपने फैसले पर दृढ़ है तथा भारतीय सेना पाकिस्तान द्वारा किये जाने वाले किसी भी हमले के लिए पूरी तरह से तैयार है। धारा 370 की समाप्ति के पश्चात् से भारत-पाक सीमा तथा पाक-अधिकृत कश्मीर (POK) पर भारी तनाव है। भारत द्वारा धारा 370 हटाने पर पाकिस्तान द्वारा इसके विरोध में अन्य देशों से भी समर्थन माँगा गया तथा संयुक्त राष्ट्र (U.N.) में भी इस मुद्दे को उठाया गया परन्तु सभी ओर उसे मुँह की खानी पड़ी।

पाकिस्तान द्वारा विगत दो-तीन वर्षों में भारतीय सीमा में अपने घुसपैठिये व आतंकियों का प्रवेश कराने हेतु सीमा-पार से अनेक बार फायरिंग की है इस कारण हमारे वीर जवानों क भी जबाबी कार्रवाई हेतु फायरिंग करनी पड़ी जिसमें दोनों ओर के अनेक जवान तथा कश्मीरी निर्दोष नागरिक शहीद होते रहे हैं। पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान खान अपनी सेना के इशारे पर चलने वाले कठपुतली प्रधानमंत्री थे, क्योंकि वह सेना के सहयोग से ही प्रधानमंत्री बने हुए थे इसलिए वह अपने स्वयं निर्णय लेने हेतु असमर्थ थे। भारत के विरूद्ध सीमापार से फायरिंग करवाना व भारत के प्रधानमंत्री मोदी के विरूद्ध बार-बार जहर उगलना उनकी मजबूरी थी। इस कार्य में पाकिस्तान को चीन का भी पूरा समर्थन रहता है। इस रणनीति द्वारा वे पाकिस्तानी प्रधानमंत्री पाकिस्तानी जनता का पाकिस्तान की अन्दरूनी समस्याओं (जैसे- गरीबी, बेरोजगारी) से ध्यान बाँटने में सफल हो जाते हैं।

भारत-पाक सम्बन्ध : एक विश्लेषण

जिन्ना पाकिस्तान के संस्थापक थे। वे हमेशा यह चाहते थे कि भारत और पाकिस्तान के मध्य वैसे ही सम्बन्ध हों जैसे कि अमरीका और कनाडा के मध्य हैं। आज 70 साल बाद यह एक स्वप्न जैसा ही लगता है। दोनों देशों के बीच चार छोटे-बड़े युद्ध हो चुके हैं और अब दोनों ही परमाणु क्षमता-सम्पन्न राष्ट्र हैं। दोनों के बीच शीत युद्ध जैसी स्थिति है। पिछले कुछ वर्षों में दोनों राष्ट्रों के बीच सम्बन्धों का एक निश्चित क्रम रहा है। दोनों राज्यों के नेता किसी वैश्विक शिखर के दौरान मिलते हैं। दोनों आधिकारिक स्तर पर वार्ता को पुनः शुरू करने की घोषणा करते हैं। दिसम्बर 2015 में मोदी अचानक पाकिस्तान की यात्रा भी कर आते हैं। वार्ता पुनः शुरू करने की घोषणा के कुछ दिनों के अन्तराल पर भारत के विरूद्ध पाक-प्रायोजित जेहादी आक्रमण हो जाता है (जैसे 2016 का पठानकोट एयरफोर्स पर किया गया आक्रमण) और वार्ता टूट जाती है। कभी-कभी पाकिस्तान का दौरा शुरू होता है। भारत-पाकिस्तान पर कश्मीर में आतंकियों को सहायता देने का आरोप लगाता है तो पाकिस्तान भारत पर पाकिस्तान में अस्थिरता पैदा करने का। वार्ता टूट जाती है। कुछ समय बाद वार्ता पुनः शुरू होती है, पुनः टूटने के लिए .....। यह क्रम अनवरत चलता रहा।

दोनों देशों के बीच विभाजन के समय से ही विवाद है। काँग्रेस ने कभी भी इस विभाजन को सही मन से स्वीकार नहीं किया। इसका विश्वास था समान संस्कृति और समान विरासत के चलते भविष्य में दोनों पुनः एक हो जायेंगे। भारत द्वारा विभाजन की अस्वीकार्यता पाकिस्तान के मूलभूत अस्तित्व पर सवाल बन गई।

पाकिस्तान के नेताओं का यह निरन्तर मानना रहा है कि मौका मिलने पर भारत पुनः पाकिस्तान को अपने में मिला लेगा। यद्यपि यह सत्य है कि शिमला समझौते (1972) के

द्वारा भारत ने पाकिस्तान को एक पृथक् राज्य के रूप में स्वीकार किया है, परन्तु कश्मीर विवाद न सुलझने के कारण पाकिस्तान को आज भी भारत पर विश्वास नहीं है।

सन् 2017 में RSS नेताओं द्वारा 'अखण्ड भारत' की चर्चा ने पाकिस्तान के संदेह को फिर से नये सिरे से जीवित कर दिया है। भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों मे कोई भी गुणात्मक सुधार तभी संभव है जब पाकिस्तान कश्मीर के आतंकियों को आर्थिक और सैनिक सहायता देना बंद कर दे तथा दोनों देश दे व ले की शैली में कश्मीर समस्या का स्थायी समाधान खोज लें।

प्रश्न-3. भारत-बंगलादेश सम्बन्धों पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

अथवा

भारत-बंगलादेश सम्बन्धों के विकास पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

भारत-बंगलादेश सम्बन्धों की निम्न समस्याओं के विशिष्ट संदर्भ में विवेचना कीजिये-

(अ) फरक्खा विवाद, (ब) मूर विवाद, (स) तीन बीघा क्षेत्र, (द) सीमा पर बाढ़ लगाने का मामला।

अथवा

भारत-बंगलादेश सम्बन्धों में प्रमुख अवरोधों की विवेचना कीजिए।

अथवा

बंगलादेश क्या है? बंगलादेश के निर्माण में भारत की भूमिका पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

1980 के बाद भारत-बंगलादेश सम्बन्धों के विकास पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

उत्तर- बंगलादेश सन् 1971 के पूर्व, पूर्वी पाकिस्तान कहलाता था। बंगलादेश का निर्माण भारत के सहयोग से हुआ। इसके निर्माण में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। 1970 में पूर्वी पाकिस्तान में पश्चिमी पाकिस्तान के विरुद्ध असन्तोष इतना अधिक बढ़ गया था, कि मुक्ति-सेना ने पश्चिमी पाकिस्तान से अलग होकर स्वतंत्र बंगलादेश की स्थापना का निश्चय किया।

1970 में पाकिस्तान में हुये चुनावों में पाकिस्तान की 300 व्यक्तियों की केन्द्रीय असेम्बली में पूर्वी पाकिस्तान की अवामी लीग पार्टी को 300 में से 160 स्थान मिले थे। इसके नेता शेख मुजीबुर्रहमान थे। वे पाकिस्तान के प्रधानमंत्री बन सकते थे, परन्तु याहिया खाँ ने भुट्टो के परामर्श पर पाकिस्तान में हुये इस निर्वाचन को नहीं माना। इससे पूर्वी पाकिस्तान में असंतोष भड़क उठा, जिसे दबाने के लिये याहिया खाँ ने दमन-चक्र चलाया जिससे करोड़ों शरणार्थी भागकर भारत आये। यह भारत पर अप्रत्यक्ष आक्रमण था। अतः सर्वप्रथम भारत ने दुनिया के देशों से इस अघोषित आक्रमण को रोकने की अपील की, परन्तु भारत की किसी ने नहीं सुनी तो भारत ने मुक्ति-सेना को सहायता देनी शुरु कर दी। दिसम्बर, 1971 में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। भारत ने इस आक्रमण का मुँहतोड़ उत्तर दिया और पाकिस्तान की सेना को पूर्वी मोर्चे पर हारकर अन्त में आत्म-समर्पण करना पड़ा। लगभग 1 लाख सैनिकों तथा 193 सेना अधिकारियों ने भारतीय सेना के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया था।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है, कि भारत की बंगलादेश के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारत ने बंगलादेश मुक्ति-संग्राम में भी तन-मन-धन तथा सैनिक सहायता देकर इसे सफल बनाया तथा पाकिस्तान को पराजित कर बंगलादेश का निर्माण किया। शेख मुजीबुर्रहमान को मुक्त कराया और पाकिस्तान को बंगलादेश को मान्यता देने के लिये बाध्य किया।

भारत–बंगलादेश सम्बन्धों का विकास– भारत, बंगलादेश का जन्मदाता राष्ट्र है। भारत के सैनिकों ने बंगलादेश के निर्माण के लिये अपना खून बहाया था। बंगलादेश के प्रथम प्रधानमंत्री शेख मुजीबुर्रहमान भारत के प्रति कृतज्ञ थे। अतः उनके प्रधानमंत्रित्व और राष्ट्रपतित्व–काल में भारत–बंगलादेश सम्बन्ध अत्यन्त मधुर रहे। इस काल में भारत ने बंगलादेश को सभी प्रकार की सहायता दी। 15 अगस्त, 1975 को बंगलादेश में क्रांति हो गई और शेख मुजीबुर्रहमान की परिवार–सहित हत्या कर दी गई। उसके बाद भारत के साथ बंगलादेश के सम्बन्ध उतने मधुर नहीं रहे। इन दोनों के बीच फरक्खा बाँध विवाद पर मतभेद था। मूर नामक द्वीप के मामले में भी दोनों देशों में विवाद था। बंगलादेश से भारत का अवैध–पारगमन एक बहुत बड़ी समस्या है। भारत सीमा पर काँटेदार तार लगाना चाहता है परन्तु बंगलादेश इसका विरोध करता है।

भारत ने बंगलादेश के साथ अपने सभी विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल किया है। भारत और बंगलादेश के बीच अब उतने मधुर सम्बन्ध तो नहीं है जितने शेख मुजीबुर्रहमान के समय में थे, परन्तु इतने खराब भी नहीं हैं। बंगलादेश की नई प्रधानमंत्री शेख हसीना वाजेद अब संबंध सुधारने के लिये प्रयत्नशील हैं।

वास्तव में कुछ गलतफहमियों के कारण भारत और बंगलादेश के बीच सम्बन्धों में समय–समय पर तनाव उत्पन्न होते रहे हैं क्योंकि बाह्य शक्तियों की रुचि भारत और बंगलादेश में मतभेद उत्पन्न करने में रही है। इसमें चीन और अमेरिका का महत्वपूर्ण हाथ है परन्तु जनता पार्टी के शासन–काल में दोनों के बीच सम्बन्धों में सुधार के प्रयास प्रारम्भ हो गये थे। श्रीमती इंदिरा गाँधी के द्वितीय प्रधानमंत्रित्व–काल से इनमें धीरे–धीरे सुधार हुआ और राजीव गाँधी के काल में जनरल इरशाद की भारत यात्रा से कई गलतफहमियां दूर हुईं राष्ट्रपति इरशाद के पतन के बाद बंगलादेश के स्वतंत्र चुनावों में खालिदा जिया का दल जीत कर आया। जिया–उर–रहमान के काल में भारत–बंगलादेश सम्बन्ध सामान्य नहीं रहे। अतः खालिदा जिया के शासन–काल में भी भारत–बंगलादेश सम्बन्ध में कोई महत्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ। 1985 में सार्क दक्षेस की स्थापना हुयी। यह बंगलादेश के जिया–उर–रहमान (तत्कालीन राष्ट्राध्यक्ष) के मस्तिष्क की उपज है। भारत ने इसके निर्माण और विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भारत तथा बंगलादेश के मध्य निम्नलिखित विवाद रहे हैं–

1. **फरक्खा विवाद–** फरक्खा विवाद वास्तव में एक अन्तर्राष्ट्रीय नदी जल विवाद है। यह विभाजन की देन है। वास्तव में भारत की गंगा नदी ही बंगाल में भारत और बंगलादेश दो अलग नामों से शाखाओं के रूप में बहती है। यहाँ नदी डेल्टा बनाती है अतः इसकी तलहटी में मिट्टी जमा हो जाने से, कलकत्ता बन्दरगाह तक बड़े–बड़े जहाज नहीं आ पाते है। इस समस्या का हल भारत में मुर्शिदाबाद के निकट फरक्खा नामक स्थान पर एक बाँध बनाकर हुगली नदी (गंगा की शाखा) को पर्याप्त पानी उपलब्ध कराने की योजना 1853 में बनाई गई थी, जिससे हुगली में पर्याप्त जल–स्तर बनाये रखा जा सके परन्तु बंगलादेश ने इस योजना का इस आधार पर विरोध करना शुरू किया कि इससे गंगा की बंगलादेश में बहने वाली शाखा में पानी की मात्रा कम होकर बंगलादेश में सूखा रह जायेगा। वह इसका विरोध कर रहा है। इस पर कई बार वार्तायें व अल्पकालीन समझौते हो चुके हैं। अब यह समस्या सुलझ गयी है तथा दोनों देशों ने एक समझौता कर लिया है।
2. **न्यू मूर–द्वीप विवाद–** भारत और बंगला देश के बीच एक समस्या न्यू मूर–द्वीप के सम्बन्ध में उत्पन्न हुई थी। न्यू मूर–द्वीप बंगाल की खाड़ी में उतरा एक द्वीप है।

इसका क्षेत्रफल 12 वर्ग किलोमीटर है। बंगलादेश इसे दक्षिण तलपट्टी कहता है और भारत इसे पुरवास्त की संज्ञा देता है। यह द्वीप भारतीय सीमा में होने पर भी बंगलादेश ने इस पर अपना दावा किया। अगस्त 1981 में बंगलादेश के 8 युद्धपोतों ने इस पर कब्जा करने का विफल प्रयास किया था। वर्तमान में यह द्वीप भारत के अधिकार में है, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार यह भारतीय सीमा में स्थित है।

3. **चकमा शरणार्थियों की समस्या–** चकमा शरणार्थी भारत में जबरदस्ती घुस आये घुसपैठिये हैं। भारत में इनकी बाढ़ सी आ गई है। बंगालदेश ने इन्हें वापस लेने का वादा किया है, परन्तु ये डर के मारे वापस नहीं जाना चाहते। इस समस्या ने भारत–बंगलादेश सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न किया है। अभी कुछ समय पूर्व चकमा समूह के दो दल बंगलादेश वापस जा चुके हैं।
4. **तीन बीघा क्षेत्र पट्टे पर देना–** जब दोनों देशों के बीच 1993 में लागू एक समझौते द्वारा भारत ने बंगलादेश को कूचबिहार क्षेत्र में स्थित दाहाग्राम और अंगोरपोता के दो अन्तःक्षेत्र (Enclaves) बंगलादेश को पट्टे पर प्रदान कर दिये हैं। इसे तीन बीघा गलियारा कहते हैं। इस क्षेत्र में सम्प्रभुता भारत की स्वीकार की गई है। यह एक सौहार्द्रपूर्ण समझौता है।
5. **तीस्ता नदी जल समझौता–** 30 जुलाई, 1983 को दोनों देशों में तीस्ता नदी के जल के उपयोग के बारे में एक समझौता सम्पन्न हुआ है। इसके अनुसार सूखे मौसम के दौरान भारत को 39% तथा बंगलादेश को 36% पानी मिलेगा। 25% पानी के बारे में कोई समझौता नहीं हुआ है।

भारत–बंगलादेश सम्बन्धों की वर्तमान स्थिति और भविष्य– भारत और बंगलादेश सम्बन्धों में बंगलादेश में लोकतंत्र की स्थापना के बाद सुधार की आशा बँधी थी परन्तु खालिदा जिया ने आते ही भारत–बंगलादेश मैत्री–संधि 1972 को रद्द करने की मांग कर इस सम्बन्ध में आशा को निराशा में बदल दिया।

प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव के काल में भारत–बंगलादेश सम्बन्ध में उतार–चढ़ाव देखने को मिलते हैं। इसमें जहाँ एक ओर भारत और बंगलादेश के बीच अनेक समझौते हुये जिन्होंने दोनों देशों के विवादों को कम किया। बंगलादेश के विदेशमंत्री की भारत यात्रा के समय दोहरे करारोपण से बचने तथा मिश्रित उद्योगों की स्थापना सम्बन्धी दो महत्वपूर्ण वित्तीय समझौते हुये। इसी साल 26 मार्च 1992 को तीन बीघा गलियारे के सम्बन्ध में समझौता हुआ है और यह भारत ने बंगलादेश को एक लम्बे काल के लिये पट्टे पर दिया है। इसी समय नदी जल विवाद निबटाने के लिये एक संयुक्त समिति की स्थापना का समझौता हुआ है। सन् 1993 में बंगलादेश की प्रधानमंत्री खालिदा जिया ने भारत की यात्रा की तथा चकमा शरणार्थियों को वापस बंगलादेश भेजने के सम्बन्ध में सहमति हुई। अप्रैल 1993 में ढाका में आयोजित सार्क के सातवें शिखर सम्मेलन के अवसर पर भारत के प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हाराव तथा बंगलादेश की प्रधानमंत्री बेगम खालिदा जिया ने सद्भावनापूर्ण वातावरण में वार्ता की। इससे ऐसा लगा कि दोनों देशों के बीच मतभेद कम हुये हैं। परन्तु इसी काल में कुछ ऐसी घटनायें भी घटित हुईं जिनसे तनाव उत्पन्न हुये। यह घटना थी अयोध्या काण्ड में बंगलादेश में मुसलमानों द्वारा प्रकट प्रतिक्रिया। इसमें बंगलादेश में हिन्दू–मन्दिर नष्ट किये गये तथा हिन्दुओं को परेशान किया गया। इससे बंगलादेश में भारत विरोधी वातावरण बना।

1993 में स्थिति ऐसी थी कि यदि बेगम खालिदा जिया आश्वासन नहीं देतीं तो सातवें शिखर सम्मेलन में पी.वी. नरसिम्हाराव का शामिल होना संदिग्ध हो गया होता। एक बार तो इसे स्थगित करना पड़ा। बेगम खालिदा जिया के आश्वासन के बाद 10-11 अप्रैल, 1993 को ढाका में यह सम्मेलन हो सका। इस यात्रा के अवसर पर भारत और बंगलादेश के प्रधानमंत्रियों के बीच द्विपक्षीय सम्बन्धों पर बातचीत भी हुई।

इसके बाद बंगलादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना वाजेद थीं, जो कि शेख मुजीबुर्रहमान की बेटी थीं। वे अब दोनों देशों के संबंधों को मित्रतापूर्ण बनाने को उत्सुक थीं तथा प्रयत्न भी कर रही थीं। वह चाहती थी कि भारत तथा पाकिस्तान में भी सौहार्द्र बना रहे।

प्रधानमंत्री मोदी की बंगलादेश यात्रा (2015)– सन् 2015 में भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने बंगलादेश की यात्रा की। मोदी ने दोनों देशों के बीच बस सेवा का भी उद्घाटन किया। ये बस सेवाएँ कलकत्ता-ढाका-अगरतला तथा ढाका-गुवाहाटी मार्ग पर प्रारंभ की गईं। प्रधानमंत्री की यात्रा के दौरान स्थल-सीमा समझौता सहित 22 समझौतों पर दोनों देशों के बीच सहमति बनी। इन समझौतों पर हस्ताक्षर के दौरान मोदी ने कहा, "..... आज इतिहास का निर्माण हुआ है। हमने न केवल सीमा-विवाद को हल किया है वरन् हमने सीमाओं को अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित और अपने लोगों के जीवन को अधिक स्थिर बना दिया है। हमारे बीच संघर्ष करने और त्याग करने के भावनात्मक रिश्ते हैं ..... अब हम विकास के मार्ग पर चलने वाले सफल सहयात्री हैं।"

यात्रा के दौरान तटीय जहाजरानी के मुद्दे पर एक महत्वपूर्ण समझौते पर हस्ताक्षर किए गये। भारत के व्यापारिक जहाज अब बंगलादेश को सामान पहुँचाने के लिये चटगाँव और मंगला बन्दरगाह का प्रयोग कर सकते हैं। बंगलादेश में स्वास्थ्य अन्तर्संरचना और शिक्षा को मजबूत बनाने के लिए भारत बंगलादेश को 2 बिलियन डॉलर की सहायता देगा। इसके अलावा भारत बंगलादेश को विद्युत्-ग्रिड निर्माण में सहायता करेगा तथा त्रिपुरा से 100 मेगावाट की बिजली बंगलादेश को आपूर्ति करेगा।

शेख हसीना की भारत यात्रा (2017)– बंगलादेश की प्रधानमत्री शेख हसीना ने सन् 2017 में भारत की यात्रा की। यात्रा के दौरान दोनों पक्षों ने परस्पर ऐतिहासिक सम्बन्धों को याद करते हुए विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग के लिए विशेष रूप से प्रतिरक्षा और जुड़ाव के क्षेत्र में अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की दोनों देशों ने आतंकवाद से लड़ने में परस्पर सहयोग के प्रति अपनी प्रतिबद्धता पुनः दोहरायी। पारस्परिक सहयोग सम्वर्धन के लिए इलेक्ट्रॉनिक्स, साइबर, सुरक्षा, सूचना-प्रौद्योगिकी, अन्तरिक्ष विज्ञान व नागरिक उपयोग हेतु नाभिकीय ऊर्जा आदि क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने पर भी चर्चा हुई। भारत द्वारा बंगलादेश के लिये 50 मेगावाट अधिक विद्युत् की आपूर्ति के लिए तथा नूमालीगढ़ के पार्वतीपुर तक के लिये डीजल पाइपलाइन हेतु वित्तीय सहायता देने हेतु सहमति दी गई।

भारतीय पक्ष के द्वारा बंगलादेश की मदद हेतु 4-5 अरब डॉलर की एक नयी लाईन ऑफ क्रेडिट की घोषणा भी की गई। इसके अलावा 50 करोड़ डॉलर की मदद भारत में रक्षा उपकरण खरीदने हेतु अलग से दिये जाने का निर्णय हुआ। इससे विगत तीन वर्षों में भारत की ओर से बंगलादेश को दी जाने वाली कुल मदद 8 अरब डॉलर की हो जायेगी।

भारतीय प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि भारत के साथ बंगलादेश का विकास भी उनका सपना है। शेख हसीना ने भी अपनी ओर से यह आश्वासन दिया कि बंगलादेश का इस्तेमाल कभी भी भारत-विरोधी गतिविधियों के लिए नहीं होने दिया जायेगा तथा आतंकवाद को बंगलादेश कभी सहन नहीं करेगा।

निष्कर्ष– वर्तमान में भारत और बंगलादेश के बीच जो पुराने विवाद हैं, विशेषकर बंगला देश से घुसपैठ का मामला। इनके कारण भारत और बंगलादेश में मतभेद हैं। भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री अटल विहारी बाजपेयी ने भारत-बंगलादेश मैत्री के लिये उसी प्रकार बस डिप्लोमेसी का सहारा लिया, जिस प्रकार पाकिस्तान के साथ प्रयास किया। सन् 1999 में श्री बाजपेयी ने यह प्रयास किया परन्तु भारत के दुर्भाग्य से बंगलादेश से भी हमें इस प्रयास के अच्छे परिणाम नहीं मिले। सन् 2001 में भारत की सीमा में घुसकर बंगलादेश राइफल्स के जवानों ने 16 सैनिकों को मार डाला। सन् 2002 के निर्वाचन में बेगम खालिदा जिया के नेतृत्व में भारत के विरोधियों की सरकार बनी है। यद्यपि बेगम जिया ने भारत के नेताओं को सम्बन्ध सुधारने का आश्वासन दिया है परन्तु इस सरकार में भारत विरोधी लॉबी ही सत्तारूढ़ हुई है। इसलिये भारत बंगलादेश के बीच निकट भविष्य में सुमधुर सम्बन्धों की कल्पना नहीं की जा सकती।

प्रश्न-4. भारत-श्रीलंका सम्बन्धों की वर्तमान स्थिति क्या है? विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत तथा श्रीलंका के मध्य तनाव के कारणों को समझाइये। सन् 1987 में हुये नये समझौते ने दोनों देशों के सम्बन्धों को कहां तक प्रभावित किया है?

उत्तर– भारत और श्रीलंका के सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीन हैं। इनका वर्णन हमें पुराणों, रामायण एवं महाभारत इत्यादि में भी मिलता है। रामायण में राम की श्रीलंका विजय का वर्णन ही इसका मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। इतिहास में अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा द्वारा यहां बौद्ध-धर्म के प्रचार का उल्लेख मिलता है। वास्तव में वर्तमान श्रीलंका भारत से गये हुये लोगों से ही बसा हुआ है। सिंहली 2000 वर्ष पूर्व गये तथा तमिल लोग ब्रिटिश काल में वहां गये। सिंहलियों का मुख्य धर्म-बौद्ध धर्म है तथा तमिलों का हिन्दू और इस्लाम। एक और महत्वपूर्ण बात है कि श्रीलंका और भारत दोनों ही 1947-48 तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद के आधीन देश थे। भारत 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ और श्रीलंका 4 फरवरी, 1948 को स्वतंत्र हुआ। श्रीलंका भारत के दक्षिण में स्थित एक बड़ा और महत्वपूर्ण द्वीपीय देश है, जिसकी स्थिति सैन्य और राजनीतिक दृष्टि से हिन्द महासागर में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

स्वतंत्रता के बाद भारत और श्रीलंका सम्बन्धों का विकास– भारत और श्रीलंका दोनों की स्वतंत्रता के बाद दोनों देशों में राजनीतिक संबंधों के क्षेत्र में विरासत में निम्नलिखित समस्यायें प्राप्त हुई हैं-

(1) प्रवासी भारतीयों की समस्या।

(2) मछली व्यवसाय के लिये तटवर्ती जल क्षेत्र के अतिक्रमण की समस्या। बाद में दो और समस्या उत्पन्न हुई हैं- (1) कच्चा तीवू द्वीप विवाद (2) तमिल-इलम समस्या।

भारत और श्रीलंका सम्बन्धों को विदेश नीतिक दृष्टिकोण से अध्ययन के लिये इन समस्याओं की संक्षिप्त विवेचना निम्नलिखित है-

(1) **प्रवासी भारतीयों की समस्या**– प्रवासी उन भारतीय मूल के लोगों को कहते हैं जिन्हें सैकड़ों वर्ष पूर्व ब्रिटिश पूंजीपति लोग भारत से श्रीलंका में चाय, रबर तथा गन्ने के खेतों और बगीचों में मजदूर के रूप में खेती कराने के लिये ले गये थे। स्वतंत्रता के बाद इनकी नागरिकता की समस्या उत्पन्न हुई क्योंकि श्रीलंका की सरकार ने इन्हें लंका का नागरिक मानने से इन्कार कर दिया था। यह विवाद बहुत दिनों तक चलता रहा, अन्त में 1964 में श्रीलंका की प्रधानमंत्री श्रीमती सिरमाओ भण्डारनायके तथा भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री

श्री लालबहादुर शास्त्री के बीच एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार कुछ प्रवासी भारतीयों को भारत ने वापस लेकर अपनी नागरिकता देना स्वीकार कर लिया, कुछ को किश्तों में श्रीलंका ने अपनी नागरिकता देना स्वीकार कर लिया था। 1974 में श्रीमती इन्दिरागाँधी और भण्डारनायके ने इस समझौते की दूसरी कड़ी को साकार रूप प्रदान किया। इससे भारत और श्रीलंका के बीच प्रवासी भारतीयों को नागरिकता देने के सम्बन्ध में एक वैधानिक संकट का हल हुआ।

(2) **मछली पकड़ने के लिये समुद्री जल-क्षेत्र की समस्यायें**– भारत और श्रीलंका के बीच जो महत्वपूर्ण जल-क्षेत्र है, उसमें भारत और श्रीलंका दोनों के ही मछुआरे मछली पकड़ते हैं। इनके बीच समुद्री जल-क्षेत्र के अतिक्रमण की गंभीर शिकायतें उत्पन्न हो जाती हैं परन्तु इन समस्याओं का हल अंतर्राष्ट्रीय कानून द्वारा जल-क्षेत्र निर्धारण द्वारा आसानी से किया जाता है परन्तु समुद्र में सीमा का निर्धारण कठिन होता है।

(3) **कच्चा तीवू द्वीप विवाद**– कच्चा तीवू द्वीप भारत और श्रीलंका के बीच समुद्र का एक निर्जन द्वीप है यहां एक चर्च है, जिस पर मार्च में मेला लगता है, जिसमें भारत और श्रीलंका दोनों के ही लोग पहुंचते हैं, परन्तु 1967 में श्रीलंका ने अपनी पुलिस भेज कर इस पर अपना आधिपत्य बताया। तब यह विवाद उत्पन्न हुआ और बातचीत द्वारा कागजातों को देखकर इस विवाद का समाधान कर दिया गया। इस विवाद को हल करने में सौहार्द्र एवं शान्ति-पूर्ण वार्ता में भारत एवं श्रीलंका करने में दोनों का सहयोग सराहनीय रहा।

(4) **तमिल-ईलम समस्या**– तमिल समस्या श्रीलंका में रहने वाले उन श्रीलंकाई नागरिकों की उस देश की आन्तरिक समस्या है जो भारत से गये हुये तमिलभाषी हैं और उनका आरोप है कि श्रीलंका में बहुसंख्यक सिंहली उनको द्वितीय श्रेणी का नागरिक मानकर उनके साथ पक्षपातपूर्ण व्यवहार करते हैं। इन तमिलों का श्रीलंका के उत्तरी-पूर्वी भाग, जाफना में बहुमत है 1983-84 में श्रीलंका की सिंहली उग्रवादी सरकार ने कुछ ऐसे कानून बना डाले जिससे ये तमिल नागरिक वास्तव में वहां द्वितीय श्रेणी के नागरिकों की स्थिति में पहुंच गये हैं। अतः कुछ उग्रवादी तमिल संगठनों ने तमिल-प्रधान प्रान्तों की स्वायत्ता या स्वतंत्र राज्य की मांग शुरू कर दी और सत्तारूढ़ सिंहलियों ने इस मांग के जवाब में दमन का सहारा लिया। इसके बाद तमिल और सिंहलियों में गृहयुद्ध शुरू हो गया है। तब से यह समस्या दिनोंदिन उग्र होती गई। यद्यपि श्रीलंका की सरकार ने तमिलों की कई मांगें स्वीकार कर लीं।

भारत की नीति और रुख– भारत में उस समय राजीव गांधी की सरकार ने कहा भारत का यह स्पष्ट मत है कि तमिलों की कुछ मांगें तो स्वीकार की जानी चाहिये उन्हें श्रीलंका में बराबरी के नागरिक अधिकार मिलना चाहिये। यद्यपि यह श्रीलंका का आन्तरिक मामला है। अतः भारत इस अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहता, परन्तु श्रीलंका में शांति भारत के हित में है, इसलिये 1987 में एक समझौता हुआ जो **जयवर्द्धने-राजीव गांधी समझौता** कहलाता है।

राजीव गाँधी-जयवर्धने समझौता (1987)– 29 जुलाई, 1987 को राजीव गाँधी और जे. जयवर्धने (श्रीलंका के राष्ट्रपति) के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये। समझौते की मुख्य बातें निम्नलिखित थीं–

(1) श्रीलंका की अखण्डता को बाधित किये बिना तमिल बहुल उत्तरी और पूर्वी प्रान्तों को मिला दिया जाय।

(2) 31 दिसम्बर, 1988 के पूर्व पूर्वी प्रान्त में एक जनमत-संग्रह का आयोजन किया जाय ताकि वे निर्णय ले सकें कि वे उत्तरी प्रान्त से सम्बन्ध बनाये रखना चाहेंगे अथवा एक प्रान्तीय गवर्नर तथा प्रान्तीय परिषद् से युक्त एक अलग प्रशासकीय इकाई का निर्माण करना चाहेंगे।

(3) पूर्वी और उत्तरी प्रान्तों में आपात स्थिति 15 अगस्त, 1987 तक उठा ली जायेगी।

(4) उत्तरी और पूर्वी प्रान्त की परिषदों के चुनाव 31 दिसम्बर, 1987 के पूर्व करा लिये जायें।

(5) राजनीतिक और अन्य बंदियों, जिन्हें आतंकवाद निषेध अधिनियम के अन्तर्गत गिरफ्तार किया गया है, को सामान्य क्षमादान दे दिया जायेगा।

(6) 48 घंटे के भीतर देश में सभी विरोधकारिता बन्द हो जायेगी और उग्रवादी समूहों द्वारा हथियारों का आत्म-समर्पण कर दिया जायेगा।

(7) भारत यह सुनिश्चित करेगा कि उसकी भूमि का प्रयोग श्रीलंका की एकता और अखण्डता के लिए हानिकारक कार्यों हेतु नहीं किया जायेगा।

(8) श्रीलंका के राष्ट्रपति का यह विवेकाधिकार होगा कि वे जाफना में संघर्ष को रोकने और इसे सुनिश्चित करने के लिए भारतीय शान्ति सेना को बुला सकेंगे और भारत ने इस प्रकार की सहायता देने के लिए अपनी सहमति व्यक्त की।

(9) श्रीलंका त्रिकोमाली बन्दरगाह को सैनिक उद्देश्य के लिए किसी भी अन्य देश को उपलब्ध नहीं करायेगा।

उक्त समझौते को दोनों देशों के बीच सकारात्मक सम्बन्धों की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कदम माना गया। भारत द्वारा श्रीलंका में 'भारतीय शान्ति सेना' भेजी गयी। भारतीय शान्ति सेना ने वह लड़ाई लड़ी जो श्रीलंका की सेना को लड़नी चाहिए थी। फिर भी भारतीय शान्ति सेना को आंशिक सफलता मिली। राजीव-जयवर्धने समझौते को प्रभावी ढंग से नहीं लागू किया जा सका। तमिलों और सिंहलियों- दोनों ने ही इसका विरोध किया। आलोचकों का मत है कि जयवर्धने ने अपनी कूटनीति से भारतीय सेनाओं को तमिल उग्रवादियों से भिड़ा दिया। वैसे भारत के लिए यह करना जरूरी भी हो चला था क्योंकि यदि भारत ऐसा न करता तो कई भारत-विरोधी ताकतें जयवर्धने की मदद के लिए तैयार बैठी थीं।

जयवर्धने के बाद आर. प्रेमदासा श्रीलंका के राष्ट्रपति बने। उन्होंने भारत से सेनाओं की वापसी का आग्रह किया। पूरी भारतीय शान्ति सेना चरणबद्ध तरीके से मार्च, 1990 तक वापस बुला ली गयी।

1990 के बाद के काल में भारत-श्रीलंका सम्बन्ध– भारत में 1989 में राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार के गठन के साथ ही श्रीलंका के साथ सम्बन्धों की सुधार की दिशा में नये प्रयास किये गये। दोनों देशों में इस बात पर सहमति थी कि श्रीलंका की जातीय समस्या का समाधान राजनीतिक तरीके से ही किया जा सकता है। इस बात पर भी आम सहमति व्यक्त की गयी कि तमिलनाडु में मौजूद दो लाख श्रीलंकाई शरणार्थियों की भी चरणबद्ध रूप से वापसी हो सकती है। भारत ने अपनी ओर से यह आश्वासन दिया कि वह न तो श्रीलंका अपनी सेना भेजेगा और न ही भारत से श्रीलंका-विरोधी किसी गतिविधि को संचालित होने दिया जायेगा।

राष्ट्रपति श्रीमती चन्द्रिका कुमारतुंगा की मार्च, 1995 में भारत यात्रा के दौरान भारत द्वारा श्रीलंका की जातीय समस्या के समाधान के लिए पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया गया। अपनी यात्रा के दौरान उन्होंने स्वतंत्र व्यापार और निवेश का भी प्रस्ताव रखा। कोलम्बो में श्रीमती चन्द्रिका ने भारतीय माल के मुक्त क्रय-विक्रय का प्रस्ताव भी दिया।

लिट्टे की समाप्ति– श्रीलंका में सेना द्वारा आक्रमक सैन्य अभियान चलाते हुए वर्ष 2009 में 'लिट्टे' के नेता प्रभाकरन की हत्या कर दी गई और इसी के साथ 'लिट्टे' का सफाया हो गया। श्रीलंका सरकार का मानना है कि 'लिट्टे' की समाप्ति से श्रीलंका में आतंकवाद का समाधान हो गया है जबकि तमिलों का मानना है कि जातीय भेद–भाव के कारण श्रीलंका में आतंकवाद का जन्म हुआ इसलिये 'लिट्टे' की समाप्ति मात्र से श्रीलंकाई समस्या का समाधान नहीं हुआ है। परन्तु औपचारिक रूप से यह माना जा सकता है कि श्रीलंका के गृहयुद्ध की समाप्ति हो गई है।

श्रीलंका में मानवाधिकार संरक्षण का प्रश्न और भारत– श्रीलंका में सेना और लिट्टे के उग्रवादियों के बीच हुए सैनिक संघर्ष में लगभग 40 हजार नागरिक मारे गये। इसे युद्ध अपराध की संज्ञा दी गई क्योंकि सेना द्वारा नागरिकों की हत्या किया जाना एक गंभीर अपराध है। उल्लेखनीय है कि 2009 में प्रभाकरन की मृत्यु के बाद श्रीलंका की सरकार ने तमिलों के साथ मिलकर पुनर्वास कार्यक्रम चलाने का वायदा किया था। परन्तु जब श्रीलंका ने अपना वायदा पूरा नहीं किया तो इस मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग में लाया गया। भारत ने आयोग के उस प्रस्ताव का समर्थन किया जिसमें श्रीलंका सरकार को तमिलों के पुनर्वास के लिए निर्देशित किया गया था। श्रीलंका सरकार को अपने वायदे को पूरा करने के लिए तीन वर्ष का समय दिया गया। सन् 2012 में श्रीलंका सरकार ने युद्ध–अपराधों की जाँच के लिये एक पुनर्वास आयोग की नियुक्ति की। इसके द्वारा यह रिपोर्ट दी गई कि सरकार के द्वारा मानवाधिकारों का उल्लंघन नहीं के बराबर किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की इच्छा थी कि इसकी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जाँच की जाये। भारत ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। सन् 2013 में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग ने श्रीलंका सरकार को निर्देशित किया कि वह पुनर्वास आयोग द्वारा की गई शिफारिशों को लागू करे। भारत ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन किया। अन्ततः 2014 में संयुक्त राष्ट्र ने सन् 2002 से 2009 के बीच श्रीलंका में मानवाधिकारों के उल्लंघन की अन्तर्राष्ट्रीय इकाई द्वारा जाँच का प्रस्ताव पारित किया। भारत इस प्रस्ताव पर मतदान के दौरान अनुपस्थित रहा अर्थात् भारत ने प्रस्ताव का न समर्थन किया और न ही विरोध किया।

मछुआरों का मुद्दा– सन् 1974 में भारत और श्रीलंका के बीच सामुद्रिक सीमा–रेखा का विभाजन हो गया था परन्तु पाकिस्तान की खाड़ी अत्यधिक संकरी है जिसके कारण दोनों देश के मछुआरे एक–दूसरे की सीमा का उल्लंघन करते रहते हैं। भारत और श्रीलंका के बीच समुद्र की चौड़ाई 16 किमी. से 48 किमी. तक है। दोनों देशों के स्थानीय निवासी अपने जीविकोपार्जन के लिये मछली पकड़ने पर निर्भर हैं। अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानून के अनुसार, देश के भू–भाग से 13 समुद्री मील (लगभग 21 मील) तक देश की सम्प्रभुता का दावा होता है। दोनों देशों के बीच संकरा जल क्षेत्र होने के कारण विवाद उत्पन्न होते रहते हैं।

समस्या के समाधन के लिए GPS तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है जिससे मछुआरे सीमा का उल्लंघन न करें। मछुआरों को पहचान–पत्र प्रदान करके भी समस्या का समाधान किया जा सकता है। फरवरी 2015 में श्रीलंका के राष्ट्रपति सिरिसेना और भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की वार्ता में इस प्रकरण पर चर्चा हुई थी। दोनों पक्षों ने समस्या के समाधान के लिए क्षेत्र की 'सम्मिलित निगरानी' पर बल दिया।

भारत–श्रीलंका असैन्य परमाणु समझौता– श्रीलंका के राष्ट्रपति की फरवरी 2015 में सम्पन्न भारत–पाक के दौरान दोनों देशों के मध्य असैन्य परमाणु समझौता सम्पन्न हुआ।

उल्लेखनीय है कि भारत वह पहला देश है जिससे श्रीलंका ने इस प्रकार का समझौता किया है। समझौते की प्रमुख बातें निम्नवत् हैं–

(1) दोनों देश परमाणु शक्ति के संदर्भ में जानकारी और विशेषता का आदान–प्रदान करेंगे।

(2) परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग के मद्देनजर भारत श्रीलंका के कर्मचारियों को प्रशिक्षित करेगा और श्रीलंका के क्षमता–निर्माण में भी सहयोग देगा।

(3) दोनों देश परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण समाधान को ध्यान में रखते हुए संसाधनों को साझा करेंगे।

भारत के प्रधानमंत्री की श्रीलंका यात्रा (2015 तथा 2017)– भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने मार्च 2015 और मई 2017 में श्रीलंका की यात्रा की। सन् 2015 की यात्रा के दौरान मोदी ने महाबोधि सोसाइटी जाकर बौद्ध भिक्षुओं से मुलाकात की। उन्होंने श्रीलंका के व्यवसायिक समूह को भी संबोधित किया तथा अन्तर्संरचना, ऊर्जा, निर्माण तथा पर्यटन क्षेत्र में निवेश पर बल दिया। उन्होंने तलाइमन्नार–मधु ट्रेन का उद्घाटन भी किया। भारत ने ट्रिन्कोमाली को संकेन्द्रण केन्द्र बनाने का भी प्रस्ताव रखा। भारत द्वारा रेलवे तथा रहूना विश्वविद्यालय में टैगोर ऑडिटोरियम बनाने हेतु 318 मिलियन डॉलर के ऋण देने की भी घोषणा की गई। मई 1917 में मोदी ने पुनः श्रीलंका की यात्रा की और अन्तर्राष्ट्रीय बेसक दिवस समारोह में मुख्य अतिथि बनाये गये।

श्रीलंका के प्रधानमंत्री रानिल विक्रमसिंघे की भारत यात्रा– अप्रैल 2017 में श्रीलंका के प्रधानमंत्री रानिल विक्रमसिंघे की भारत यात्रा सम्पन्न हुई। सन् 2015 से यह भारत की उनकी तीसरी यात्रा थी। दोनों पक्षों द्वारा ऊर्जा के क्षेत्र में दीर्घकालिक सहयोग, अन्तर्संरचना तथा रूपरेखा पर सहमति व्यक्त की गई। दोनों पक्षों द्वारा ऊर्जा के क्षेत्र में दीर्घकालिक सहयोग, अन्तर्संरचना तथा विशेष आर्थिक क्षेत्र निर्माण पर बल दिया गया। दोनों देशों के बीच मौजूदा स्वतंत्र व्यापार समझौते के साथ–साथ एक विस्तृत द्वि–पक्षीय आर्थिक भागीदारी पर भी दोनों देशों में सहमति बनी।

भारत–श्रीलंका सम्बन्धों का विश्लेषण तथा निष्कर्ष– श्रीलंका भारत के दक्षिण में स्थित एक उपमहाद्वीपीय राज्य और भारत का पड़ौसी है। भौगोलिक दृष्टि से यह दक्षिण भारत का ही हिस्सा है। अतः सुरक्षा की दृष्टि और राजनैतिक तथा नैतिक दृष्टि से भारत–श्रीलंका सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण रहे हैं और इसी में भारत का राष्ट्रीय हित है। वैसे भारत और श्रीलंका के बीच प्रारम्भ से ही कोई ऐसी गंभीर समस्या नहीं रही जो दोनों राष्ट्रों के सम्बन्धों को बिगाड़ सके और जो कच्चा तीवू तथा प्रवासियों की समस्यायें उत्पन्न भी हुईं उसे भारत ने बातचीत द्वारा सौहाद्रपूर्वक हल किया। श्री और श्रीमती भण्डारनायके के काल में भारत और श्रीलंका सम्बन्ध ठीक ही रहे हैं। अन्य प्रधानमंत्री अवश्य भारत–विरोधी रहे परन्तु भारत की ओर से कभी उन पर बड़े भाई जैसा दबाव डालकर समस्या सुलझाने का प्रयास नहीं हुआ। तमिल–इलम समस्या के सम्बन्ध में भी भारत का रुख न्यायपूर्ण और उचित ही है। अतः भारत श्रीलंका सम्बन्धों का भविष्य उज्ज्वल है।

प्रश्न–5. भारत–नेपाल सम्बन्धों पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

अथवा

'भारत–नेपाल सम्बन्ध विशिष्ट हैं।' विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत–नेपाल सम्बन्धों के विकास और वर्तमान स्थिति पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

भारत–नेपाल सम्बन्धों के नेपाल जिस समदूरी सिद्धान्त पर बल देता है उसका अर्थ क्या है ?

अथवा

भारत–नेपाल सम्बन्धों में उतार–चढ़ाव पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

भारत–नेपाल के बीच सम्बन्ध ठीक न होने के प्रमुख कारण बताइये।

अथवा

भारत–नेपाल सम्बन्धों पर प्रकाश डालिये।

उत्तर– नेपाल, भारत के उत्तर में हिमालय की घाटियों में स्थित एक पहाड़ी देश है। यह एक आन्तरिक देश है। इसके उत्तर में चीन, दक्षिण में भारत का उत्तरप्रदेश और बिहार राज्य तथा पूर्व में भारत का सिक्किम राज्य तथा पश्चिम में उत्तरप्रदेश है। इसे आन्तरिक राज्य इसलिये कहते हैं, क्योंकि इसमें पहुंचने के लिये किसी न किसी अन्य राज्य में से होकर गुजरना आवश्यक है।

ब्रिटिश शासनकाल में नेपाल के भारत सरकार से एक संधि पर आधारित सम्बन्ध थे। सन् 1950 में भारत और नेपाल के बीच पुनः एक संधि हुई। नेपाल में सन् 1950 तक राणा नामक एक सामन्त के हाथ में सत्ता थी। भारत के सहयोग से राणाशाही समाप्त हुई और नेपाल में सीमित राजतंत्र की स्थापना हुई।

सन् 1960 में नेपाल के तत्कालीन शासक महेन्द्र वीर विक्रम शाह ने लोकतंत्र का जो थोड़ा–बहुत विकास नेपाल में हुआ था, उसे समाप्त कर निरंकुश राजतंत्र स्थापित कर दिया। भारत के नेताओं की सहानुभूति नेपाली काँग्रेस के प्रति थी अतः महाराजा महेन्द्र इस बात से असन्तुष्ट थे।

समदूरी सिद्धान्त– नेपाल और भारत के बीच सम्बन्धों में जो थोड़ा–बहुत मतभेदपूर्ण तनाव पाया जाता है, उसके पीछे एकमात्र कारण यह है कि नेपाल, भारत और चीन के साथ सम्बन्धों में समदूरी बनाये रखना चाहता है जबकि भारत का मत है कि नेपाल के साथ भारत के विशिष्ट सम्बन्ध हैं क्योंकि नेपाल को कहीं भी बाहर जाने या बाहरी दुनिया से सम्पर्क बनाये रखने के लिये भारत द्वारा प्रदत्त गलियारे का प्रयोग करना पड़ता है। नेपाल का व्यापार भी भारत में ही होकर होता है। इसलिये भारत को तस्करी भी सहन करना पड़ती है। भारत को इस सुविधा के कारण नेपाल में कुछ सुविधायें प्राप्त हैं। इन्हें विशिष्ट सम्बन्ध का सिद्धान्त कहते हैं।

नेपाल के वर्तमान शासक वीरेन्द्र वीर विक्रमशाह ने नेपाल को 'शांति–क्षेत्र' घोषित करने की माँग की। भारत का मत है कि सम्पूर्ण एशिया को ही शान्ति क्षेत्र घोषित किया जाना चाहिये। राजीव जी के काल में दक्षिण एशिया में सार्क नामक संगठन से भारत और नेपाल दोनों में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित हुआ है।

विगत दो वर्षों से भारत और नेपाल के बीच सन् 1950 में हुई व्यापार और पारगमन संधि समाप्त हो जाने और नई संधि न हो पाने के कारण दोनों देशों के सम्बन्ध अत्यन्त कटु हो गये थे। अभी हाल ही में नेपाल के नये लोकतांत्रिक प्रधानमंत्री भट्टराई ने यात्रा कर सम्बन्ध सुधार की पृष्ठभूमि तैयार की है। इससे भारत और नेपाल के बीच नई संधि की पृष्ठभूमि तैयार हुई है। यह सब नेपाल में लोकतंत्र की स्थापना के लिये आन्दोलन की सफलता के बाद सम्भव हुआ है।

भारत–नेपाल के बीच परम्परागत विशिष्ट सम्बन्ध– नेपाल एक आन्तरिक देश है। इसमें आवागमन के लिये भारत में होकर जाना आवश्यक है। इसलिये भारत नेपाल के साथ एक पारगमन सन्धि भी हुई थी। इसके कारण भारत से गुजरने वाले नेपाल के माल पर चुंगी

सम्बन्धी रियायत प्राप्त थी। इसके एवज में भारत को कुछ विशेष सुविधायें नेपाल में प्राप्त थीं जैसे कि भारत से नेपाल आने–जाने पर पासपोर्ट–वीजा इत्यादि औपचारिकताओं की आवश्यकता नहीं रही है। इसके साथ–साथ भारत सुरक्षा की दृष्टि से नेपाल में कुछ ऐसी पुलिस चौकियाँ भी बनाये हुये था जिनसे वह सीमा पर चौकसी रख सके। भारत ने अपनी ओर से सदैव इस विशिष्ट सम्बन्ध को मान्यता दी है जबकि नेपाल ने सदैव चीन और भारत के बीच समदूरी सिद्धान्त पर बल देकर अपनी सम्प्रभुता के नाम पर विशिष्ट सम्बन्ध के सिद्धान्त को नकारा है यही दोनों देशों के बीच मतभेद का प्रमुख आधार रहा है। यद्यपि सरकारी तौर पर नेपाल के आन्तरिक मामलों में कभी हस्तक्षेप नहीं किया परन्तु नेपाल और भारत की संस्कृति, धर्म सभ्यता एक–दूसरे के साथ इस कदर जुड़ी हुई हैं कि आम जनता की एक–दूसरे के आन्तरिक भागीदारी को रोका नहीं जा सकता।

नेपाल में कम्युनिष्ट सरकार और भारत नेपाल सम्बन्धों पर प्रभाव– 1994 में हुये निर्वाचनों में नेपाल में साम्यवादी दल की सरकार बनी है। साम्यवादी प्रारम्भ से ही भारत विरोधी रहे हैं अतः इस बात की आशंका प्रकट की जाना स्वाभाविक है कि नेपाल की वर्तमान कम्युनिष्ट सरकार काल में नेपाल में भारत नेपाल सम्बन्ध ठीक नहीं रहेंगे। परन्तु यह भ्रम है क्योंकि भारत नेपाल सम्बन्ध तो भारत और नेपाल की परस्पर निर्भरता के कारण बहुत महत्वपूर्ण हैं नेपाल में कोई भी सरकार स्थापित हो वह भारत की उपेक्षा नहीं कर सकती। 1995 में नेपाल के प्रधानमंत्री की भारत यात्रा इस दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

भारत–नेपाल सम्बन्धों की समीक्षा– भारत और नेपाल के सुरक्षा सम्बन्धी हित एक होने पर भी उनके सम्बन्ध में अत्यधिक उतार–चढ़ाव रहा है। अनेक बार भारतीय हितों की उपेक्षा करते हुये नेपाल ने चीन के साथ समझौते किये हैं। भारत और नेपाल के बीच गलत–फहमियाँ विद्यमान रही हैं। नेपाल में चीन की गतिविधियाँ भारत–विरोधी और ध्वंसात्मक रही हैं।

नेपाल द्वारा काठमाण्डू–ल्हासा सड़क मार्ग बनाने के सम्बन्ध में चीन के साथ समझौता स्पष्टतः भारत–विरोधी कदम था। एवरेस्ट पर्वत के सम्बन्ध में चीन के साथ नेपाल का समझौता भी भारत विरोधी था। यह भारत के साथ विश्वासघात था। नेपाल के राजा वीरेन्द्रशाह का शान्ति क्षेत्र का प्रस्ताव भी भारत–विरोधी था। भारत सरकार का यह दृष्टिकोण है कि नेपाल ही क्यों सम्पूर्ण भारत उपमहाद्वीप को शान्ति क्षेत्र घोषित किया जाये। चीन, पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका ने नेपाल के शान्तिक्षेत्र प्रस्ताव का स्वागत किया। राष्ट्रपति रीगन ने भी इस प्रस्ताव का स्वागत किया था। परन्तु वास्तव में यह भारत–विरोधी प्रस्ताव है, क्योंकि यह अप्रत्यक्ष रूप से भारत पर एक दोषारोपण है कि भारत–नेपाल के लिये खतरा है। संभवतः नेपाल के इस प्रस्ताव का उद्देश्य भारत–नेपाल विशिष्ट सम्बन्धों का नकारना है जिसे वह अपने राष्ट्रीय व्यक्तित्व की खोज में बाधक मानता है और भारत के व्यवहार को बड़े भाई जैसा होने का आरोप लगाता है। यह उसकी भारत और चीन के मध्य ऐतिहासिक सन्तुलनकारी भूमिका का एक रूप भी हो सकता है। नेपाल इस प्रस्ताव को भारत से अधिकाधिक आर्थिक सहायता की जाने के लिये सौदेबाजी के हथियार के रूप में भी प्रयोग में लाना चाहता है।

संक्षेप में भारत–नेपाल सम्बन्धों का विकास यह बताता है कि नेपाल–भारत के सन्दर्भ में हीनता की भावना से मुक्त है तथा दक्षिण के अपने इस बड़े पड़ौसी द्वारा आधिपत्य की आशंका उसे सदैव सताती रहती है। इसलिये वह हमेशा समदूरी सिद्धान्त पर बल देता रहा है। परन्तु भारत का यह मत है कि भौगोलिक आर्थिक कारणों से भारत के नेपाल के साथ विशिष्ट

सम्बन्ध हैं। भारत और नेपाल के सम्बन्धों को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि नेपाल में 1960 में लोकतंत्र समाप्त कर दिया गया था। वहाँ सीमित लोकतंत्र था। अभी दो वर्ष पूर्व वहाँ लोकतंत्र की स्थापना हुई है और यह लोकतंत्र भी अपनी समस्याओं से जूझ रहा है।

नेपाल के राजा हमेशा इसलिये भारत-विरोधी रहे क्योंकि उनका विचार रहा है कि भारत-नेपाल में लोकतंत्र का समर्थक है और नेपाल में लोकतंत्र की स्थापना के लिये आन्दोलन भारत भूमि से चलाते रहे हैं। नेपाल की कम्युनिष्ट लॉबी नेपाल में भारत-विरोधी वातावरण बनाती रही है।

नेपाल में यथार्थवादी कम्युनिष्ट सरकार की स्थापना हुई है परन्तु इस सरकार की स्थापना एक तो पं. बंगाल की कम्युनिष्ट सरकार के सहयोग से हुई दूसरे नेपाल का साम्यवाद भी भारतीय साम्यवाद से प्रभावित है इसलिये भारत नेपाल सहयोग का भविष्य उज्जवल ही है।

दोनों देशों के बीच पारस्परिक सम्पर्कों को शीघ्रता से बहाल किये जाने की आवश्यकता को स्वीकार करते हुये कोलम्बो और तूतीकोरिन तथा तलायमन्नार और रामेश्वरम् के बीच नौका सेवा बहाल किये जाने पर भी सहमति व्यक्त की। दोनों देशों के शासनाध्यक्ष इस बात पर भी सहमत हुये कि वर्तमान वैश्विक चुनौतियों का मुकाबला करने के लिये बहुपक्षवाद को सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है। इस प्रक्रिया में संयुक्त राष्ट्र प्रणाली को प्रभावी बनाना भी शामिल है। इस सन्दर्भ में श्रीलंका ने अपने इस दृष्टिकोण को दोहराया कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् की भावी सुधार प्रक्रिया में परिषद् में स्थायी सदस्यता के भारत के दावे पर ध्यान दिया जाना चाहिये। इसके साथ ही श्रीलंका ने विस्तारित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता की भारत की उम्मीदवारी का समर्थन भी किया। श्रीलंका ने वर्ष 2011-12 कार्यकाल के लिये संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् की अस्थायी सदस्यता के लिये भी भारत की उम्मीदवारी का समर्थन किया।

नेपाल का झुकाव कभी भारत की ओर रहा तो कभी चीन के प्रति, 1955-56 के मध्य भारत और नेपाल के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे इसी बीच चीन भी नेपाल में सक्रिय होने लगा। 1956 को नेपाल और चीन के बीच मैत्री-सन्धि हुई। 1962 में जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया। इस भारत-चीन युद्ध में नेपाल ने तटस्थता की नीति अपनाई। लेकिन चीन के इस आक्रमण से नेपाल चौकन्ना अवश्य हो गया। 1964 में भारत के विदेश मंत्री स्वर्ण सिंह ने नेपाल की यात्रा की। इसमें भारत और नेपाल के मध्य एक समझौता हुआ, जिसके तहत सीमावर्ती कस्बे सुगोली और मध्यपूर्वी नेपाल में ओखरा घाटी के बीच 128 मील लम्बी सड़क के निर्माण के लिये 9 करोड़ रुपये भारत ने दिये नेपाल के विकास कार्यों में सबसे अधिक धन भारत का ही लगा हुआ है। नेपाल को भारत से सभी प्रकार का प्रशिक्षण, तकनीकि और गैर-तकनीकि सहायता मिलती है। भारत ने नेपाल को निम्नलिखित परियोजनाओं में सहायता दी-

(1) देवीघाट, त्रिशूल, करनाली, पंचेश्वर जलविद्युत् योजनायें।
(2) त्रिभुवन-गणपथ, काठमाण्डू-त्रिशूली मार्ग, त्रिभुवन हवाई अड्डा।
(3) काठमाण्डू-रक्सौल टेलीफोन संयन्त्र।
(4) चत्र नहर परियोजना, कोसी और गण्डक परियोजना।
(5) भू-वैज्ञानिक अनुसन्धान तथा खनिज खोजबीन का काम।
(6) वीरगंज और हितौदा रेल निर्माण।
(7) काठमाण्डू घाटी के एक उपनगर पाटन में एक औद्योगिक बस्ती की स्थापना।

1985 में नेपाल नरेश ने भारत की यात्रा की और दोनों देशों के बीच पारगमन सन्धि को मार्च, 1989 तक बढ़ा दिया गया। 1989 में भारत-नेपाल के बीच व्यापार तथा पारगमन सन्धि समाप्त हो जाने से दोनों देशों में कटुता का वातावरण बन गया। भारत और नेपाल के मध्य तनाव उत्पन्न होने का कारण केवल व्यापार व पारगमन सन्धि का अन्त होना ही नहीं, बल्कि राजनीतिक भी है। भारत को यह बात ठीक नहीं लगी कि नेपाल ने भारत की जानकारी के बिना चीन से हथियार खरीदे।

1991 में श्री जी.पी. कोइराला के नेपाल के प्रधानमंत्री बनने के बाद दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों में सुधार के प्रयत्न किये गये। अप्रैल, 1995 में नेपाल के प्रधानमंत्री मनमोहन अधिकारी की भारत यात्रा से दोनों देशों के सम्बन्धों में प्रगाढ़ता आई। 1996 में काठमाण्डू में वाणिज्य-स्तर की बातचीत के दौरान 5 वर्षों के लिये भारत-नेपाल व्यापार सन्धि हुई नेपाल में निर्मित वस्तुयें अब सीमा शुल्क से मुक्त और बिना किसी प्रतिबन्ध के भारतीय बाजार में आ सकती हैं। 1994-98 के वर्षों में नेपाल गम्भीर राजनीतिक अस्थायित्व से पीड़ित रहा, लेकिन भारत-नेपाल मैत्री रही और सितम्बर, 1996 में दोनों देशों के बीच 'महाकाली नदी सम्बन्धी समझौता' सम्पन्न हुआ, जनवरी, 1999 में भारत और नेपाल के बीच 'सात वर्ष' की पारगमन सन्धि सम्पन्न हुई। 2005 ई. में जब नेपाल नरेश द्वारा लोकतान्त्रिक सरकार की बर्खास्तगी कर दी गई, तब भारत ने इसकी आलोचना करते हुये नेपाल को दी जाने वाली समस्त सैन्य सहायता पर रोक लगा दी। 2006 में नेपाल में लोकतन्त्र की बहाली के साथ भारत-नेपाल सम्बन्धों में सुखद स्थिति बन गई। इस समय भी नेपाल के आर्थिक संकटों में पीड़ित होने पर भारत ने उसकी सहायता की। वर्ष 2008 में नेपाल में राजशाही को समाप्त कर संघीय लोकतान्त्रिक गणराज्य घोषित किया गया। माओवादी नई सरकार के नवनियुक्त प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहल 'प्रचण्ड' ने सितम्बर, 2008 में भारत की यात्रा की, जिससे दोनों देशों के बीच मैत्री सम्बन्ध बढ़े।

नेपाल में माओवादियों के सत्ता से दूर होने के बाद माधव कुमार नेपाल के प्रधानमंत्री बने। माधव कुमार ने 16 फरवरी, 2010 को भारत की यात्रा की, यह यात्रा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। दोनों देशों में रेलवे लिंक बढ़ाने, वायु सेवा को सम्वर्द्धित करने, नेपाल में पॉलिटेक्निक की स्थापना तथा एक सम्मेलन कक्ष की स्थापना के सम्बन्ध में चार समझौतों पर हस्ताक्षर किये। भारत ने नेपाल के खाद्य संकट के समाधान के लिये 50,000 टन गेहूँ, 20,000 टन चावल तथा 10,000 टन मटर देने का आश्वासन दिया। इसी तरह भारत ने नेपाल को 250 मिलियन डॉलर की क्रेडिट उपलब्ध कराने पर सहमति व्यक्त की। भारत नेपाल को निरन्तर आर्थिक सहायता देता रहा है तथा भारत कभी भी नेपाल की आन्तरिक राजनीति में हस्तक्षेप नहीं करना चाहता है। भारत-नेपाल मैत्री के लिये आवश्यक है कि नेपाल में राजनीतिक स्थायित्व हो तथा भारत विरोधी गतिविधियों पर रोक लगे।

प्रश्न-6. भारत-भूटान सम्बन्धों पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

भारत-भूटान सम्बन्धों में हाल ही के वर्षों में आये हुये परिवर्तनों पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।

अथवा

भारत-भूटान सम्बन्धों पर एक संक्षिप्त लेख (निबन्ध) लिखिये।

उत्तर- भूटान, भारत के उत्तर में पूर्वी हिमालय में स्थित एक छोटा-सा पहाड़ी राज्य है। इसका क्षेत्रफल 18,000 वर्गमील तथा जनसंख्या लगभग 8 लाख है। यहाँ अधिकतर भूटिया जाति के लोग रहते हैं। इसकी राजधानी किम्पू है। यहाँ के लोग बौद्ध धर्मावलम्बी हैं।

भारत की प्रतिरक्षा के लिये भूटान का बहुत महत्व है। भूटान से चीन की सीमायें चुम्बा घाटी से 80 किलोमीटर दूर हैं।

भारत–भूटान सम्बन्धों का इतिहास– भारत–भूटान सम्बन्धों का प्रारम्भ 1865 के **सिनचुला सन्धि** से हुआ है। यह सन्धि भूटान और ब्रिटिश सरकार के साथ हुई थी। इसके बाद 1910 में **पुनुरुवा सन्धि** हुई। इसके द्वारा भारत में ब्रिटिश सरकार ने भूटान के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने और भूटान ने विदेशी मामलों में भारत से निर्देशित होने की बात स्वीकार की थी।

भारत–भूटान सन्धि, 1949– भूटान सरकार ने भारत की स्वतंत्र सरकार से भी 1949 में एक सन्धि की जिसमें पुनरूवा सन्धि की कुछ धारायें इसमें समाहित हैं, तथा भारत–भूटान सम्बन्धों को शान्तिपूर्ण और पूर्ववत् बनाये रखने का प्रावधान है। इसमें यह भी व्यवस्था है, कि भारत–भूटान को 5 लाख वार्षिक सहायता देगा। भारत–चीन युद्ध के बाद भूटान ने रक्षा का भार भी भारत सरकार को सौंप दिया है।

नेहरू और इन्दिरा गाँधी युग में भारत–भूटान सम्बन्ध– इस काल में भारत–भूटान सम्बन्ध बहुत अच्छे रहे। भारत ने भूटान के विकास में रुचि ली, तथा उसे सहायता दी। उसने भूटान में 1000 मीटर लम्बी सड़क बनाई। अनेक भूटानी छात्रों ने भारत में शिक्षा ली। भारत ने भूटान में हवाई–पट्टियाँ बनाई जिन पर हेलीकॉप्टर उतर सकते हैं। भारत के सहयोग से ही राजधानी किम्पू का निर्माण हुआ। दूसरे महत्वपूर्ण नगर पारो का विकास भी भारत ने किया है। भारत ने भूटान में कई स्कूल और अस्पताल बनाये हैं।

भारत के सहयोग से ही भूटान 1970 में संयुक्त–राष्ट्र का सदस्य बना। 1973 में वह निर्गुट–आन्दोलन में शामिल हुआ। 1977 में भारत में भूटान के राजदूत का दर्जा बढ़ा दिया गया। बंगलादेश संकट में भूटान ने भारत का साथ दिया और तुरन्त बंगलादेश को मान्यता दे दी। 1971 में **कोलम्बो सम्मेलन** में भूटान ने भारत की पड़ौसी नीति की प्रशंसा की।

परन्तु 1975 में सिक्किम के भारत में विलय के बाद भूटान के मन में शंका उत्पन्न हो गई, और उसने सन्धि की व्याख्या की मांग शुरू कर दी है।

जनता शासन काल में भारत–भूटान सम्बन्ध– 1978 में भारत के विदेशमंत्री अटलबिहारी बाजपेयी भूटान गये। उन्होंने भूटान के मिशन को राजदूतावास मसलों पर उसे बंगलादेश से भी सम्बन्ध स्थापित करने की छूट मिली। 1978 में भूटान नरेश भी भारत आये। भारत ने इस काल में भूटान को पर्याप्त सहायता दी।

1981 के बाद भारत–भूटान सम्बन्ध– भारत के तत्कालीन विदेशमंत्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने भूटान की यात्रा की और भूटान की पांचवीं पंचवर्षीय योजना के लिये 139 करोड़ रुपये अनुदान दिया। 10 दिसम्बर, 1983 को दोनों देशों के बीच एक व्यापारिक समझौता हुआ। 1984 में भारत–भूटान के बीच दूरसंचार समझौता हुआ।

फरवरी 1985 में भूटान नरेश ने भारत यात्रा की तथा 29 सितम्बर को राजीव गाँधी ने भूटान की यात्रा की। 1985 में सार्क की स्थापना हुई। भूटान सार्क का एक बराबर का सदस्य है और भारत के साथ सार्क के माध्यम से पूर्ण सहयोग कर रहा है।

भारत–भूटान के बीच मतभेद के मुद्दे– भारत और भूटान के बीच 1949 की सन्धि की दूसरी धारा की व्याख्या को लेकर मतभेद है। भूटान का कहना है कि वह भारत की विदेश–नीति सम्बन्धी परामर्श को मानने के लिये तैयार नहीं है। वह कहता है कि इस धारा में संशोधन होना चाहिये। भारत का कहना है कि जब भूटान की रक्षा का उत्तरदायित्व भारत पर है तो विदेश–नीति के क्षेत्र में उसकी राय की अवहेलना कैसे की जा सकती है ?

1979–80 में ही महाराजा वांगचुक ने सन्धि की धारा 2 पर पुनर्विचार की बात कही थी। भारत–भूटान के बीच व्यापारिक मुद्दों पर भी मतभेद है। वास्तव में भूटान ने आयात–निर्यात 1972 के समझौते के अनुसार भारत के कानून लागू होते हैं। 1979 में अटल बिहारी बाजपेयी ने ऐसा आश्वासन दिया था, कि इस स्थिति में परिवर्तन होना चाहिये।

विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों पर भी भूटान ने भारतीय दृष्टिकोण से भिन्न नीति अपनाई है। **हवाना गुट–निरपेक्ष सम्मेलन (1979)** में जहाँ भारत बहु–संख्यक गुटनिरपेक्ष देशों के साथ कम्पूचिया की सीट खाली रखने के पक्ष में था, वहीं भूटान ने यह सीट कम्पूचिया की पोलपोट सरकार को देने की वकालत की। भारत जहाँ परमाणु अप्रसार सन्धि को पक्षपातपूर्ण मानता है, वहाँ भूटान इस सन्धि के पक्ष में है। जून 1981 में भूटान के विदेश मंत्री ने राष्ट्रीय असेम्बली में घोषणा की कि भूटान चीन से सीधी वार्ता करना चाहता है, ताकि भूटान–चीन सीमा को चिन्हित किया जा सके।

चीन की भूटान में घुसपैठ भारत के लिये चिन्ता की बात है, क्योंकि भूटान की सुरक्षा के साथ भारत की अपनी सुरक्षा की चिन्ता भी भारत को करनी है। भारत की चिंता का कारण भूटान में रह रहे 4000 तिब्बती हैं ये 1959 से वहाँ रह रहे हैं। भूटान संसद ने एक प्रस्ताव पारित कर इनसे नागरिकता ग्रहण करने या भूटान छोड़ने का आग्रह किया है। इस चेतावनी के पीछे चीन का हाथ है जो भारत के राष्ट्रीय हित और आदर्श के विपरीत है। यदि भूटान के तिब्बती शरणार्थी भूटान की नागरिकता ग्रहण कर लेते हैं तो तिब्बत का मामला ही समाप्त हो जाता है।

भारत–भूटान सम्बन्धों का विश्लेषण और भविष्य– भारत के उत्तर में भूटान एक छोटा सा पहाड़ी पड़ौसी देश है। इसे सदैव भारत से अपने विशाल आकार के कारण हड़पे जाने का खतरा बना रहता है। भारत की भूमिका भी उप–महाद्वीप में अभी तक बड़े भाई जैसी रही है। सिक्किम के भारत्र में विलय के बाद नेपाल और भूटान का संशकित होना स्वाभाविक है। भारत–भूटान सम्बन्धों में परस्पर विश्वास अत्यन्त आवश्यक है। आज की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का एक सर्वमान्य तथ्य है, कि विश्व में छोटे–छोटे राष्ट्रों का बड़े पड़ौसियों द्वारा हड़पा जाना संभव नहीं है। केवल इतना हो सकता है, कि बड़े राष्ट्र यह चाहें कि उनमें छोटे–छोटे पड़ौसियों में उनकी कठपुतली सरकारें रहें। भारत की नीति इस प्रकार की नहीं है। भूटान की राजशाही को भारत के लोकतंत्र होने से उसका प्रभाव भूटान पर पड़ने की आशंका अवश्य है। इसलिये भूटान भारत से सहायता लेने में भी सावधानी बरतने की नीति अपनाता है।

अब 1985 में **दक्षेस (सार्क)** संगठन की स्थापना हो चुकी है। यह बराबरी के आधार पर क्षेत्रीय सहयोग का अनोखा संगठन है। इसमें भूटान को यह विश्वास हो जाना चाहिये कि भारत अपने छोटे–छोटे पड़ौसियों को भी बराबरी का दर्जा व सम्मान देने के लिये तत्पर है।

भूटान–नरेश जिग्मेवांगचुक की भारत यात्रा– श्री नरसिम्हाराव के प्रधानमंत्रित्व–काल में भारत और भूटान के सम्बन्धों में निरन्तर उत्तरोत्तर प्रगति होती गई है। उदाहरणार्थ, सन् 1992 में जकार्ता में असंलग्न राष्ट्रों के सम्मेलन में कश्मीर प्रश्न पर भूटान द्वारा भारत का समर्थन करना। जनवरी 1993 में भूटान–नरेश **जिग्मेवांगचुक** की भारत यात्रा के समय भारत और भूटान के बीच संकोरा बहुउद्देश्यीय ऊर्जा परियोजना के बारे में हुआ समझौता तथा भूटान–नरेश तथा भारत के राष्ट्रपति **डॉ. शंकरदयाल शर्मा** के बीच हुई वार्ता में दोनों देशों के बीच सद्भावनापूर्ण सम्बन्धों के रुझान प्रकट करने से दोनों देशों के सम्बन्ध और सुदृढ़ हुये हैं।

प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव की भूटान यात्रा– भूटान-नरेश की यात्रा के प्रति उत्तर में भारतीय प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने भूटान की दो-दिवसीय यात्रा की। इस यात्रा के समय भारत के प्रधानमंत्री ने अपनी चीन यात्रा और उसमें भूटान-चीन सीमा वार्ता के बारे में वार्ता हुई। इस यात्रा से दोनों देशों के सम्बन्ध सुदृढ़ हुये हैं। भारत-भूटान भारत का घनिष्टतम मित्र है। उपरोक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भूटान और भारत सम्बन्धों का भविष्य उज्जवल है। नरसिम्हा राव के बाद की भारतीय सरकारों का भी यही रुख रहा है।

डॉ. मनमोहन सिंह की भूटान यात्रा (2008)– भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 16-17 मई 2008 को भूटान की यात्रा की जिसमें उन्होंने लोकतांत्रिक ढंग से चुनी गई संसद के प्रथम अधिवेशन को सम्बोधित किया। इस यात्रा के दौरान मनमोहन सिंह ने घोषणा की कि सन् 2020 तक भारत भूटान के पन-बिजली विकास की क्षमता को दुगुना करने के निमित्त हर संभव सहायता प्रदान करेगा ताकि भूटान भारत को 10 हजार मेगावाट बिजली का निर्यात कर सके। साथ ही भारत और भूटान के बीच रेल सम्पर्क में भी भारत हर संभव सहायता करेगा।

भारत–भूटान सम्बन्धों में चीन कारक– चीन और भूटान के बीच सीमा का विवाद बना हुआ है। चीन के द्वारा भूटान के 300 वर्ग किमी क्षेत्र पर अपना दावा किया जा रहा है। चीन और भूटान के बीच विवाद चुम्बी घाटी के क्षेत्र में है जो भारत के सिलीगुड़ी गलियारे से पाँच किमी की दूरी पर है। चुम्बी घाटी की सामरिक स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि चीन, तिब्बत, भूटान तथा भारत की सीमाएँ यहाँ मिलती हैं। यही क्षेत्र चीन और भूटान के बीच विवाद का मुद्दा बना हुआ है। यह भारत के लिए भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। चीन वर्तमान समय में भूटान में अपना दूतावास खोलने के लिए प्रयास कर रहा है तथा चुम्बी घाटी क्षेत्र में रेल लाइन बिछाने की योजना पर विचार कर रहा है।

नया व्यापार और पारगमन समझौता (2017)– भारत और भूटान के बीच नया व्यापार, वाणिज्य एवं पारगमन समझौता 12 नवम्बर, 2016 को सम्पन्न हुआ। यह 29 जुलाई, 2017 से प्रभावी हुआ है। इस समझौते से दोनों देशों के बीच व्यापार तथा पारगमन सम्बन्धी मामलों में सुदृढ़ता आयेगी। इस समझौते के बीच दोनों देशों के बीच स्वतंत्र व्यापार के साथ-साथ अन्य देशों को निर्यात किये जाने वाले भूटानी उत्पादों के भारत में निःशुल्क प्रवेश की व्यवस्था की गई है।

भूटान नरेश की भारत यात्रा (2017)– भूटान नरेश जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक की भारत यात्रा अक्टूबर-नवम्बर, 2017 में सम्पन्न हुई। भारतीय पक्ष की ओर से यह कहा गया कि भारत और भूटान की सुरक्षा चिंताएँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। डोकलाम क्षेत्र में हाल में ही उत्पन्न हुई स्थिति को सुलझाने में भूटान नरेश द्वारा व्यक्तिगत रूचि लिये जाने हेतु भारत के राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद ने उनके प्रति आभार प्रकट किया। यात्रा के दौरान दोनों पक्षों ने द्वि-पक्षीय सम्बन्धों की स्थिति पर संतोष व्यक्त किया तथा इन आदर्श सम्बन्धों को सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों में आगे ले जाने का संकल्प लिया।

अतः यह कहना उचित होगा कि दोनों देशों को आने वाले समय में सम्बन्धों की सुदृढ़ता के लिए अतीत के इतिहास को आधार बनाना चाहिए।

प्रश्न–7. भारत–मालदीव वर्तमान सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।

अथवा

मालदीव–भारत के सम्बन्धों पर विस्तृत लेख लिखिए।

अथवा

मालदीव–भारत के आर्थिक सम्बन्धों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– भारत–मालदीव सम्बन्ध– भारत और मालदीव के बीच लम्बे समय से मैत्रीपूर्ण और घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। जातीय, भाषायी, सांस्कृतिक, धार्मिक और वाणिज्यिक सम्बन्ध साझा हैं जो प्राचीन काल से चले आ रहे हैं। भारत 1965 में मालदीव की आजादी के बाद उसके साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने वाले पहले देशों में से एक था, जिसका माले में मिशन 1972 में स्थापित किया गया था। तब से दोनों देशों ने सभी स्तरों पर नियमित सम्पर्कों के माध्यम से अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों को सुदृढ़ किया है। मालदीव ने 2004 में नई दिल्ली में एक पूर्ण उच्चायोग की स्थापना की, जो उस समय केवल चार राजनयिक मिशनों में से एक था। दक्षिण-दक्षिण सहयोग और एकजुटता के सिद्धान्तों से प्रेरित होकर, भारत और मालदीव ने अपने पड़ोसियों के बीच सॉट पावर उत्तोलन विकसित करने पर ध्यान केन्द्रित करते हुए द्विपक्षीय रूप से सहयोग किया है। हिन्द महासागर में अपनी रणनीतिक स्थिति को देखते हुए मालदीव अपनी 'पड़ोसी पहले' नीति के हिस्से के रूप में भारत के लिए महत्वपूर्ण महत्व रखता है।

(A) राजनीतिक सहयोग– भारत और मालदीव के बीच सहयोग के राजनीतिक क्षेत्र में दोनों देशों के नेताओं की नियमित उच्च-स्तरीय यात्राएँ, संयुक्त राष्ट्र, राष्ट्रमंडल, एनएएम और सार्क जैसे बहुपक्षीय मंचों पर एक-दूसरे के लिए समर्थन और प्रवर्तन सहयोग सुरक्षा और कानून पर चर्चा शामिल है। भारत-प्रथम नीति के प्रति दोनों देशों ने अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की है और भारत ने मालदीव को विकासात्मक सहायता प्रदान की है। हालांकि, चीन द्वारा मालदीव के पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल्ला यामीन के साथ सम्बन्ध बढ़ाने के कारण मालदीव के साथ भारत के सम्बन्धों में गिरावट के बाद, 2018 में मालदीव के नए राष्ट्रपति के रूप में इब्राहिम मोहम्मद सोलिह के चुनाव के बाद स्थिति में सुधार हुआ। अगस्त 2022 में मालदीव के राष्ट्रपति की भारत यात्रा का उद्देश्य दोनों देशों के बीच भू-राजनीतिक, सुरक्षा और आर्थिक सम्बन्धों को बढ़ाना है (विशेष रूप से उनके आम पड़ोसी श्रीलंका द्वारा सामना की जाने वाली आर्थिक और राजनीतिक उथल-पुथल के संदर्भ में)।

(B) आर्थिक सहयोग– 1981 से भारत और मालदीव के बीच द्विपक्षीय व्यापार समझौता है, जो आवश्यक वस्तुओं के निर्यात की अनुमति देता है। भारत और मालदीव के बीच द्विपक्षीय व्यापार में निरन्तर वृद्धि हो रही है। कोविड महामारी सम्बन्धी चुनौतियों के बावजूद, 2021 में पहली बार व्यापार +300 मिलियन का आंकड़ा पार कर गया और पिछले वर्ष की तुलना में 31% की वृद्धि दर्ज की गई। भारत अब मालदीव का दूसरा सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है, जो 2018 में चौथे स्थान पर था। मालदीव को भारतीय निर्यात में विभिन्न प्रकार के उत्पाद शामिल हैं जैसे- कृषि और पोल्ट्री उत्पाद, चीनी, फल, सब्जियाँ, चावल, मसाले, गेहूँ का कपड़ा, आटा, दवाएँ और इंजीनियरिंग तथा औद्योगिक उत्पाद, रेत और समुच्चय, सीमेंट, आदि।

भारत ने पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस क्षेत्रों, विशेष तेल अन्वेषण के साथ-साथ पर्यटन और शिक्षा में मालदीव के साथ सहयोग करने में भी अपनी रूचि दिखाई है। बदले में, भारत मालदीव को चावल, गेहूँ का आटा, दाल, चीनी, आलू, प्याज और अंडे जैसे आवश्यक खाद्य पदार्थ, साथ ही रेत और पत्थर जैसी निर्माण सामग्री अनुकूल शर्तों पर प्रदान करता है।

(C) रक्षा और सुरक्षा सहयोग– भारत और मालदीव के बीच घनिष्ठ रक्षा और सुरक्षा सम्बन्ध हैं जिसमें संयुक्त युद्ध अभ्यास, समुद्री निगरानी और मालदीव को सैन्य उपकरणों की आपूर्ति जैसी अनेक गतिविधियाँ शामिल हैं। भारत और मालदीव 1991 से संयुक्त सैन्य प्रशिक्षण अभ्यास और तटरक्षक प्रशिक्षण अभ्यास आयोजित कर रहे हैं। हिन्द महासागर क्षेत्र

(IOR) में सुरक्षा बनाए रखने और कट्टरपंथ, आतंकवाद, मादक पदार्थों की तस्करी और आतंकवाद के वित्तपोषण जैसे आम खतरों का मुकाबला करने हेतु साझा रूप से प्रतिबद्ध हैं। भारत ने मालदीव के सुरक्षा बल को वाहन, नौसैनिक नावें और प्रशिक्षण प्रदान करने और मालदीव में पुलिस सुविधाओं के निर्माण में सहयोग करने का भी वायदा किया है। भारत ने मालदीव को क्वाड की प्रशांत–11 रणनीति को अपनाने के लिए भी प्रोत्साहित किया है, जिसमें भारत, जापान, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया शामिल हैं।

(D) विकासात्मक सहायता– भारत मालदीव को स्वास्थ्य, शिक्षा, परिवहन, अपशिष्ट प्रबंधन, प्राकृतिक आपदा प्रबंधन और कौशल तथा क्षमता निर्माण जैसे विभिन्न क्षेत्रों में विकास सहायता प्रदान कर रहा है। दोनों देशों ने 2011 में विकास के लिए सहयोग पर एक फ्रेमवर्क समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं। 2004 में सुनामी के बाद मालदीव को 100 मिलियन रुपयों की बजटीय सहायता प्रदान की है। भारत सरकार ने मालदीव की वित्तीय स्थिति को स्थिर करने के लिए उसे 100 मिलियन डॉलर की स्टैंडबाय क्रेडिट सुविधा प्रदान की है। 2020 में भारत ने मालदीव को वित्तीय सहायता भी दी है। US$150mn की मुद्रा विनिमय सुविधा और यह मालदीव के लिए सबसे बड़ा पर्यटक स्रोत बाजार है। भारत ने मालदीव में विभिन्न बुनियादी ढाँचा विकास परियोजनाएँ शुरू की हैं, जिसमें मालदीव राष्ट्रीय रक्षा बल के लिए एक समग्र प्रशिक्षण केन्द्र, आवास इकाइयाँ और एक सौर ऊर्जा परियोजना का निर्माण शामिल है। इस क्षेत्र में अन्य भारत–सहायता प्राप्त परियोजनाओं में जल और सीवरेज परियोजनाएँ, पुनर्ग्रहण परियोजनाएँ, बंदरगाह विकास, हवाई अड्डा पुनर्विकास आदि शामिल हैं।

ग्रेट मेल कनेक्टिविटी परियोजना– यह न केवल भारत द्वारा मालदीव में शुरू की गई सबसे बड़ी परियोजना है, बल्कि मालदीव में सबसे बड़ी बुनियादी ढाँचा परियोजना भी है।

कोविड–19 महामारी सहयोग– भारत ने 2020 में कोविड–19 संकट के दौरान मालदीव को वित्तीय, सामग्री और रसद सहायता प्रदान की, जिससे भारत–मालदीव के सम्बन्ध और मजबूत हुए। लॉकडाउन के बाद लॉजिस्टिक कठिनाइयों के बावजूद भारत ने मालदीव को आवश्यक खाद्यान्न और खाद्य पदार्थों की आपूर्ति भी की। भारत ने मालदीव को कोविड–19 महामारी में सहायता करने हेतु +250 मिलियन की वित्तीय सहायता प्रदान की। भारतीय वायु सेना ने मालदीव सरकार के अनुरोध पर 'ऑपरेशन संजीवनी' के तहत अप्रैल में मालदीव को 6.2 टन महत्वपूर्ण दवाएँ और चिकित्सा उपकरणों की आपूर्ति की।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–(1) 'ताशकन्द समझौता' पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

उत्तर– 1965 में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। परन्तु उसे करारी पराजय का सामना करना पड़ा। भारत की सेनायें लाहौर तक पहुंच गई थीं। परन्तु 18 सितम्बर, 1965 को संयुक्त–राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के प्रस्तावानुसार युद्ध विराम हो गया।

ताशकन्द समझौता– इस युद्ध विराम को स्थायी विराम में बदलने के लिये सोवियत–संघ के नेता कोसोजिन के प्रयासों से उनकी ही मध्यस्थता में भारत और पाकिस्तान के बीच उजबेकिस्तान की राजधानी ताशकन्द में एक वार्ता 4 जनवरी, 1966 से शुरू हुई और इसमें 10 जनवरी 1966 को एक समझौता हुआ जिसे ताशकन्द समझौता कहते हैं। इस समझौते में यह तय हुआ कि भारत और पाकिस्तान इस युद्ध में अपनी–अपनी जीती हुई भूमि एक दूसरे को वापिस कर देंगे और भविष्य में आपसी मामले आपसी बातचीत से तय करेंगे। भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की हृदय गति रुक जाने से 11 जनवरी, 1966

को ताशकन्द में ही मृत्यु हो गई। भारत ने इसके बाद 1970 तक ताशकन्द भावना का आदर किया परन्तु पाकिस्तान ने इसकी कई बार धज्जियां उड़ाईं। पाकिस्तान के अयूब खाँ की सैनिक तानाशाही बदल कर सत्ता सेनापति याहियां खां के हाथों में आ गई थी। इस काल में एक भारतीय विमान का अपहरण काण्ड हुआ, जिसके अपराधियों को पाकिस्तान में शरण दी गई और विमान को लाहौर में जला दिया गया। इसके बाद भारत ने पाकिस्तान की भारत पर से गुजरने वाली उड़ानें बन्द कर दीं।

प्रश्न–(2) भारत और मालदीव के बीच सम्पन्न विभिन्न महत्वपूर्ण समझौता ज्ञापनों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर–

(1) नवम्बर 2020 में भारत–मालदीव नेचार समझौता ज्ञापन (MOU) पर हस्ताक्षर किए हैं। दोनों देशों के बीच हस्ताक्षरित तीन समझौता ज्ञापन हैं–

(i) उच्च प्रभाव वाली सामुदायिक विकास परियोजनाओं के लिए दो समझौता ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किए गए।

(ii) मालदीव–भारत के बीच खेल और युवा मामलों के सहयोग पर एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए।

(iii) जीएमसीपी के लिए भारत के 500 मिलियन यूएसडी पैकेज के एक भाग के रूप में 100 मिलियन यूएसडी अनुदान के लिए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए हैं।

(2) हाइड्रोग्राफी के क्षेत्र में सहयोग पर समझौता ज्ञापन।

(2) स्वास्थ्य के क्षेत्र में सहयोग पर समझौता ज्ञापन।

(3) सीमा शुल्क क्षमता निर्माण में सहयोग के लिए समझौता ज्ञापन।

(4) समुद्र मार्ग के यात्री सह कार्गो सेवा की स्थापना पर ज्ञापन।

(5) भारतीय नौसेना और एमएनडीएफ के बीच व्हाइट शिपिंग सूचना के आदान–प्रदान पर तकनीकी समझौता हेतु ज्ञापन।

(6) मालदीव सिविल सेवा आयोग और भारत के राष्ट्रीय सुशासन केन्द्र (एनसीजीजी) के बीच समझौता ज्ञापन।

भारत और मालदीव के बीच सम्बन्ध इंडो–फैसिफिक (हिन्द–प्रशांत) की स्थिरता और इसकी समुद्री सुरक्षा के लिए आवश्यक है। सरकार की 'पड़ोसी प्रथम' रणनीति के हिस्से के रूप में, भारत सुरक्षित, समृद्ध और शांतिपूर्ण मालदीव विकास के लिए एक समर्पित भागीदार बना हुआ है। मालदीव को भी सम्बन्धों में रणनीतिक स्तर पर सहजता बनाए रखने हेतु अपनी 'इंडिया फर्स्ट' नीति जारी रखनी चाहिए।

❑❑❑

❑ कृपया ध्यान दें : नई शिक्षा नीति स्नातक तृतीय वर्ष में लागू की गई है। परीक्षा के नये पैटर्न में वस्तुनिष्ठ प्रश्न, लघुउत्तरीय प्रश्न तथा दीर्घउत्तरीय प्रश्न पूछे जायेंगे। कुछ लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर इस पुस्तक में दिये गये हैं। दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर में ही लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर निहित हैं। इस हेतु आप लघुउत्तरीय प्रश्न में जितना पूछा जावे, दीर्घउत्तरीय प्रश्न के उत्तर का उतना ही भाग लिखें।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर

इकाई-1

(1) भारतीय विदेश नीति का निर्माता किसे कहा जाता है?
(अ) महात्मा गाँधी (ब) सुभाषचन्द्र बोस
(स) सरदार वल्लभभाई पटेल (द) पं. जवाहर लाल नेहरू।
उत्तर– (द) पं. जवाहर लाल नेहरू।

(2) निम्नलिखित में से क्या भारत की विदेश नीति का प्रमुख निर्धारक तत्व नहीं है?
(अ) घरेलू वातावरण (ब) निर्णगकर्ताओं का व्यक्तित्व
(स) अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण (द) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर– (द) इनमें से कोई नहीं।

(3) निम्नांकित में से कौन–सी भारतीय विदेश नीति की समस्या नहीं है?
(अ) पड़ौसियों से चुनौती (ब) आतंकवाद की चुनौती
(स) प्रवासी भारतीयों की सुरक्षा (द) बढ़ती जनसंख्या।
उत्तर– (द) बढ़ती जनसंख्या।

(4) भारतीय विदेश नीति में आजकल निम्नांकित में से किस पर जोर दिया जाता है?
(अ) पंचशील (ब) पूर्वोन्मुखता
(स) आर्थिक राजनय (द) शिखर राजनय।
उत्तर– (ब) पूर्वोन्मुखता।

(5) निम्नलिखित में से क्या भारतीय विदेश नीति की विशेषता नहीं है?
(अ) गुटनिरपेक्षता पर आधारित (ब) पंचशील पर आधारित
(स) साम्राज्यवाद का समर्थन (द) संयुक्त राष्ट्र में आस्था।
उत्तर– (स) साम्राज्यवाद का समर्थन।

(6) भारत की विदेश नीति में 'पड़ोसी पहले' की नीति किसके द्वारा शुरू की गई?
(अ) नरेन्द्र मोदी (ब) डॉ. मनमोहन सिंह
(स) इन्द्र कुमार गुजराल (द) जवाहरलाल नेहरू।
उत्तर– (अ) नरेन्द्र मोदी।

(7) किशनगंगा परियोजना को लेकर भारत का विवाद किस पड़ोसी देश से है?
(अ) पाकिस्तान (ब) बांग्लादेश
(स) चीन (द) नेपाल।
उत्तर– (अ) पाकिस्तान।

(8) अभी हाल ही में किस देश के राष्ट्रपति ने कहा है कि भारत हमारा सच्चा मित्र है?
(अ) चीन (ब) रूस
(स) अफगानिस्तान (द) अमेरिका।
उत्तर– (द) अमेरिका।

(9) भारत और चीन के मध्य पंचशील समझौते पर कब हस्ताक्षर किये गये?
(अ) सन् 1952 (ब) सन् 1953
(स) सन् 1954 (द) सन् 1955
उत्तर– (स) सन् 1954

इकाई-2

(1) कौन–सा देश NAM का संस्थापक सदस्य नहीं है?
(अ) इंडोनेशिया (ब) यूगोस्लाविया
(स) पाकिस्तान। (द) मिस्र।
उत्तर– (स) पाकिस्तान।

(2) 2008 में मुंबई के ताज होटल में आतंकवादी हमले के खिलाफ राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड द्वारा चलाए गए ऑपरेशन को क्या नाम दिया गया था?
(अ) ऑपरेशन विजय (ब) ऑपरेशन ब्लैक थंडर
(स) ऑपरेशन ब्लैक टॉरनेडो (द) ऑपरेशन सफेद सागर।
उत्तर– (स) ऑपरेशन ब्लैक टॉरनेडो।

(3) भारतीय सेना की स्थापना किस वर्ष हुई थी?
(अ) 1895 में (ब) 1900 में
(स) 1905 में (द) 1947 में।
उत्तर– (अ) 1895 में।

(4) शीत युद्ध की समाप्ति का प्रतीक है–
(अ) सोवियत संघ (ब) संयुक्त राष्ट्र
(स) द्विध्रुवीय प्रणाली (द) बहुध्रुवीय व्यवस्था।
उत्तर– (स) द्विध्रुवीय प्रणाली।

(5) चीनी सरकार ने बेल्ट एंड रोड पहल को कब शुरू किया?
(अ) 1991 में (ब) 2011 में
(स) 2012 में (द) 2013 में।
उत्तर– (द) 2013 में।

(6) सिल्क रोड इकोनॉमिक बेल्ट के हिस्से के रूप में चीन ने कितने बेल्ट को मंजूरी दी है?
(अ) 1 (ब) 2
(स) 3 (द) 4
उत्तर– (स) 3

(7) चीनी संविधान में बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव को कब अपनाया गया था?
(अ) 2015 में (ब) 2016 में
(स) 2017 में (द) 2018 में।
उत्तर– (स) 2017 में।

(8) 'एक सभी के लिए और सभी एक के लिए' किसने कहा है?
(अ) लॉस्की (ब) मोर्गेन्थाऊ
(स) लासवेल। (द) पारमेर।
उत्तर– (अ) मोर्गेन्थाऊ।

(9) चीन की बेल्ट एंड रोड कहाँ से गुजरेगी?
(अ) मास्को (ब) जिबूटी
(स) रॉटर डैम (द) उपरोक्त सभी में।
उत्तर– (द) उपरोक्त सभी में।

इकाई-3

(1) ब्रिक्स का 18वाँ शिखर सम्मेलन कहाँ आयोजित हुआ?
(अ) जोहान्सबर्ग में (ब) गोवा में
(स) ऊफा में (द) डरबन में।
उत्तर– (अ) जोहान्सबर्ग में।

(2) ब्रिक्स का मुख्यालय कहाँ स्थित है?
(अ) नई दिल्ली में (ब) शंघाई में
(स) ब्रासीलिया में (द) डरबन में।
उत्तर– (ब) शंघाई में।

(3) 'दृष्टिकोण 2000' घोषणा–पत्र किससे सम्बन्धित है?
(अ) भारत–अमरीका (ब) भारत–चीन
(स) भारत–रूस (द) भारत–नेपाल।
उत्तर– (अ) भारत–अमरीका।

(4) भारत की यात्रा करने वाले रूस के पहले राष्ट्रपति थे–
(अ) व्लादिमिर पुतिन (ब) बोरिस येल्तसिन
(स) मिखाइल फ्रादकोव (द) मिखाइल गोर्बाच्योव।
उत्तर– (ब) बोरिस येल्तसिन।

(5) रूस ..... अस्तित्व में आया।
(अ) सन् 1990 में (ब) सन् 1991 में
(स) 1992 में (द) सन् 1993 में।
उत्तर– (ब) सन् 1991 में।

(6) चीन और भारत की विभाजक सीमा–रेखा को ..... कहा जाता है।
(अ) डूरण्ड रेखा (ब) मैकमोहन रेखा
(स) रेडक्लिफ रेखा (द) इनमें से कोई नहीं।
उत्तर– (ब) मैकमोहन रेखा।

(7) अमेरिका के कौनसे राष्ट्रपति ने 26 जनवरी 2015 को भारतीय गणतंत्र दिवस पर मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया?
(अ) वराक ओबामा (ब) जॉर्ज बुश
(स) बिल क्लिंटन (द) इसमें से कोई नहीं।
उत्तर– (अ) वराक ओबामा।

(8) अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने भारत की यात्रा कब की थी?
(अ) नवम्बर, 2018 में (ब) मार्च, 2019 में
(स) फरवरी, 2019 में (द) फरवरी, 2020 में।
उत्तर– (द) फरवरी, 2020 में।

(9) भारत–रूस की 19वीं वार्षिक शिखर वार्ता कब और कहाँ हुई?
(अ) मई, 2016 गोवा (भारत) (ब) जून, 2017 सेंट पीटर्सबर्ग (रूस)
(स) अक्टूबर, 2018 नई दिल्ली (द) सितम्बर, 2022
उत्तर– (स) अक्टूबर, 2018 नई दिल्ली।

(10) 'डोकलाम समझौता' कब हुआ?
(अ) 20 अगस्त, 2017 (ब) 28 अगस्त, 2017
(स) 20 अक्टूबर, 2017 (द) 28 अगस्त, 2018

उत्तर– (ब) 28 अगस्त, 2017

(11) भारत और चीन सीमा के बीच की रेखा का क्या नाम है?
(अ) डूरंड रेखा (ब) रेडक्लिफ रेखा
(स) मूक रेखा (द) मैकमोहन रेखा।
उत्तर– (द) मैकमोहन रेखा।

(12) निम्नलिखित में से किस देश की भारत के साथ समुद्री सीमा नहीं है?
(अ) म्यांमार (ब) चीन
(स) बांग्लादेश (द) पाकिस्तान।
उत्तर– (ब) चीन।

इकाई-4

(1) निःशस्त्रीकरण आयोग की स्थापना कब की गई?
(अ) 1950 ई. में (ब) 1951 ई. में
(स) 1952 ई. में (द) 1953 ई. में।
उत्तर– (स) 1952 ई. में।

(2) निम्नांकित में से किस राष्ट्र ने परमाणु–अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर करने से इंकार किया?
(अ) ब्राजील (ब) चीन
(स) भारत (द) पाकिस्तान।
उत्तर– (स) भारत।

(3) पर्यावरणवाद से सम्बन्धित राजनीति को कहा जाता है–
(अ) पर्यावरण प्रदूषण की राजनीति (ब) हरित राजनीति
(स) पर्यावरणवादी राजनीति (द) विश्व राजनीति।
उत्तर– (ब) हरित राजनीति।

(4) रियो पृथ्वी सम्मेलन किस देश में हुआ था?
(अ) यू.एस.ए. (ब) ब्रिटेन
(स) फ्रांस (द) ब्राजील।
उत्तर– (द) ब्राजील।

(5) वर्ल्ड ट्रेड सेंटर एवं पेंटागन को किस सन्दर्भ में याद किया जाता है?
(अ) शांति एवं अहिंसा (ब) जलवायु परिवर्तन
(स) मुक्त व्यापार (द) आतंकवाद।
उत्तर– (द) आतंकवाद।

(6) भारत में आतंकवाद का प्रश्रय देने वाला देश था–
(अ) म्यांमार (ब) चीन
(स) अफगानिस्तान (द) पाकिस्तान।
उत्तर– (द) पाकिस्तान।

(7) भारत ने पहला आणविक विस्फोट पोखरण में किस वर्ष में किया?
(अ) 1951 में (ब) 1971 में
(स) 1974 में (द) 1998 में।
उत्तर– (स) 1974 में।

(8) निम्नांकित में से किस संधि पर हस्ताक्षर न करने के लिये भारत को कड़ी आलोचना का सामना करना पड़ा?

(अ) क्योटो संधि (ब) स्टार्ट संधि
(स) परमाणु अप्रसार संधि (द) अण्टार्कटिका संधि।
उत्तर– (स) परमाणु अप्रसार संधि।

इकाई-5

(1) 'तीन बीघा' समझौता ..... सम्पन्न हुआ था।
(अ) भारत और नेपाल के मध्य (ब) भारत और बंगलादेश के मध्य
(स) भारत और अफगानिस्तान के मध्य (द) भारत और भूटान के मध्य।
उत्तर– (ब) भारत और बंगलादेश के मध्य।

(2) ..... देश में भारत द्वारा 'शान्ति सेना' भेजी गयी थी।
(अ) नेपाल (ब) श्रीलंका
(स) बंगलादेश (द) भूटान।
उत्तर– (ब) श्रीलंका।

(3) लाहौर घोषणा का सम्बन्ध किससे है?
(अ) राजीव–बेनजीर (ब) गुजराल–नवाज शरीफ
(स) वाजपेयी–नवाज शरीफ (द) देवगौड़ा–नवाज शरीफ।
उत्तर– (स) बाजपेयी–नवाज शरीफ।

(4) शिमला समझौते का सम्बन्ध है–
(अ) भारत–चीन (ब) भारत–पाकिस्तान
(स) भारत–नेपाल (द) भारत–श्रीलंका।
उत्तर– (ब) भारत–पाकिस्तान।

(5) निम्नांकित में से किस देश में भारतीय शांति सेना भेजी गई थी?
(अ) श्रीलंका (ब) मालदीव
(स) नेपाल (द) बंगलादेश।
उत्तर– (अ) श्रीलंका।

(6) भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने कब श्रीलंका की यात्रा ..... में की थी।
(अ) सन् 2015 (ब) सन् 2017
(स) सन् 2015 एवं 2017 (द) सन् 2018
उत्तर– (ब) सन् 2017

(7) अफगानिस्तान की सीमाएँ निम्नांकित किस देश की सीमा के साथ नहीं मिली हैं?
(अ) ईरान (ब) पाकिस्तान
(स) म्यांमार (द) चीन।
उत्तर– (स) म्यांमार।

(8) पाकिस्तान और अफगानिस्तान की विभाजक सीमा–रेखा को ..... कहा जाता है।
(अ) डूरंड रेखा (ब) मैक्मोहन रेखा
(स) रेडक्लिक रेखा (द) इसमें से कोई नहीं।
उत्तर– (अ) डूरंड रेखा।

(9) भारत और श्रीलंका के बीच निम्न विवादों में कौन सा था?
(अ) मूर विवाद (ब) नदी जल विवाद
(स) कच्चा तीवू विवाद (द) शरणार्थी समस्या
उत्तर– (स) कच्चा तीवू विवाद

❑❑❑